आदर्श कविता कुञ्ज रहस्य

साखी

-0-0-0-0-

शब्दार्थ

पृष्ठ ५.

अछै पुरुष—अक्षय पुरुष (परब्रह्म)। निरंजन—कबीर के सिद्धांतानुसार सृष्टिरचना में अवरोह क्रम से उत्पन्न हुआ स्वरूप। तिरदेवा—त्रिदेव, ह्मा, विष्णु, महेश। साहेब—स्वामी, प्रभु। पुहुप—पुष्प। बास—सुगन्धि। तरा—पतला। अनूप—अनुपम। देही आत्मा। विदेह—निराकार-रमात्मा। सुरति—स्मरण। चार भुजा—विष्णु का चतुर्भुज (चार भुजाओं ला अर्थात् साकार) स्वरूप।

पृष्ठ ६.

गरुआ—भारी या गुरु। गहिरगंभीर—गहरा, गंभीर। गहे—ग्रहण ले। लाली—प्रकाश। सूप—छाज। घट—हृदय। मधुप—भ्रमर। ने—पहचानना। भेस—बाहरी वेश-भगवें कपड़े आदि। भुजंग—सांप। गान—पोलो या खेल का मैदान।

पृष्ठ ७.

मैं—अहंभाव, अहंकार। गुरु—ज्ञान। सांकरी—तंग। जन—योजन, चार कोस। यहतत्व—आत्मा। वहतत्व—परमात्मा। ायन—वह औषधि, जिसके द्वारा सोना बनता है। हरिजन—प्रभु-भक्त। —सुमेरु, माला का सब से ऊपर का दाना।

पृष्ठ ८-९.

उदर—पेट। पतियाय—विश्वास करें। बाहिरि—बिना। बूझ—ज्ञान।

भौजल—संसार रूपी सागर । रीस—क्रोध । गहता—ग्रहण करने, आचरण करने वाला । रसना—जिह्वा । श्रुति—कान । द्रग—आंख । मरजीवा—वह गोता खोर, जो समुद्र में डुबकी लगा कर मोती निकालता है ।

पृष्ठ—१०—११

गगन—शून्य, ब्रह्मरन्ध्र । दमामा बाजिया—अनहदध्वनि हुई । बोरी-डुबोई । सिकलीगर—धातुओं के शस्त्रोंका जंग छुडा कर उन्हें तेज करने वाल अर्थात् स्वच्छ निर्मल करने वाला । दर्पन—शीशा । सिष— शिष्य परबोधा—समझाया । लखचौरासी—चौरासी लाख योनियां । सागर—समुद्र वारि—जल । लद्दे झुण्ड । पखापखीकारणें—अपने २ सिद्धान्तों प्रचार करने के कारण ।

पृष्ठ १२—१३

रूखड़ा—वृक्ष । घाले—चाले । पसुआ—पशु के समान मूर्ख । बुढ़ापा । खंखर—सूखा, खोखला । पलास - ढाक । दव जंगल की आग

पृष्ठ १४—१५

रवि—सूर्य । रजनी—रात्रि । चीन्हे—पहचाने । चेरी—दासी । साक शक्ति को मानने वाला । भुजंग—सांप । बहुरी—फिर । दुतिया—दूज ।

साखी

सरलार्थ

अछे पुरुष एक अक्षय पुरुष परब्रह्म रूपी वृक्ष है और नि उसका तना है । ब्रह्मा, विष्णु, महेश ये तीनों देवता उसकी शाखाएं हैं संसार उसके पत्ते हैं ।

साहब मेरा—मेरा स्वामी वह परमेश्वर एक ही है, दूसरा और भी मेरा स्वामी नहीं हो सकता । यदि ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी को मैं अपना स्वामी मान लूं, तो वह मेरा प्रभु मुझ से क्रुद्ध हो जायेगा ।

जाके मुंह—वह परम तत्व परमेश्वर ऐसा अलौकिक है कि न तो उसके मुख मस्तकादि अंग ही हैं और न कोई स्वरूप ही । वह पुष्प की सुगन्धि से भी पतला है, अर्थात् वह निर्गुण निराकार और सर्व-व्यापक है ।

देही माहिं—वह निराकार (विदेह) प्रभु शरीर (देही) में ही रमता है और वह केवल स्मरण या भक्ति-स्वरूप ही है। वह निरंकार प्रभु संपूर्ण ब्रह्मांड में व्याप्त हो रहा है।

चार भुजा के—ये सब लोग भगवान् के चतुर्भुजधारी विष्णु अर्थात् साकार स्वरूप की उपासना में लग कर भटक रहे हैं। वास्तव में तो उस अनन्त भुजाओं वाले निर्गुण, निराकार परब्रह्म का स्मरण ही सच्चा स्मरण है।

जनम मरण—वह मेरा स्वामी जन्म मृत्यु से रहित अर्थात् अनादि और अनन्त है। जिस प्रभु ने संपूर्ण चराचर मात्र को उत्पन्न किया है, मैं उसकी बलिहारी हूं।

एक कहौं तो—यदि यह कहा जाय कि वह प्रभु एक ही हैं, तब भी सत्य नहीं है, (क्योंकि वह प्रभु अनन्त रूप धारण कर विश्व-लीला रचता रहता है। इस अवस्था में) उसे एक न कह कर दो कहा जाय, तो भी बड़ा दोष है (क्योंकि प्रभु तो एक के अतिरिक्त दूसरा हो नहीं सकता)। अतः कबीर विचार कर कहते हैं कि वह जैसा है वैसा ही है, अर्थात् उसका पूरा-पूरा वर्णन करना असंभव ही है।

साहेब सों—मनुष्य स्वयं कुछ नहीं करता। करता-धरता तो वह प्रभु ही है। वह प्रभु चाहे तो राई जैसी तुच्छ वस्तु को भी पर्वत के समान विशाल और पर्वत के समान बड़ी वस्तु को भी राई सरीखा तुच्छ बना सकता है।

साहेब सा—उस प्रभु के समान कोई भी गुरुतर, अत्यन्त गभीर और समर्थ नहीं है। यदि भक्त अवगुणों को त्याग कर, गुणों को ग्रहण करले, तो वह प्रभु उसे क्षण भर में ही पार उतार सकता है।

जोकुछ किया—हे प्रभु ! मैं तो कुछ नहीं कर सकता। कर्ता-धर्ता तो तुम ही हो। जो कुछ कार्य मेरे हाथों किया हुआ दिखाई भी दे रहा है, वह भी तो अन्दर बैठी तुम्हारी शक्ति से ही हुआ है।

जाको राखे—प्रभु जिसका रक्षक हो, उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। चाहे सारा संसार ही उसका शत्रु क्यों न हो जाय, उसका बाल भी बांका नहीं हो सकता।

जंत्र मंत्र—ये जंत्र, मंत्र जादू टोने इत्यादि सब व्यर्थ हैं। कोई भी इनके बहकावे में न आवे, क्योंकि जब तक तत्व-ज्ञान प्राप्त न होगा, तब तक ये मूर्ख कौए ज्ञानी हंस नहीं बन सकते।

ज्ञान-दीप—अपने हृदय रूपी मंदिर में, ज्ञान के दीपक को जला कर प्रकाश कर लो और तब सहज समाधि में स्थिर होकर उस परब्रह्म के (सत्य स्वरूप के) नाम का स्मरण करो।

लाली मेरे—उस मेरे प्रियतम परमात्मा का प्रकाश सर्वत्र व्याप्त हो है। अतः जहां भी कहीं दृष्टि जाती है, सब वस्तुएं उसी के प्रकाश के रंग में रँ हुई दिखाई दे रही हैं। मैंने जो उसके प्रकाश को प्राप्त करने का प्रयत्न किय तो मैं भी उसी का स्वरूप हो गई, अर्थात् ब्रह्म ही सर्वत्र व्याप्त हो रहा उसके अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु की सत्ता नहीं है। माया के नष्ट होने ज्ञान के द्वारा जो भक्त उसके सत्य स्वरूप को पहचान लेता है, वह भी उस का स्वरूप हो जाता है। यही स्थिति "अहं ब्रह्मास्मि" की है। इसलिये इस कविता में अद्वैतवाद या रहस्यवाद की सुन्दर अवतारणा हुई है।

साधू ऐसा—सज्जन का स्वभाव तो सूप (छाज) के समान होना चाहिये। जिस प्रकार छाज हलकी वस्तुओं को उड़ाकर, सारभूत भारी पदार्थों को अपने में रख लेता है, उसी प्रकार सज्जन को भी चाहिये कि वह भी संसार के दोषों का त्याग कर गुणों को ग्रहण करले।

औगुन को—सज्जन पुरुष को चाहिये कि वह अवगुण को तो कभी भी ग्रहण न करे और गुणों को ग्रहण कर ले। प्रत्येक हृदय रूपी पुष्प में [illegible] मकरंद रूप प्रभु को भ्रमर की भांति वह पहचान ले और अपनाले।

भक्ति भेस—बाहरी दिखावे अर्थात् कन्ठी, माला, तिलक, भगवें वस्त्र आदि तथा वास्तविक भक्ति में पृथ्वी और आकाश का अन्तर है। सच्चा तो प्रभु चरण में लीन रहता है किन्तु ये भगवें वस्त्र वाले दिखावटी संसार के पीछे पीछे दौड़ते हैं।

देखा देखी—दूसरे का अनुकरण करने मात्र से तो वास्तविक भक्ति नहीं हो सकती। किसी विपत्ति के आते ही ऐसी नकली भक्ति उसी प्रकार ह जाती है, जैसे सांप पर से केंचुली।

भक्ति गेंद—भक्ति चौगान (खेल के मैदान) की गेंद है। इसे चा जो प्राप्त कर सकता है। इसे पाने के लिए किसी भेद-भाव को नहीं समझ जाता, चाहे कोई धनी हो या निर्धन, सभी प्राप्त कर सकते हैं।

पृष्ठ.

जब मैं था—जब तक मैं अर्थात् अहंकार था, तब तक गुरु (ज्ञान) प्राप्त नहीं हुआ था। अब गुरु (ज्ञान) प्राप्त हो गया है, तो अहंकार नष्ट हो गया है। यह प्रभु-प्रेम का पथ अत्यन्त ही संकरा है, इसमें अहंकार और ज्ञान दोनों साथ २ नहीं प्रवेश कर सकते।

उठा बगूला—प्रेम के बवूले के उठने पर तिनका भी उड़ कर आकाश में पहुँच जाता है। इस प्रकार एक तिनका दूसरे तिनके के पास पहुँच कर मिल जाता है। भाव यह है कि जब सच्चा प्रेम का प्रवाह उमड़ता है, तो यह आत्मा उस प्रियतम से जा मिलती है।

सौ जोजन—यदि हृदय में सच्चा प्रेम है, तो प्रियतम सैकड़ों कोस दूर क्यों न बैठा हो, वह सदा हृदय ही में है। और, यदि प्रेम सच्चा नहीं, तो कपटी प्रेमी के अपने आंगन में ही रहने पर भी, वह सात समुद्र पार के समान दूर है।

यह तत—यह तत्व अर्थात् आत्मा और वह तत्व परमात्मा वास्तव में एक ही है। इस शरीर के कारण भेद प्रतीत हो रहा है। इसलिये हे प्रियतम! मेरे हृदय की बात अपने हृदय से ही जान लीजिये।

हम तुम्हरे—हे प्रियतम! मैं तो निरंतर तुम्हारा स्मरण करता रहता हूं, किन्तु तुम मेरी ओर ध्यान ही नहीं देते। मन के प्रेम का ही नाम तो स्मरण है। वह मन तो तुम में ही लीन हो गया है।

सवै रसायन—मैंने सब रसायनें (वह औषधि जिससे सोना बनता है) लीं, किन्तु प्रभु-प्रेम के समान एक भी रसायन न मिली। क्योंकि यह ज्यों ही एक रत्ती मात्र भी शरीर में प्रविष्ट हो जाती है, कि सारा शरीर स्वर्णमय हो जाता है।

मिलना जग में—संसार में सज्जन या प्रियतम से मिलना अत्यन्त कठिन है। एक बार मिलन के पश्चात् किसी का भी बिछुड़न न हो, क्योंकि एक बार बिछुड़ जाने पर बड़े भाग्य वाले का ही दुबारा मिलन हो सकता है।

जब लगि—जब तक मनुष्य मरने से डरता है, वह तब तक सच्चा प्रेमी नहीं है। उस दशा में प्रेम का घर बहुत ही दूर है, इस बात को भली प्रकार समझ लो। (इस मार्ग पर चलने वाले को मृत्यु की परवाह नहीं करनी चाहिए।

हरि से तुम—हे साधु! तू भगवान् से नहीं, प्रत्युत भगवान् के भक्त से प्रेम कर, क्योंकि भगवान् तो प्रसन्न होकर धन-सम्पत्ति ही देंगे, किन्तु भक्त तो भगवान् ही को देता है।

कबिरा माला—कबीर दास कहते हैं कि इस लकड़ी की माला को बड़े प्रयत्न से तू क्यों फेरता है? अरे, श्वासोच्छ्वास के साथ प्रभु का नाम रटे जा। यही सर्वोत्तम माला है। क्योंकि, न तो इसमें गांठ है और न सुमेरु (माला में सबसे ऊपर का दाना) ही है।

कबिरा क्या—कबीर कहते हैं कि मैं अपने लिये चिन्ता क्यों करूं? मेरे चिन्ता करने से बन भी तो कुछ नहीं सकता। मेरे लिए तो स्वयं भगवान् चिन्ता करते हैं। इसलिए मुझे अपने लिए किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है।

साधू गांठि—सच्चे साधु कुछ भी गांठ नहीं बांधते, अर्थात् किसी वस्तु का संग्रह नहीं करते। वे केवल तात्कालिक शरीर-निर्वाह के हेतु आवश्यक वस्तु का ग्रहण करते हैं। क्योंकि, उन्हें विश्वास होता है कि प्रभु तो सर्वदा उनके आगे-पीछे खड़े हैं, जब जिस वस्तु की आवश्यकता होगी, वे तत्काल दे देंगे।

साईं इतना—हे प्रभु! मुझे अधिक नहीं चाहिये, मुझे तो केवल इतनी सी सामग्री दीजिये, जिससे मेरे परिवार का पालन-पोषण हो जाय और मेरे लिए भी भोजन का अभाव न रहे, तथा घर आए अतिथि को भी संतुष्ट कर सकूं।

गाया जिन—जो लोग केवल प्रभु का नाम ही रटते फिरते हैं और उसका तत्व-ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करते, वे उसे कभी नहीं पा सकते। और, जो मनुष्य अभिमान में चूर होकर, भगवान् का नाम लेते ही नहीं, वह उनसे तो दूर रहेगा ही। किन्तु जो मनुष्य विश्वास पूर्वक प्रभु के सत्य स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर, उसकी उपासना करते हैं, वह सदा उनके पास ही रहता है।

विरह बाण—जिसको अपने प्रियतम के वियोग का बाण लग गया है, कोई भी औषधि उसका उपचार नहीं कर सकती। वह विरही तड़प २ कर कराह २ कर, मर २ कर जी उठता है (न तो वह मृत्यु की शान्ति ही प्राप्त कर सकता है और न जीवन का सुख ही पाता है)।

मेरा मुझ में—हे प्रभु! मेरे पास ऐसी कोई भी तो वस्तु नहीं, जिसे मैं अपनी कह सकूं। सब कुछ तो तेरा ही है। फिर तेरी वस्तु तुझे ही देते हुए मेरा भला क्या लगता है? अर्थात् यह शरीर आदि, सब कुछ प्रभु ने ही दिया है, तो फिर उसकी वस्तु अन्त समय उसे ही देते हुए मुझे क्यों दुःख हो?

जो हंसा - मोती चुगने वाले हंस कंकरों पर कैसे जी सकते हैं? वे कंकर के लिए कभी सिर नहीं झुका सकते। यदि मोती मिलें, तभी खायेंगे (अथवा भूखे ही रह जायेंगे)। भाव यह कि, बड़े गुणी व्यक्ति अपनी योग्यता से कम की वस्तु को कभी स्वीकार नहीं करते, भले ही कष्ट क्यों न सह लें।

एक अचम्भो—मैंने एक आश्चर्य देखा कि हीरा बाजार में बिक रहा है, किन्तु परीक्षक जौहरी के न होने से वह कौड़ी के बदले जा रहा है (जहां गुणों का कोई ज्ञाता नहीं हो, वहां गुणी का वास्तविक मूल्य नहीं हो सकता)।

नाम रतन—प्रभु के नाम रूपी रत्न धन को प्राप्त कर, उसे बड़ा सुरक्षित रक्खो। किसी के सामने उसका ढिंढोरा मत पीटते फिरो। क्योंकि जहां नगर, परीक्षक, ग्राहक और पूरा मूल्य देने वाला व्यक्ति न हो, वहां उसे कभी नहीं दिखाना चाहिये। अर्थात् प्रभु प्रेम की चर्चा वहीं करनी चाहिये, जहां उसके अधिकारी भक्तगण विद्यमान हों।

सर्पहिं दूध—सांप को दूध जैसी अमृत वस्तु भी पिलाओ तो वह भी उसके पेट में जाकर विष ही हो जाती है। किन्तु ऐसे कोई नहीं हैं, जो निन्दा आदि विषों को स्वयं पी जाएं, अर्थात् अपनी निन्दा सुन कर भी कुछ न कहें, प्रसन्न ही रहें।

एक समाना—वह एक परब्रह्म सारे संसार में समाया हुआ है और सारा संसार भी उसी में लीन है। कबीर भी ज्ञान स्वरूप ब्रह्म में लीन हो गया है, अतः वहां अब कोई द्वेष भाव शेष नहीं रहा।

कथनी मीठी—केवल बातें बनाना तो खाण्ड के समान मीठा है, किन्तु

काम करना बड़ा कठिन है। कहना छोड़ कर काम करने लग पडो, तो विष भी अमृत हो जाये।

पृष्ठ ६.

कथनी थोथी—कबीर कहते हैं कि केवल बातें बनाना व्यर्थ है, कर्म करना ही श्रेष्ठ है। मनुष्य अपने कर्मों के बल से ही संसार-सागर को पार कर सकता है।

पद जोरै—ये आज के ज्ञानी साधु उपदेशक प्राचीन ग्रन्थों की वाणी का उपदेश न देकर, अपनी नई-नई तुकबन्दियां जोडते फिरते हैं, अतः सच्चा साधु इनसे रुष्ट हो जाता है। ये लोग कुंए का निकला निकलाया हुआ जल तो पीते नहीं और स्वयं निकाल कर पीने का साहस करते हैं

कहता तो संसार में पर-उपदेश-कुशल तो बहुत मिलते हैं, किन्तु उपदेश को ग्रहण करने वाले कोई नहीं। जो व्यक्ति स्वयं उपदेशों पर आचरण नहीं करता, केवल कहता ही है, उसे संसार सागर में बहने दो।

जो देखे—जिसने उस प्रभु का साक्षात्कार कर लिया है, वह उसका वर्णन नहीं कर सकता और जो लोग उस का वर्णन करते फिरते है, उन्होंने उसका दर्शन नहीं किया। जिह्वा नेत्र और कान उसे नहीं पहुँचते।

मैं मरजीवा—कबीर कहते हैं कि मैं इस संसार रूपी सागर में मरजीवा मोती निकालने वाला गोता खोर) बन कर आया हूं। मैंने इसमें डुबकी लगा कर, ऐसे ज्ञान की मुट्ठी भर ली है, जिस में अनेकों वस्तुएं हैं

डुबकी मारी— मैंने संसार रूपी सागर में डुबकी लगाई थी, किन्तु (इस में लिप्त न होने के कारण डूबा नहीं और) आकाश में जा निकला, अर्थात् आकाश के समान निर्लेप भाव को प्राप्त हो गया। अब मैंने समाधिस्थ होकर अपनी आत्मा को ब्रह्मरन्ध्र में प्रतिष्ठित कर लिया है और प्रभु रूपी बहुमूल्य रत्न को प्राप्त कर लिया है।

मरते मरते—मरते मरते तो संसार ही मर मर गया, पर वास्तव में कोई भी न मर पाया। कबीर कहते हैं कि वास्तव में तो वही मरा है, जिसका फिर मरना न हुआ हो, अर्थात् जो जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो गया।

जा मरने से—जिस मृत्यु से संसार डरता है, उससे मैं प्रसन्न होता हूं।

क्योंकि, मैं सोचता हूं कि कब मर कर उस प्रियतम को प्राप्त करूं।

घर जारे—घरबार के मोह को नष्ट कर देने से अपने घर का उद्धार हो जाता है और उसमें मोह रखने से सब कुछ नष्ट हो जाता है। इस संसार में यही एक आश्चर्य है कि जो व्यक्ति मृत्यु से भयभीत न होकर अपने शरीर को सदा मरा हुआ अर्थात् नश्वर ही समझता है, वही कालपर विजय प्राप्त कर लेता है।

रोड़ा भया—साधु यदि सबके चरणों में गिरने वाला मार्ग का कंकर ही हो गया तो क्या हुआ ? उनसे तो नंगे पांव चलने वाले पथिकों को पीडा ही होती है। इस लिए, सज्जन को तो ऐसा होना चाहिए, जैसे मार्ग की धूलि (जो चलने वाले के पांव को कष्ट नहीं होने देती)।

खेह भई तो—यदि साधु धूलि के समान कोमल और नम्र भी हो गया, तब भी किस काम का, यदि वह अपने हलकेपन के कारण और मलिनता के कारण, उड़-उड कर अङ्गों को मलिन किया करे ? इस लिए सज्जन को तो जल के समान निर्मल और शीतल होना चाहिए।

पृष्ठ १०

नीर भया तो—यदि साधु जल के समान नम्र और निर्मल भी हो गया तो भी क्या हुआ ? कुछ लाभ नहीं। क्यों कि वह कभी गर्म और कभी शीतल हो जाता है। इसलिए, सज्जन तो भगवान् के समान सदा एक-रस रहने वाला होना चाहिए।

हरी भया—यदि साधु भगवान् के समान भी बन जाय, तो भी कुछ लाभ नहीं। क्योंकि वह भी संसार के नाश-निर्माण के झंझट में पडा हुआ है। इस लिए, सज्जन तो भगवान् की भक्ति कर निर्मल हो जाने वाला चाहिए।

निर्मल भया तो—भक्ति द्वारा निर्मल हुआ सज्जन भी, उत्तम पद को यदि चाहता है, तो किस काम का ? जो मल और निर्मल से परे हैं, ऐसे सज्जन तो और ही हैं।

गगन दमामा—ब्रह्मरन्ध्र रूपी आकाश में अनहद की ध्वनि रूपी दम्मामे बज रहे हैं और नगारों पर डंके पड रहे हैं। इसलिए भक्ति का क्षेत्र भक्त रूपी शूर-वीरों को पुकार रहा है कि अब प्रभु भक्ति रूपी वर्ग करने का समय है।

अब तो जूझै—अब तो कर्म करने से ही काम चलेगा। कर्मों से मुंह मोड़ने पर तो प्रीतम का घर बहुत दूर रह जायगा। हे शूर वीर, प्रियतम के लिए अपना सिर देने के लिए कुछ भी सोच-विचार मत करो।

सिर राखे—शरीर का मोह करने पर मान प्रतिष्ठा नष्ट हो जाती है और शरीर का मोह त्याग देने पर सम्मान और प्रियतम की प्राप्ति हो जाती है। जिस प्रकार बत्ती का गुल काटे जाने पर प्रकाश अधिक हो जाता है, उसी प्रकार शरीर की ममता न करने पर मनुष्य चमक उठता है।

पतिबरता—पतिव्रता तो काली, कुरूप और मलिन वस्त्र पहने हुए भी श्रेष्ठ हैं। पतिव्रता के ऐसे साधारण रूप पर करोड़ों सुन्दर स्वरूपों को भी न्योछावर किया जा सकता है।

कबिरा सीप—कबीर कहते हैं कि सीप समुद्र में पड़ी-पड़ी भी प्यास की रट लगा रही है। वह स्वाति नक्षत्र के जल की आशा में है। इसलिए, दूसरी बूंद को ग्रहण नहीं करती, अर्थात् सच्ची प्रेमिका या पतिव्रता अपने प्रियतम को छोड़कर कभी किसी दूसरे को स्वीकार नहीं करती।

नोट—स्वाति नक्षत्र में वर्षा की बूंद यदि समुद्र में पड़ी हुई सीप में पड़ जाय, तो वह मोती बन जाती है, ऐसी कवि समय ख्याति है।

पपिहा—पपीहे की इस अटल प्रतिज्ञा को देख कर (कि वह स्वाति नक्षत्र का ही जल पियेगा) बड़े बड़े प्रणधारियों का धीरज भी टूट जाता है। क्योंकि, पानी में पड़ा रहने पर भी, वह प्राण निकलने तक भी, उस पानी में अपनी चोंच नहीं डुबोता।

नाम न रटा—यदि हृदय में प्रभु के प्रति सच्चा प्रेम है, तो मुख से उसका नाम न रटने पर भी कोई हानि नहीं। पतिव्रता का मन सदा अपने पति में ही रहता है, यद्यपि वह मुख से उसका नाम नहीं लेती।

सत् गुरु सम—श्रेष्ठ गुरु देव के समान कोई भी अन्य सच्चा सम्बन्धी नहीं, सज्जन के समान कोई दानी नहीं, भगवान् के समान कोई हितैषी नहीं, और भक्त के समान कोई भी अन्य प्राणी नहीं।

पृष्ठ ११.

गुरु सिकलीगर अपने मन रूपी लोहे (के शस्त्र) का मैल छुड़ाने

के लिए गुरु देव को सिकलीगर (शस्त्रास्त्रों को तेज करने वाला) बना लो, जो कि मन को मसकला देकर अर्थात् तेज करके स्वच्छ करके उसे दर्पण की भांति स्वच्छ बना देता है ।

गुरु धोबी—गुरु देव तो धोबी हैं, वे भगवान् की भक्ति रूपी साबुन लगा कर, स्मरण रूपी शिला पर पछाड़ कर, शिष्य रूपी कपड़े को निर्मल और प्रकाशमान कर देते हैं ।

पंडित पढ़ि— बड़े-बड़े ये पुस्तककीट लोग पढ़ गुन कर हार गये, पर जब तक कोई श्रेष्ठ गुरु पथप्रदर्शक नहीं मिलता, तब तक ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता और ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं हो सकती । इस बात को सभी शास्त्र प्रमाणित करते हैं ।

बात बनाई—अनेक प्रकार की बातें बना कर, संसार को ठगते फिरते हैं, किन्तु अपने मन को नहीं समझाते । यह मन उन्हें चौरासी लाख योनियों के चक्कर में डाल देता है ।

नीर पियावत—अरे ! दूसरों को पानी पिलाते क्यों फिरते हो ? यहां तो घर-घर में समुद्र का अनन्त जल भरा हुआ है । जिस किसी को प्यास होगी, वह स्वयं ही पानी पी लेगा । अर्थात्, दूसरों के घर जाकर या बुला कर उन्हें उपदेश क्यों देते हो ? जिसे कुछ उपदेश ग्रहण करने की उत्सुकता होगी, वह स्वयं लाख बार उपदेशक के यहां जायेगा ।

सिंहों के—सिंहों के झुण्ड नहीं होते, और न हंस पंक्तियों में ही उड़ा करते हैं । हीरे रत्नों की भी कभी बोरियां नहीं भरी गईं । इसी प्रकार, सज्जन व सच्चे साधु भी टोलियां बांध कर नहीं चलते, अर्थात् सच्चा साधु भी करोड़ों में कहीं एक आध ही मिलता है ।

सब बन तो—जिस प्रकार सब बनों में चन्दन नहीं, सच्चे शूर वीरों का भी कहीं झुन्ड नहीं और सब समुद्रों में मोती नहीं होते, उसी प्रकार साधु भी सब कहीं नहीं मिला करते ।

साधु २—ये भगवें कपड़े पहने हुए सब साधु पोस्त के खेत की भांति ऊपर से तो एक से दिखाई देते हैं, किन्तु इनमें से ज्ञान के रंग में रंगा हुआ तो कोई एक आध ही है । शेष सब तो कोरे के कोरे ही हैं ।

निराकार की—सज्जन पुरुष का शरीर ही उस निराकार ब्रह्म को दिखलाने वाला दर्पण है। यदि उस ईश्वर को देखने की अभिलाषा हो तो, सज्जनों के शरीर में देख लो।

पखापखी – अपने अपने पक्ष का समर्थन और विपक्ष का खण्डन करने में सारा संसार भटक रहा है। सभी पक्षों को छोड़ कर, तटस्थ रह कर, जो भगवद् भजन करता है, वही सच्चा ज्ञानी पुरुष है।

सगति भई—यदि मनुष्य का अपना हृदय कठोर है तो, सत्संगति से भी क्या लाभ ? सौ नेजा पानी चढ़ने पर भी कोर नहीं भीगती (कोर को कौल का अपभ्रंश मान लें, जो कि कमल से बिगड़ा हुआ शब्द है, तो इसका अर्थ यों हो जायगा कि तालाब में पानी बहुत चढ़ जाने पर भी कमल नहीं भीगता)।

पृष्ठ १२

हरिया जाने—पानी के प्रेम को तो हरा वृक्ष ही जानता है। सूखी लकड़ी तो उसके प्रेम को नहीं जानती, चाहे वह कितनी ही वर्षा में क्यों न भीगती रहे (ज्ञान के लिये उत्सुक पुरुष ही उपदेश के महत्व को समझ सकते हैं, दूसरे नहीं)।

पसुआ सों—श्रेष्ठ उपदेशक सोचता है कि, इन पशुओं के समान मूर्ख श्रोताओं से पाला पड़ गया है, इस लिये हे हृदय ! अब तो मन मार कर रह जा, क्योंकि ये श्रोता तो ऊसर खेत के समान हैं, इन में चाहे दुगना ही उपदेश रूपी बीज क्यों न डाल दो, वह कभी भी सफल न होगा।

कबिरा चन्दन के—कबीर कहते हैं कि चन्दन वृक्ष के निकट रहने वाले नीम के वृक्ष भी चन्दन के समान गुणों वाले हो जाते हैं और बांस अपनी बड़ाई के घमंड में ही डूब जाता है सुगन्ध नहीं ग्रहण करता। इस प्रकार कोई भी न डूबे।

माला तिलक—केवल माला, तिलक आदि बाह्य वस्तुओं से अपने आप को सजा लेने से सच्ची भक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। इसी प्रकार, दाढ़ी मूंछ मुंडा, कर साधु बन जाने से भी क्या लाभ, यदि वह संसार के झंझटों में

फंसा रहे ?

दाढ़ी मूंछ—ये आज के ढोंगी साधु दाढी-मूंछ मुंडवा कर सिर
घुटवा लेते हैं। अरे! (इन बातों में क्या रखा है?) मूंडना तो मन
चाहिये, जिस में विषय विकार भरे हैं।

मूंड मुंडाये—यदि सिर मुंडाये से ही भगवान् मिलते हों, तो सब को
क्यों न मुंडा ले? ऐसी अवस्था में तो भेड़ ही सब से पहले बैकुण्ठ
पहुंचेगी, क्योंकि उसे ही बार बार मूंडा जाता है।

बांबी कूटे—हे भोले भाई! बांबी को कूटने से सांप नहीं मारा जाता
बांबी तो किसी को नहीं काटती, वास्तव में तो सब को सांप ही काटता
(लक्ष्य प्राप्ति के लिए वास्तविक कर्म करना चाहिये, मनको रोकना चाहिए, न
बाहिरी अंगों को व्यथ में कष्ट दिया जाय?)।

लोहे केरी—हे विषयी प्राणी, तूने प्रथम तो लोहे की नाव बना रख
है और ऊपर से पत्थरों का भारी भार उसमें लाद रक्खा है और इस पर
विष की बड़ी भारी गठरी अपने सिर पर उठा रक्खी है, फिर भी तू पार हो
चाहता है अर्थात्, सद् गुरुदेव के न मिलने के कारण, अहंकार रूपी लोहे
नाव पर तू चढ़ा फिरता है और जन्म जन्मान्तरों के संचित और प्रारब्ध क
रूपी पत्थर उस में भर रक्खे हैं। साथ ही विषय वासना रूपी विष
गठरी भी तेरे सिर से अभी तक उतरी नहीं। ऐसी अवस्था में तू भला संसा
सागर को कैसे पार कर सकता है?)

हम तो जोगी—कबीर कहते हैं कि हम तो मन से योगी (साधु) हैं
बाहिरी दिखावे वाले साधु तो संसार में और बहुत हैं। मन से उस परमात
के साथ योग (संबन्ध) लगाते लगाते अब हमारी दशा विलक्षण हो गई है

कुसल कुसल ही—संसार में प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे का कुशल
(राजी खुशी) पूछते हुए विदा होता जा रहा है। और, वास्तविक बात
यह है कि, जब तक बुढ़ापा (तथा मृत्यु आदि) के भय नष्ट नहीं होते,
तक कुशल कहां से हो सकती है?

पानी केरा—मनुष्य का शरीर तो पानी के बुलबुले के समान क्षयि

और नश्वर है। यह देखते ही २ प्रातःकाल के तारे की भांति छिप जायगा।

पृष्ठ १३.

कबिरा नौबत—कबीर कहते हैं कि कुछ दिनों तुम अपनी भी चला लो (मन चाही बातें कर लो), क्योंकि फिर तुम्हें यह मनुष्य शरीर, नगर, गांव और गली न मिलेंगे (क्योंकि मनुष्य मृत्यु के पश्चात् न जाने किस योनि में कहां जा पड़ता है)।

कबिरा गर्व—मनुष्य को अपनी जवानी पर कभी अभिमान नहीं करना चाहिये। क्योंकि, यह जवानी तो टेसू के फूल की भांति, दस दिन के लिए खिलती है और फिर पलास की भांति बुढ़ापे से जर्-जर् हो जाती है।

दीन गंवायो—सांसारिक माया, ममता, मोह के कारण अपना धर्म भी खो दिया। फिर भी ये सांसारिक संबन्ध अपने साथ न चले। हे मूर्ख, इस प्रकार तू ने अपने हाथों अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी मारी।

मैं भंवरा—हे भ्रमर ! मैंने तुझे रोका था, कि तू प्रत्येक बन-उपबन में रस या सुगन्धि मत लेता फिर। यदि किसी बेल में अटक गया, तो तड़फ-तड़फ कर प्राण देने पड़ेंगे।

भय बिनु—बिना भय के न तो श्रद्धा ही होती है और न प्रेम ही। ज्यों ही हृदय से भय मिट जाता है, सब रस-रीति उस के साथ नष्ट हो जाती है।

चलती चक्की—जन्म और मृत्यु रूपी दो पाटों वाली इस संसार रूपी चक्की को चलती देख कर, कबीर दास को बड़ा दुख होता है, क्योंकि इन दो पाटों के बीच में पड़ जाने पर, कोई भी बच कर नहीं निकल सका।

दव की दाही—जङ्गल की आग से जली हुई लकड़ी (कोयला बन) खड़ी खड़ी पुकार करती है कि अब एक बार यदि, जल पाने पर भी, लोहार के क्रूर हाथों में पड़ जाऊंगी, तो वह मुझे फिर भी जलायगा।

पात झरंता—यह आत्मा रूपी पत्ता इस मनुष्य शरीर रूपी वृक्ष से बिछुड़ता हुआ कहता है कि हे प्राणियों में श्रेष्ठ मनुष्य रूपी वृक्ष ! सुन, अबके बिछुड़ने पर फिर हम नहीं मिल सकेंगे। क्योंकि बहुत दूर जा पड़ेंगे (आत्मा को मृत्यु के पश्चात् वही शरीर फिर कभी प्राप्त नहीं हो सकता)।

दस द्वारे का—दस इन्द्रिय रूपी-दसद्वारों वाले, शरीर के पिंजरे में, प्राण रूपी वायु का पक्षी रह रहा है। इस लिए, इस के रहने में ही आश्चर्य है, निकल जाने में आश्चर्य की बात ही क्या ?

आवत गारी—गाली आते हुए तो एक होती है, किन्तु यदि उसे उलट दें, अर्थात् गाली निकालने वाले को हम भी गाली दे दें, तो वह अनेक हो जाती है इसलिए कबीर कहते हैं कि उस गाली को मत उलटो, ताकि एक की एक ही रह जाय।

उदरसमाता—जो व्यक्ति अपने शरीर-निर्वाह मात्र के लिए अन्न लेता है और तन ढकने मात्र के लिए कपड़ा पहनता है, उससे अधिक कुछ भी एकत्रित नहीं करता, वास्तव में वही सच्चा साधु है।

पृष्ठ १४

जहां काम—जो व्यक्ति काम करते हैं, वे नाम नहीं चाहते और जो नाम के भूखे हैं, उनसे कुछ काम नहीं हो सकता। अथवा, जहां काम वासनाएं हैं वहां प्रभु का नाम नहीं आता और जो प्रभु के नाम में लीन हैं, काम-वासनायें उनके पास नहीं फटकतीं। सूर्य और रात्रि की भांति ये दोनों वस्तुएं कभी एक साथ नहीं रहीं, न रह सकतीं।

काम काम—काम काम सभी पुकारते हैं, वास्तव में काम क्या है, इसे कोई नहीं पहचानता। मन की प्रत्येक कल्पना मात्र ही का नाम काम है।

आबगई—मनुष्य ज्योंही किसी से मांगता है कि उसके साथ ही प्रभाव, सम्मान और प्रेम नष्ट हो जाते हैं (अतः कभी कुछ न मांगना चाहिये)।

प्रभुता को—सभी कोई प्रभुता या अधिकारों को प्राप्त करना चाहते हैं, किन्तु उस प्रभु की उपासना कोई नहीं करता। कबीर कहते हैं कि यदि प्रभु की उपासना करने लग पड़ें तो प्रभुता उसकी अपने आपही दासी हो जायगी।

चित कपटी—कपटी हृदय वाले पुरुष कठोर, और कुटिल हृदय को लिये हुए ऊपर से बड़े प्रेम से मिलते हैं। दुष्ट और दर्पण दोनों सामने और पीछे से भिन्न २ दो रूपों वाले होते हैं।

कबिरा जोगी—कबीर कहते हैं कि यदि योगी (साधु) पुरुष संसार के लोगों से किसी प्रकार की आशा न रक्खे, तो वह संसार का गुरु और संसार

उसका दास बन जाता है। किन्तु यदि योगी संसार से कुछ चाहने लग पड़े, तो संसार के लोग उसके गुरु और यह उनका दास हो जाता है।

सोता साधु—यदि सज्जन सो रहा हो, तो उसे जगा देना चाहिए, ताकि वह प्रभु का जाप करे। किन्तु शाक्त (शक्ति के वे झूठे उपासक जो उसके नाम पर निरीह पशुओं को मारते हैं या शक्ति-सम्पन्न अभिमानी लोग), सिंह और सांप को तो सोते ही रहने देना चाहिए।

निन्दक—पापी भले ही हजारों मिल जायें, पर निन्दक एक भी कभी न मिले। कारण, एक निन्दक के सिर पर करोड़ों पापों का भार होता है।

माया छाया—यह लक्ष्मी और छाया एक से स्वभाव वाली हैं, किन्तु इन के स्वभाव को कोई विरला ही पहचाना है। क्योंकि लक्ष्मी तो भगतों (भगवान् के भक्तों) के पीछे २ फिरती है और जो लोग लक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए, उसके सामने दौड़ते फिरते हैं, उनसे वह दूर भाग जाती है। मनुष्य की अपनी छाया भी भागते समय, उसके पीछे २ चलती है, किन्तु यदि उसके सामने होकर उसे पकड़ना चाहें, तो वह दूर भागती जाती है।

चलो चलो—उस प्रियतम के पास चलने के लिए तो सब कोई कहते हैं, पर उस तक पहुंचता कोई २ ही है। क्योंकि धन-सम्पत्ति तथा कामनियां उस तक पहुंचने वाले मार्ग में दो घाटियां हैं (इनको लांघ जाना बड़ा ही कठिन है)।

नारी का—कबीर कहते हैं कि (गर्भवती) नारी की छाया पड़ जाने मात्र से सांप अन्धा हो जाता है (नारी की छाया मात्र का जब इतना भयंकर परिणाम होता है तो), उन लोगों की दुर्दशा की तो बात ही क्या कहें, जो सदा ही नारी में आसक्त रहते हैं?

पृष्ठ १५

जो जल—बरसें सम्पत्ति और नाव में जल बढ़ जाय, तो उन्हें दोनों हाथों से निकालना ही सज्जन का काम है।

हाड़ बड़ा—शरीर का महत्व तो भगवान् के भजन में है और सम्पत्ति की बड़ाई दान करने में है। इसी प्रकार, दूसरों का उपकार करने में ही बुद्धि की महत्ता है। जीवन का यही लाभ है।

देह धरे का—मनुष्य शरीर धारण करने का यही लाभ है कि कुछ न कुछ देते रहें। फिर यह मानव देह नहीं मिलेगी। इसलिये अभी जो कुछ दे सकते हो देते रहो।

मरि जाउं—मैं अपने शरीर के लिये तो मरने पर भी किसी से कुछ न मांगूंगा, किन्तु दूसरों के लिये मांगने में मुझे कुछ लज्जा नहीं आती।

लघुताई—छुटपन सब से अच्छा है। छोटा बनने से सब काम बन जाते हैं, जैसे द्वितीया के छोटे चन्द्रमा को सब कोई सिर झुकाते हैं।

लघुता ते—छोटेपन से प्रभुत्व प्राप्त होता है, किन्तु अपना प्रभुत्व दिखाने से भगवान दूर भाग जाता है। देखो छोटी सी चिऊंटी तो शक्कर का दाना प्राप्त कर लेती है, किन्तु इस बड़े हाथी के सिर पर धूल ही पड़ती है।

दया धर्म—जिनके हृदय में दया धर्म नहीं है और मुंह से ज्ञान की बातें बनाते हैं वे लोग साखी और शब्द सुन सुन कर भी नरक ही में जायेंगे।

प्रेम प्रीति का—कबीर कहते हैं कि प्रभु प्रेम का चोला पहन कर खूब नाचो। मैं उस व्यक्ति पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर सकता हूं, जो कोई सत्यवादी है।

ज्यों अंधेरे—जिस प्रकार बहुत से अंधे मिलकर हाथी को टटोल २ उस का स्वरूप समझने का प्रयत्न करते हैं (किन्तु उसके किसी एक अंग ही को हाथी मान बैठते हैं,) इसी प्रकार ये विभिन्न मत मतान्तर अपनी २ समझ के अनुसार ईश्वर का वर्णन करते है। अतः इन में से किसके बताये हुए स्वरूप का ध्यान किया जाय ?

फूटी—ज्ञान की आंखें फूट जाने पर सज्जन और दुर्जनों का भेद दिखाई नहीं देता। आजकल तो जिसके साथ दस बीस चेले हैं वही महन्त है।

बिना वसीले—बिना किसी आधार के नौकरी, बिना बुद्धि के पथ-प्रदर्शन ऐसे ही व्यर्थ है जैसे कि ये योगी साधु ज्ञान के बिना ही राख रमाये फिरते हैं।

शब्द

पृष्ठ १६ दुतिया—दूसरा। गिरजा पार्वती। भंवर गुफा—ब्रह्मरंध्र

अगोचर - इन्द्रियों की पहुँच से परे। पेखे—देखे।

पृष्ठ १७ तिरगुन—सत्व, रज, तम इन तीन गुण रूपी तीन लड़ियों वाली। कमला—लक्ष्मी। भवानी—पार्वती। अलख—अलक्ष्य (कभी दिखाई न देने वाला) किरिया—कर्मकांड (बाहरी दिखाने के पूजा पाठ आदि कर्म)। द्वार—इन्द्रियां। रूंधे—रोके। पवन—प्राण। अनहद—योगी के ध्यान स्थित होने पर मस्तिष्क में एक अलौकिक ध्वनि सुनाई देती है, उसे अनहद ध्वनि कहते हैं। अधर—आधार के बिना। सुन्न सिखर—ब्रह्मरंध्र। हंसा—प्राण। आवागमन—जन्म मरण। दरियाव—नदी।

पृष्ठ १८-१९ जक्त—जगत। कनक—सोना। बिलग—भिन्न भिन्न रूप के। खसिया—बकरा। बादै—व्यर्थ बकवास। पतीजै—विश्वास करे। वाद—सिद्धान्त। वदो—कहो। पावक अग्नि। उज्जू—वजू (हाथ मुंह धोना)। मज्जन—स्नान।

पृष्ठ २० गगन—ब्रह्मरंध्र। मदन—काम। चादर—शरीर रूपी चादर।

शब्द

(१) सरलार्थ

(१) संतो योग अध्यातम सोई

पृष्ठ १६—हे सज्जनो वही श्रेष्ठ आध्यात्म योग है, जिसमें मनुष्य एक ब्रह्म ही को सर्व व्यापक जान कर किसी दूसरी वस्तु को नहीं देखता (और शरीर में स्थित निम्नषट्चक्रों में ब्रह्म का ध्यान करता रहता है)।

प्रथम मूलाधार चक्र वह है जो चार पंखड़ियों वाला है और जहां गणेश जी का निवास है। रिद्धि और सिद्धि आदि शक्तियां यहां पर गणेश जी की उपासना किया करती हैं। जप के द्वारा इनका साक्षात्कार होता है। दूसरा षड्दल (छः पंखड़ियों वाला चक्र है) इसमें सावित्री के साथ ब्रह्मा निवास करते हैं। इन्द्र के साथ सभी देवता यहां ब्रह्मा की उपासना किया करते हैं।

अष्ट कमल दल चक्र में लक्ष्मी के साथ भगवान् विष्णु निवास करते हैं और जहां तृतीय सेवक पवन है, वहां छः हजार (ऋषि मुनि या देवता) उनकी उपासना करते रहते हैं। इस चक्र का साक्षात्कार होने पर आवागमन—जन्म मरण—मिट जाते हैं।

द्वादश दल कमल चक्र में अपनी शक्ति पार्वती के साथ भगवान् शिव निवास करते हैं। ज्ञान और भक्ति के पारंगत छः हजार ऋषिमुनि व देवता वहां उनकी उपासना करते हैं।

षोडश दल कमल चक्र में यह जीव तत्व अपनी अविद्या शक्ति के साथ रहता है। यहां एक सहस्र व्यक्ति उपासना करते हैं। इसका ऐसा रहस्य कहा जाता है।

ब्रह्म रन्ध्र के समीप (त्रिकुटी में) द्वि-दल (दो पंखड़ियों वाले) चक्र में आत्मतत्व (चैतन्य) निवास करते हैं, जिनकी उपासना से कर्मों का भ्रम नष्ट हो जाता है।

प्रकाश मान सहस्र दल कमल में वह ज्योति स्वरूप, एवं व्यापक, अक्षय प्यारा पुरुष अपने आप प्रतिबिंबित होता रहता है।

सत गुरु कहते हैं कि स्मरण के इन षट चक्रों पर उस प्रभु का स्वाभाविक जप करलो। छः सौ इक्कीस हजार बार उसका जप करलो और उस अजपा (जप न करने योग्य) के रहस्य को कोई (न कहने वाला) ही समझ सकता है। इस अज्ञात रहस्य के ज्ञान को कोई-कोई ही जान पाता है। जो इसे पहचान लेता है वह आत्मतत्व को भी देख लेता है। कबीरदास यह समझा कर कहते हैं।

(१) माया महाठगिनि हम जानी—

पृष्ठ १७ कबीर कहते हैं कि हमने इस माया को पहचान लिया है कि यह बड़ी भारी ठगने वाली है। सत्व, रज, तम, रूपी तीन लड़ियों वाली (त्रिगुणात्मिका) फांसी हाथ में लेकर यह बड़ी मधुर वाणी बोलती है, अर्थात् बड़ी भली प्रतीत होती है। यह विष्णु के यहां लक्ष्मी, शिव के यहां पार्वती, पंडा के यहां मूर्ति तथा तीर्थों में जल रूप से रहती है यह योगी के यहां योगिनी, राजा के यहां रानी, भक्त के यहां भक्तिन, ब्रह्मा के यहां ब्रह्माणी रूप धारण किए हुए है। साहूकार के यहां हीरे मोती तथा दरिद्र के यहां कौड़ी के रूप में भी यही रहती है। हे सज्जनों वास्तव में इसकी महिमा अवर्णनीय है।

भाई——संसार में कोई ऐसा सज्जन सद्गुरु कहलाने का अधिकारी है जो कि उस अलक्ष्य ब्रह्म का नयनों से साक्षात्कार करा देवे ? जो कभी भी अपनी मर्यादा से विचलित न हो बोलते हुए उस प्रभु को कभी न भुलावे और उपदेश को आचरण के द्वारा दृढ़ बनाता रहे;

जो बाहरी कर्मकाण्डों से अलग रह कर स्वाभाविक समाधि की शिक्षा दे, जो इन्द्रियों को बलात्कार से रोकने का प्रयत्न न करे और न प्राणायाम करके ही बैठा रहे या अनहद की ही ध्वनि में ही उलझा रहे इस मन की जहां तक पहुँच है, सर्वत्र जो उस प्रभु की ही झांकी दिखाता रहे, जो कर्म करता हुआ भी निर्लेप रहने के कारण निष्कर्मी ही बना रहे और इस प्रकार की (अनाशक्ति भाव से कर्म करने की) युक्ति दूसरों को भी सिखावे, जो सदा आत्मानन्द में लीन रहे, किसी से भयभीत न हो, और पदार्थों के उपभोग में भी योग का दर्शन करता रहे, जो पृथ्वी और आकाश को त्याग कर निराधार (ब्रह्म,) में समाधि लगावे, शून्य शिखर अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र रूपी शिलापर अपना स्थिर आसन जमा कर बैठे जो अन्दर बाहर सर्वत्र उसी प्रभु का दर्शन करता रहे, उसके सिवाय कोई भी दूसरा रुप जिसकी दृष्टि में न आ पावे ? वही परमहंस गुरु जन्म-मरण के बन्धनों को मिटा सकता है।

दरियाव की लहर— नदी की लहर वास्तव में नदी ही तो है, नदी और लहर भला भिन्न कैसी हो सकती है ? उठती और बैठती हुई लहरें जल ही तो हैं वे जल से भिन्न दूसरी वस्तु कैसे हो सकती हैं ? हां उसका ही दूसरा नाम लहर रख दिया गया है, किन्तु लहर के कहने से जल नष्ट थोड़े ही होगा ? कबीर दास कहते हैं कि इसी प्रकार सोच समझ कर देख लो, वास्तव में जगत ही ब्रह्म है और ब्रह्म ही जगत् है। ब्रह्म के सिवा कोई दूसरी सत्ता नहीं है। (यह रचना अद्वैत रहस्यवाद का सुन्दर उदाहरण है)।

पृष्ठ ९८ दुइ जगदीश—कबीर हिन्दू और मुसलमानों के बाह्य धार्मिक विधि विधानों के कारण उत्पन्न हुए भेद भाव को दूर करने के उद्देश्य से कहते हैं कि- अरे भाई ! भला ईश्वर दो कैसे हो सकते हैं ? तुम्हें किसने बहका दिया है ? वह तो एक ही है। भले ही उसके अल्ला, राम, करीम, केशव, हरी या हजरत आदि अनेक नाम क्यों न हों। सोने से बने हुए गहनों के नाम कितने ही क्यों न हों, वास्तव में तो वे सब सोना ही है। नमाज और पूजा भी कहने सुनने के लिए दो भिन्न वस्तुएं हैं, वास्तव में वो दोनों ही ईश्वरोपासना ही हैं। वह महादेव है, वही मुहम्मद है, उसी को चाहे ब्रह्मा कहलो, चाहे आदम इस पृथ्वी पर रहने वाले सबएक ही जातिके हैं कोईहिन्दू कोई मुसलमान किन्तु सबएक ही

जमीन पर रहते हैं। अतः सब एक ही हैं। इधर पंडित लोग वेद तो उधर मौलवी कुरान पढ़ते हैं। है तो ये सब एक ही मिट्टी के बर्तन, भलेही इनके नाम भिन्न २ क्यों न हों। कबीरदास कहते हैं, ये दोनों भ्रम में पड़े हुए हैं इसी भेद-भाव के कारण राम को कोई भी नहीं पा सका। देखो हिन्दू लोग तो देवी के लिए बलि के नाम पर बकरे काटते हैं, और मुसलमान कुर्बानी के लिए गौ मारते हैं। इस प्रकार दोनों ही अपने जीवन को व्यर्थ खो देते हैं।

६. ऐसी दुनियां—संसार ऐसा पागल हो रहा है कि सच्ची भक्ति को कोई पूछता ही नहीं। कोई तो महात्मा जी से बेटा मांगता है, कोई दुखी कहता है कि हमपर कृपा करो और हमारे दुःखों को दूर करो, कोई धन सम्पत्ति चाहता है कहता है कि धन मिल जाएगा तो रु० भेंट चढ़ाऊंगा, और कोई विवाह सगाई के लिए प्रार्थना करता है! गुरु जी या गुसाईं जी महाराज ऐसी बातें सुन कर बड़े प्रसन्न होते हैं। इस संसार में सच्चे का तो कोई ग्राहक नहीं है। झूठे का सब विश्वास कर लेते हैं। कबीर कहते हैं हे सज्जनों इन अन्धों का क्या किया जाय?

७. पण्डित बाद—हे पण्डित जी? तुम जो अपना उपदेश या सिद्धान्त कहते हो, यह सब झूठा है। क्योंकि (शुभ कर्म किए बिना) केवल राम कहने सेही मनुष्य यदि भक्त होजाय तब खांड कहनेसे ही मुखमीठा होजाना चाहिए।

पृष्ठ २९—ऐसा होने पर अग्नि कहने सेही पांव जल जाय, जल कहने से ही प्यास बुझ जाय और भोजन का नाम कहते ही भूख भी मिट जाय। फिर तो सारे संसार ही का उद्धार हो जाय। अरे भाई! मनुष्य के सम्पर्क में रहने वाला तोता भी तो हरि बोलता है, किन्तु वह हरि के महत्व को नहीं जानता, क्योंकि यदि वह जंगल में भाग जाय तो वह हरि को भुला देता है।

बिना पूर्ण ज्ञान प्राप्त किए केवल नाम के रटने से क्या होता है? कहीं धन कहने मात्र में कोई धनिक हो सकता है? यदि ऐसा होता तो कोई भी निर्धन न रहता। यह केवल मुंह से नाम रटने वाले लोग विषय वासना और माया से तो प्रेम करते हैं और भगवान् के सच्चे भक्तों की हंसी उड़ाते हैं। कबीर कहते हैं कि ज्ञान पूर्वक राम का सच्चा भजन किए बिना सब लोकों को छोड़ कर बन्ध कर यमलोक में ही जाना पड़ेगा।

८. अल्लाह् राम—हे अल्लाह ! हे राम ! अपने भक्तों पर कृपा करो, ये सब तुम्हारे ही प्राणी हैं। (ईश्वर की कृपा प्राप्त करने के लिए तो) सिर मुंडाने, स्नान करने आदि से कुछ प्रयोजन नहीं। जो लोग बलि या कुर्बानी के नाम पर जीवों का वध करके भी धर्मात्मा (भक्त) कहलाते हैं और दूसरों के गुणों को छिपाते रहते हैं, वे चाहे कितने ही वजू (नमाज पढ़ने से पहले हाथ मुंह धोने की क्रिया) या स्नान क्यों न करें, मस्जिद में सिर क्यों न झुकायें किसी से कुछ लाभ नहीं। यदि हृदय में कपट भरा हुआ है तो मक्का में जाकर नमाज पढ़ लेने से भी क्या लाभ ? हिन्दू प्रत्येक एकादशी को व्रत रखते हैं और इस प्रकार वर्ष में चौबीस दिन और मुसलमान ३० दिन रोजों में भूखे रहते हैं, किन्तु बारह महीनों में बाकी दिनों को क्यों छोड़ते हो, इनकी गिनती किनमें होगी ? (क्या बाकी दिन पवित्र नहीं हैं) हिन्दू पूर्व में भगवान का स्थान मानते हैं, तो मुसलमान पश्चिम में अल्लाह का मुकाम कहते हैं। किन्तु वास्तव में तो उस प्रभु को अपने हृदय ही में खोलो और देखो करीम और राम यहीं पर हैं। यदि खुदा मसजिद में ही रहता है तो बाकी सारा संसार किसका स्थान है ? इसी प्रकार यदि राम तीर्थ या मूर्ति ही में रहता है, तो आज तक तो इनमें उसे किसी ने नहीं देखा। वेद शास्त्रों को भला कौन झूठा कहता है ? झूठा तो वह है, जो उनके उपदेशों पर विचार नहीं करता। इसलिए सभी जीवों में उसी एक ईश्वर को देखो। भेद-भाव को नष्ट कर दो, इस दुर्भाव के कारण ही सब नष्ट हो रहे हैं। संसार में जितने स्त्री-पुरुष चराचर मात्र जीव हैं हे भगवान ! वे सब तुम्हारे ही तो रूप हैं। कबीर कहते हैं कि जो अल्लाह या राम का समान उपासक है या मानने वाला है, वही हमारा गुरु या पीर है।

पृष्ठ २० ज्ञान का गेंद—कबीर कहते हैं कि ज्ञान रूपी गेंद और भगवत्स्मरण रूपी डण्डा बना कर संसार रूपी (मैदान में चौगान में) खेल को खुल कर खूब खेलो। हे बालक ! (भोले मनुष्य) संसार में इधर उधर भरमना भटकना छोड़कर भगवान के सच्चे स्वरूप की शरण आ जा ! भगवान के स्वरूप की महिमा शेष नाग भी गाता रहता है। उसके सिर पर उन्हीं के चरण पड़े हैं।

काम वासनाओं को जीत कर, षट्चक्रों का शोधन कर, क्रोध को वश

में कर, ब्रह्म का साक्षात्कार करले। पद्मासन लगा कर प्राणायाम के द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में समाधि लगा ले और इस प्रकार कामवासनाओं को शीघ्र नष्ट कर डाल। इस प्रकार आचरण करने वाला कोई बिरला जौहरी (परीक्षक) ही होता है जो कर्म जाल से बच पाता है।

सोच समझ—हे अभिमानी पुरुष कुछ सोच विचार कर तो देख। यह तेरी शरीर रूपी चादर पुरानी हो गई है। इसके टुकड़े २ युक्ति पूर्वक जोड़ कर तुझ पर लपेटी गई है लोभ और मोह में पड़ कर तू ने इसे पापों से मैला कर डाला है। तू ने कभी ज्ञान का साबुन लगा कर इसे धोया नहीं और न प्रेम के पानी से ही इसे मल कर साफ किया। इसे ओढ कर तू ने सारी आयु बिता दी, किन्तु इसके गुण दोषों को नहीं पहचान सका। अब भी अपने हृदय में कुछ तो सोच, यह बेगानी वस्तु है, इसे बड़े यत्न पूर्वक संभाल कर रख अर्थात् पापों से मैला मत होने दे, क्यों कि यह फिर दुबारा हाथ न आएगी।

——————

सुन्दरदास—

सुन्दर विचार

शब्दार्थ

पृष्ठ २३—अमोलक - अमूल्य। दिसि दिशा। वंछत चाहता है। सुरलोक—स्वर्ग। पुरंदर—इन्द्र। किन—क्यों नहीं। शठ—दुष्ट। लीलत—निगलते हैं। शृंग—सींग। नाती—पोते दोहते।

पृष्ठ २४ केली—क्रीड़ा। मौत—मृत्यु। असंखी—असंख्य। खंखी—खोखला। जाम—याम, पहर। बाय—बावड़ी।

पृष्ठ २५—स्वान-कुत्ता। श्रगाल—गीदड़। बिडाल—बिल्ली। ढेढ—चमार। बटमार—लुटेरा, डाकू। हिंडोरन—झूले। तद्रूपा—उसी का स्वरूप पंचागनी—पांच अग्नियां। (साधु लोग गर्मियों में दोपहर को अपने आसन के चारों दिशाओं में चार उपलों कीढेरियां जला कर बीच में स्वयं बैठकर तपस्या करते हैं। इस प्रकार उनके चारों ओर चार अग्नियां तथा सिर पर सूर्यरूपी पांचवीं अग्नि होती है। इसको पंचाग्नि तप कहते हैं।) वारि—जल कर।

पृष्ठ २६रूख—वृक्ष। तरै—तले, नीचे । कासन—कास (एक प्रकार की घास ।) पयपान—दूध पीना । निशिवासर रात दिन । साधत पौना—प्राणायाम करते हैं । पूरन काम—पूर्ण काम जिसकी सब इच्छाएं पूर्ण हैं । कुंजर – हाथी । आन—दूसरा । गोवत—छिपाना । जोवत—ढूंढना ।

पृष्ठ २७—थिरानी—स्थिर हुई । उनहार—अनुरूप, समान । पावक—अग्नि । कीस—बन्दर । नखसीसै – सिर से पैर तक । दीरघ-लम्बा । सूत्र—यज्ञोपवीत । हय-–घोड़ा । गय-– गज, हाथी ।

पृष्ठ २८-२९–वपु-शरीर । वयस—अवस्था । तड़ाग तालाब । द्वन्द्व–सुख-दुख, राग-द्वेष धर्म अधर्म आदि विरोधी कार्यों के जोड़े । रोष-तोष—रागद्वेष । घात–चालाकी । रोपी—जमाना । जुझाऊ—युद्ध के । परबोधिये—समझाइये । धीजिए समझाइए । अहि—सांप । लहिये–प्राप्त करे । सूली—फांसी । इत उत–इधर-उधर ।

सुन्दरदासः—

सुन्दर विचार

सरलार्थ

पृष्ठ २३ पाई अमोलक—हे मनुष्य इस अमूल्य मानव-देह को प्राप्त करके भी तू अपने हृदय में यह विचार क्यों नहीं करता कि काम, क्रोध, लोभ, मोह तुझे दसों दिशाओं से लूट रहे हैं फिर भी तू स्वर्ग लोक और इन्द्र के पद को पाना चाहता है । जिसके काल भी पांव पड़ता हैं । इसलिए बुरे विचारों को छोड़ कर अच्छे विचारों को हृदय में धारण कर, सच्चिदानन्द, सुन्दर आत्मरूप का भजन कर ।

इन्द्रिन के—ये मूर्ख लोग इन्द्रियों के सुख को सुख मानते हैं, किन्तु इनके कारण ही बहुत दुख पाते हैं । जिस प्रकार जिह्वा के स्वाद में फंसी हुई मछली मांस को खाकर पानी से बाहर आ जाती है (मर जाती है) और जिस प्रकार बन्दर जिह्वा के स्वाद में पड़ कर बन्धन में पड़ जाता है और फिर पछताता है ।

सुन्दर क्यों—सुन्दरदास कहते है कि गुड़ खाकर कान छिदाने वाली बात तू क्यों करता है ? कामके बिगड़ने से पहले ही क्यों नहीं संभल जाता ? देखने

में तो तू अच्छा भला मनुष्य दिखाई देता है, पर लक्षण तो तेरे सब पशुओं जैसे ही हैं। पशुओं की भांति तू भी बोलता, चलता, खाता, पीता, एक घर में रहता है और दूसरा जंगल में जाता है। इस प्रकार सवेरा होता है, रात आ जाती है, काल बीतता है। सो, पशुओं के सब लक्षण मिलते हैं, केवल एक सींग नहीं है।

तूं ठगि कै—तू तो दूसरों को ठग कर धन जोड़ना चाहता है किन्तु तेरा घर दूसरे फोड़ रहे हैं अर्थात् विषय वासनायें तुझे नष्ट कर रही है। तू तो पाई पाई जोड़ रहा है किन्तु शरीर रूपी घर में आग लगते ही सब कुछ जल जायगा (तेरे साथ कुछ भी नहीं जायगा।) तुझे अपने उस मालिक का भी तो डर नहीं जो एक ही बार में सब निचोड़ लेगा। तू न तो स्वयं खाता है और न खर्चता ही है, यह तेरी चतुरता ही अन्त में तुझे खो देगी।

ये मेरे देश—तू समझता है कि देश विदेश, हाथी घोड़े, मकान, महल, धरोहर, माता, पिता, सम्बन्धी, पुत्र और पौत्र, दौहित्र और विलास करनेवाली स्त्रियां दिन रात सेवा करने वाले सेवक ये सब कुछ मेरे हैं, किन्तु तुझे इन सब को वैसे ही छोड़ना पड़ेगा जब कि तेल जल जायगा और बत्ती बुझ जायगी अर्थात् इस मानव शरीर के भोग पूरे हो जायेंगे और प्राणों का प्रकाश बुझ जायगा।

पृष्ठ २४. संत सदा—सज्जन तुझे सदा उपदेश भी देते रहते हैं और बाल भी तेरे सफेद हो गये हैं, (घर में तू अत्यन्त बूढा हो गया है) फिर भी अभी तक ममता नहीं छोड़ता है। अब तो मृत्यु भी आकर संदेश दे रही है। हे मूर्ख ! आज कल में ही उठ जाना है, तेरे देखते देखते कितने ही चले गये हैं। अब भी भगवान का स्मरण क्यों नहीं करता ? अरे जरा सोच तो सही, इस ससार में सदा कौन रहेगा ?

चेतत क्यों न हे मूर्ख ! अभी भी संभलता क्यों नहीं ? क्यों ऊंघ रहा है ? तेरे सिर पर सदा काल गर्जता रहता है। जब शरीर रूपी गढ़ के सब द्वार रोक लिये जायेंगे तब तू किस गली से भागेगा ? जब (यमदूत) अचानक आकर तेरे केश पकड़ लेंगे और तुझे पाकर झकझोरने लगेंगे, जब अन्त समय में मुन्डों से मुन्ड टकराते हुए बजने लगेंगे, ऐसे समय में तेरा कौन सहायक होगा ?

वे अवना—अब भी हाथ कान, नाक, मुंह, आंख, जिह्वा, पांव, नख, सिर और असंख्य रोम आदि सब अङ्ग वैसे के वैसे ही है और शरीर भी वैसा ही पड़ा दिखाई देता है किन्तु एक (आत्मा) के बिना सब शून्य दिखाई देता है। कोई भी नहीं जानता कि यह बोलता हुआ पक्षी (प्राण) किधर उड़ गया ?

नैननि की- आंखों की पलक झपकते ही पल, छण आधी घड़ी पहर, दोपहर, सांझ, भी बीत गई और रात हो गई। आज भी गया, कल भी गया, परसों, तरसों और भी कई दिन बीत गये। इस प्रकार सारी आयु ही बीतती जा रही है किन्तु यह तृष्णा दिनों दिन नई हो रहीं हैं।

तीनहु लोक—इस तृष्णा ने स्वर्ग पृथ्वी और पाताल तीनों लोकों का आहारकर डाला, सातों समुद्रों का पानी पी गई, फिर भी यह जहां तहां और नई वस्तु हड़पने की ताक में फिरती रहती है। आंखें निकाल निकाल कर प्राणियों को डराती है, दांत दिखाती है, जीभ हिलाती है, इसलिए मैं समझता हूं कि यह डायन है। इसे खाते खाते कितने ही दिन हो गये फिर भी यह तृप्त नहीं हुई।

कूप भरे—वर्षाऋतु में कुएं, बावड़ी, तालाब, कोठियां, घड़े, मटके, घर, बाजार, खाई, खन्दक आदि सब कुछ भर जाते हैं किन्तु यह पेट कभी नहीं भरता। इसका खड्डा सबसे बड़ा है। यह सदा खाली का खाली ही रहता है। भगवान ने यह कैसा खड्डा बना दिया !

पृष्ठ २५ आपुन काज—दुष्ट लोग अपना काम बनाने के लिये दूसरों का काम बिगाड़ देते हैं। उनसे भी बड़े दुष्ट वे हैं जो अपना काम बने या न बने दूसरे को तो हानि पहुँचा ही देते हैं। उनसे भी भयंकर नीच पुरुष वे हैं जो अपना भी बिगाड़ते हैं और दूसरों का भी बिगाड़ते हैं, इस प्रकार दोनों घरों को चौपट कर देते हैं। इस प्रकार दुष्टों की दुष्टता देखते ही बनती है। ऐसी कौन सी बुरी बात हैं जो दुष्ट नहीं कर सकता ?

सर्प डसे—सांप का काटना सुनकर भी मुझे कुछ शान्ति ही मिलती है बिच्छु के काटने को भी मैं भला ही मानता हूं, सिंह भी खाजाए तो कुछ डर नहीं और हाथी भी मार डाले तो कोई हानि नहीं, आग में जलने, पहाड़

से गिरने और पानी में डूबने का भी मुझे कुछ भय नहीं। इसी प्रकार और सब दुख तो अच्छे हैं किन्तु दुष्ट के साथ सम्बन्ध को कभी भला मत समझो।

स्वान कहूँ कि—इस मन को क्या कहा जाय? कुत्ता, गीदड़ बिल्ली, चमार, डोम या भांड़, चोर या लुटेरा, ठग या जार इनमें से इसे किसकी उपमा दी जाय? इस लिए अधिक क्या कहें? इस मन की तो गति ऐसी ही दिखाई देती है।

कैवर—हे मन! तू कितनी ही बार तो कंगाल बनकर दसों दिशाओं में भीख मांगता हुआ भटकता फिरा और कितनी ही बार सिर पर छत्र धारण कर कामिनियों के साथ झूले झूलता रहा। कई बार तू अत्यन्त क्षीण और उदास हो गया, फिर कई बार अत्यन्त सुख पाकर फूला न समाया। अरे मन! तुझे कितनी बार समझाया, फिर भी न जाने तू कितनी गलियों में और मार्गों में भूलता ही रहा।

जो मन नारि—यदि यह मन स्त्रियों की ओर देखता है तो स्त्री रूप हो जाता है और किसी पर क्रोध करता है तो क्रोध रूप हो जाता है। यदि यह माया की रट लगाता है तो मायामय बनकर माया के कूप में डूब जाता है और यदि यही मन ब्रह्म-ज्ञान में लीन हो जाता है तो ब्रह्म स्वरूप हो जाता है।

गेह तज्यो—घर बार और स्नेह सम्बन्ध छोड़ कर शरीर को भस्म लगा कर सजा लिया। वर्षा में सिर पर मेंह, सर्दियों में ठंड सह ली धूप में पंचाग्नि तपा ली और वृक्ष के नीचे ही पड़े रहे और इसी प्रकार अनेक कष्ट सह कर कुशासन के ऊपर आसन भी जमा लिया। आशा तृष्णा को वश में न कर सके।

पृष्ठ २६. कोउ भया—कोई केवल दुग्धाहारी बना हुआ है, तो कोई अलोना अन्न ही खा रहा है, कोई बड़े वाद विवाद करते हैं तो कोई चुप चाप मौन साधे बैठे हैं, कोई दिन रात अनेक कष्ट देने वाली तपस्याओं में लगे हुए हैं तो कोई प्राणायाम की साधना कर रहे हैं। इतना सब कुछ करने पर भी बिना अज्ञान के नष्ट हुए कोई भी व्यक्ति सिद्ध नहीं बन सका अर्थात् सिद्धि को नहीं प्राप्त कर सका।

भेख धरयो—साधुओं का वेश तो धारण कर लिया पर उस ब्रह्म के

रहस्य को न समझ सके, इसलिए उसके रहस्य को जाने बिना दुःख ही दुःख पाओगे। भूखे मरने, नींद को छोड़ने और अन्न त्याग कर फल, पत्ते खाने तथा इसी प्रकार के अन्य अनेक उपाय करने पर भी कुछ हाथ न आयगा। हे मूर्ख! इस मानव शरीर को व्यर्थ में खो रहे हो। बिना ब्रह्म के पछताओगे।

आपने आपने—यों तो यज्ञ, व्रत, तीर्थ, दान, पुराणों की अनेक प्रकार की कथा, तथा मनुष्य की बुद्धि को चकित करने वाले करोड़ों अन्य उपाय सभी अपने अपने स्थान पर प्रशंसनीय है और सभी बातें ठीक हैं किन्तु ज्ञान के बिना वास्तविक परमानन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती। भूलने के लिए तो अनेकों गलियां हैं।

पूरण काम— वह प्रभु सदा पूर्ण काम है अर्थात् उसे किसी प्रकार की कोई इच्छा नहीं, सुख का वह भंडार है, फिर भी निर्विकार और सृष्टि रचयिता है। साथ ही वह सबका सेवक भी है और कीड़ी से लेकर कुन्जर तक को आहार देता है। सब दुख-दरिद्र को वह दूर करने वाला है, उसे प्रातः सायं प्रत्येक की प्रति समय चिन्ता है। सुन्दरदास कहते हैं कि जो लोग ऐसे प्रभु को छोड़कर दूसरे की उपासना करते हैं, उनका मुंह काला होगा।

सोवत सोवत— हे दुष्ट! तू सोते २ सदा के लिये सोगया और रोते-रोते अनेकों बार रोता रहा। धन को छिपाते २ सदा के लिये छिपा दिया और खोते २ सब कुछ खो दिया, देखते देखते सब दिन बिता दिये और बोते २ तूने विष की बेलें बो डालीं। ढोते २ अनेक प्रकार के बोझ ढो डाले पर उस सुन्दर प्रभु का तूने भजन न किया।

देखत देखत—ज्ञानी पुरुष ने देखते २ उस प्रभु के पास पहुँचाने वाले मार्ग को देख ही लिया और समझते २ उसके रहस्य को समझ ही लिया। दिखाई देते २ उसे सब वस्तुयें दिखाई देने लग पड़ी और गाते २ गोविन्द के गुण गालिये। शुद्ध होते २ अत्यन्त शुद्ध हो गया और तपते २ सोने के समान निखर आया। निरन्तर जागते रहने पर सदा के लिये जाग गया और इस प्रकार उस परम सुन्दर आत्म तत्व को प्राप्त कर लिया।

पृष्ठ २७. जा दिनते—जिस दिन से सत्संग मिला है उसी दिन से भ्रम नष्ट हो गया। जब संतों ने अद्वैत का ज्ञान प्राप्त करा दिया तो अन्य

सब उपाय थककर निकम्मे सिद्ध हो गये। अब जब कि अमूल्य रत्न हाथ में आ गया है तो तुच्छ कांच को कौन हाथ लगावे? अब जब कि शुद्ध ज्ञान के सूर्य का प्रकाश हो गया है तो अज्ञान की अन्धकार पूर्ण रात्रि भला यहां कैसे ठहर सकती है?

आपुने भावतें—यह आत्मा अपनी भावना के अनुसार ही भ्रम में भूलकर अभिमान में देह को अपना रूप समझती हुई देह-स्वरूप हो गयी है। अपनी ही भावना से कभी अत्यन्त चंचल तो कभी स्थिर बुद्धि वाली हो जाती है। अपनी भावना से ही कभी अपने स्वरूप को भूल जाती है तो कभी आत्म-रूप का ज्ञान प्राप्त कर लेती है, जैसा जैसा इसका भाव होता है, यह जीव वैसा ही बन जाता है।

जा घट की—यह चैतन्य आत्मा जिस शरीर के अनुरूप होती है, उस शरीर में वैसी ही दिखाई देती है, हाथी के शरीर में हाथी स्वरुप, तो चींटी के शरीर में चींटी के समान तथा सिंह के शरीर में सिंह के समान। यह कीश (बन्दर) के शरीर में इन्हीं प्राणियों के समान दिखाई देती है। यह आत्मा जैसी जैसी उपाधि ग्रहण करती है, सिर से पैर तक वैसी ही वैसी दिखाई देने लगती है।

जैसे हि पावक--जिस प्रकार अग्नि लकड़ी के संयोग से एक स्थान पर एकत्रित लकड़ी के समान रूप वाली हो जाती है, वह लम्बी लकड़ी में लम्बी और चौड़ी लकड़ी में चौड़ी दिखाई देती है और इस प्रकार अपने रूप को प्रकाशित करती है, जब जला देती है तो और की और (काला) ही हो जाती है, वैसे ही यह चैतन्य आत्मा अपने आप अपने स्वरुप को नहीं पहचान पाती (और का और समझती है)।

ज्यों कोउ-जिस प्रकार कोई कुयें में झांककर बोले तो कुयें में से भी वैसी ही प्रतिध्वनि आती है. जिस प्रकार हवा के लगने से जल के हिलने पर उसमें पड़ा हुआ प्रतिबिम्ब भी हिलता है, इसी प्रकार यह आत्मा भी भ्रम से शरीर प्राण और मन के किये हुये कार्यों को यह समझ बैठती है कि यह कार्य मैंने किये हैं और इनका फल मुझे प्राप्त हो रहा है। सुन्दरदास कहते हैं कि यह एक बड़ा विचित्र पेच पड़ा हुआ है, इसलिये यह आत्मा भ्रम में पड़ कर अपने आप ही को भूल गयी है। भाव यह कि आत्मा को निर्लेप, निर्विकार

और अकर्ता है, बुद्धि के संयोग से, मन, प्राण, इन्द्रियां आदि कर्म करते और फल भोगते हैं, किन्तु जिस प्रकार किनारे पर खड़े हुए पुरुष की स्थिर परछाईं भी हिलते हुए पानी में हिलती हुई सी दिखाई देती है, उसी प्रकार बुद्धि में प्रतिविम्बित आत्मतत्व बुद्धि कार्यों को अपने आप में आरोपित कर लेता है और अपने को ही कर्ता समझ बैठता है।

सूत्र गरे—यह गले में धागा (यज्ञोपवीत) पहन कर द्विज हो गए किन्तु ब्राह्मण होकर भी ब्रह्म को न पहचान पाए,। सिर पर छत्र धारण कर क्षत्रिय बन कर हाथी, घोड़े और पैदलों में ही अनुरक्त रह गए, अथवा शरीर की अवस्था को देखते झूठा व्यापार ठानकर वैश्य बन गए और इस क्षुद्र शरीर के उपासक बनकर कभी शूद्र बन गए पर अपने आत्मरूप को नहीं पहचान सके।

पृष्ठ ४८–ज्यौंवन—जिस प्रकार एक अनन्त नाम और जाति वाले अनेक वृक्षों के कारण अनेक रूप धारण कर लेता है अथवा एक ही जल बावड़ी, तालाब और कुयें आदि अनेक रूप का दिखाई देता है अथवा एक अग्नि दीपक, लालटेन या मशाल आदि में अनेक प्रकार से जलती हुई विभिन्न रूप से प्रकाशित होती हैं, इसी प्रकार वह एक समरस अखण्ड ब्रह्म, भेद बुद्धि के कारण खण्डित या अनेक रूप में दिखाई देता है, अतः इस भेद बुद्धि को नष्ट कर देना चाहिए।

द्वन्द्व विना—जिस हृदय में अनन्त आत्मज्ञान का प्रकाश हो गया है वह सुख दुखादि द्वन्द्वों से किसी प्रकार प्रभावित हुए विना पृथ्वी पर निर्विकार भाव से विचरण करता हैं। उसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, अपने पराये, योग, भोग, त्याग, संग्रह आदि से कुछ प्रयोजन नहीं रहता और तो और उसे अपने शरीर को ढकने या उघड़े रहने की चिन्ता नहीं होती। ऐसे आत्म ज्ञानरूपी ज्ञान का तो मार्ग ही निराला है। इसके रहस्य को कोई नहीं जान सकता।

कवित्त

काहू सों—जिसे किसी से क्रोध या संतोष, राग या द्वेष, वैर या छल कपट या वाद विवाद, या दुःख अथवा आसक्ति या पक्षपात, दुर्वचन या कुछ

भी लेन देन नहीं है और जिसे ब्रह्म विचार के सिवा कुछ भी अच्छा नहीं लगता किसी दूसरे झंझट में नहीं फंसता वही ईशों का भी ईश हमारा सच्चा गुरुदेव है।

पृष्ठ २६. पांव रोपि—वास्तव में सच्चे वीर तो वे ही हैं जो कि जहां पर हाथी-घोड़े गर्ज रहे हों और सामने सेनायें डटी हुई हों, वहां भी पांव जमाये रहें, जब कि युद्ध के नगारे बज रहे हों, ऐसा मारू राग अलापा जा रहा हो, जिसे सुनते ही कायरों के होश हवास छूट जायें, बर्छियां चमक रही हों, ऐसे भयंकर युद्ध में जो शूरवीर डटे रहते हैं, वे ही तो सच्चे वीर हैं और अपने घर में तो सभी शूर कहलाते हैं।

जल को सनेही—पानी की प्रेमिका मछली उससे बिछुड़ते ही प्राण त्याग देती है और सांप भी मणि के बिना जीवित नहीं रहता। संसार में स्वाति बूंद के सीप और चातक प्रेमी प्रसिद्ध हैं। सूर्य का प्रेमी तालाब का कमल है और जिस प्रकार चन्द्रमा का प्रेमी चकोर है, उसी प्रकार मनुष्य को भी एकमात्र प्रभु से सच्चा प्रेम लगाकर फिर किसी दूसरे की ओर देखकर कभी आकृष्ट नहीं होना चाहिये।

घेरिये तो—यह मेरा मन रूपी पुत्र बड़ा ही विचित्र है। यह रोकने पर रुकता नहीं, समझाने पर समझता नहीं, नीति अनीति, शुभ अशुभ कुछ नहीं देखता और उचित अनुचित सब बातें पल भर में कर डालता है। इसे गुरु की, सज्जनों की, लोग या वेद की मर्यादा की किसी की कुछ शंका नहीं। किसी की कुछ मानता नहीं और न किसी से डरता ही है। इसे किस प्रकार समझाया जाय, इसका स्वभाव भी तो कुछ समझ में नहीं आता?

बोलिये तो—बोलना तो तब चाहिए जब बोलने की प्रतिभा हो अन्यथा मौन ही रहना ठीक है। कविता तो तब बनायें जब कि काव्य निर्माण की शक्ति तथा व्युत्पत्ति हो ताकि उस कविता में तुक छंद और अर्थ सभी कुछ अलौकिक दिखाई दें। गाना तो तब चाहिये जब गाने योग्य गला हो, जोकि कानों में पड़ते ही मन को मुग्ध कर दे, जिसमे न तो तुक मिलती हो, छन्द भी

भंग होता हो, अर्थ भी असम्बद्ध हो ऐसी तुक बन्दी कभी नहीं करनी चाहिये।

पृष्ठ ३० – धूलि कैसो धन—जो व्यक्ति धन को धूलि के समान संसारिक सुखों को शूल के समान, अच्छे भाग्य को भूल के समान, और सांसारिक प्रेम को अन्त के समान, प्रभुत्व को पाप के समान, सन्मान को शाप के समान, बड़ाई को विच्छू के समान, नारि को नागिन के समान, इन्द्रलोक (स्वर्ग) को अग्नि के समान, ब्रह्म लोक को विघ्न के समान, कीर्ति को कलंक समान और सिद्धि को ठगने के समान त्याज्य समझता है और जिसे किसी प्रकार की भी कोई वासना नहीं है, सुन्दरदास उस महापुरुष को प्रणाम करते हैं।

जगत में आइ के—हे मनुष्य तू ने इस संसार में आकर उस जगदीश को जो इस जगत का रचयिता और पालन करने वाला है भुला दिया। तुझे तो रात-दिन दूसरी ही चिन्तायें पड़ी हुई हैं, उनके लिये तू अनेक प्रकार के प्रयत्न करता रहता है। इधर उधर भटक कर थोड़ी बहुत कमाई कर लाता है, कुछ भी धैर्य या संतोष धारण नहीं करता सुन्दरदास कहते हैं कि एक प्रभु पर विश्वास किये बिना तू शठ व्यर्थ में इधर उधर पच पच के मर रहा है।

बनजारा खन्ड

शब्दार्थ

पृष्ठ ३६—बनजारा—व्यापारियों का समूह। सींघल द्वीप—सिंहल द्वीप। बइपरा—व्यापार। नशट—नष्ट। रिनि—ऋण। मकू—शायद। नांघि—लांघ कर। हाट—बाजार। सुठि—सुन्दर, बहुत। वाणिज्य—व्यापार। ओनाही—देखता। बिहासना—सौदा। बिहोर—लौटना, प्रस्थान। सांठि—पूंजी सुठि—सुन्दर। झुरई—झुलसता है, दुखी होता है। ठाढ़—खड़ा हुआ। कहउं—क्यों। मूर—मूल (धन)। बाट—मार्ग। सिखाओन—शिक्षा। मीचू—मृत्यु।

पृष्ठ ३७—बेवहारिया—व्यवहार करने वाला साहूकार। जऊं—जब। रोकिहि—रोकेगा। बारू—द्वारा। छूछे—खाली। सत—सत्व या साहस। समुद—समुद्र बिश्राधु—व्याध, बहेलिया। पखंग—पक्षी। मदारे—मदारी। नहूं—क्या। परवाने—पतंगे। परेवा—पक्षी। डालि—डालकर। मंजूसा—पेटी। दहूं—नजाने। राता लाल। सांव—श्याम। दुहि—दो। गीवा—गर्दन। सुठि—सुन्दर। गिऊ—गर्दन। चीन्हा पहिचाना।

पृष्ठ ३६—बिनवा—प्रार्थना की। चिरिहार—चिड़िहार बहेलिया। परावा—पराया। जीउ—प्राण। पोखई—पुष्ट करते हैं। खादु—खानेवाला। धरई—पकड़ते हैं। बेसाहा—खरीद लिया। चित्रसेन—चित्रसेन, चित्तौड़ का राजा (रतन सिंह का पिता)। शिउ—शिव या शव। डहन—पंख, पर। अमिरस—अमृतरस। रजाएसु—राजाज्ञा। राजादेश—राजा की आज्ञा। बिपर—विप्र, ब्राह्मण। अउधारा—की। भिरारा—पृथक, अलग। विसुआसी—विश्वासघाती। नाए—झुकादी।

पृष्ठ ३८—भूइ—भूमि। बइरी—बैरी। मवन—मौन। जऊलगि—जब तक। मैरवऊं—मिला दूं। नाऊं—नाम। बाउरा—बावला, पागल।

बनिजारा खण्ड

पृष्ठ ३६—चितउर गढ़—चित्तौड़ गढ़ के व्यापारियों का एक समूह व्यापार के लिये सिंहल द्वीप को चल पड़ा। जब व्यापारी चलने लगे तो उनके साथ एक दीन हीन भिखारी ब्राह्मण भी चल पड़ा। इस विचार से कि वहां जा कर शायद कुछ बढ़ जाय, उसने (किसी से) ऋण निकलवा लिया। वह मार्ग बड़ा कठिन था, अतः बहुत कष्ट झेलने पड़े। (किन्तु अन्त में) समुद्र को लांघ कर (वे लोग) उस द्वीप में पहुँच गए। वहां के बाजारों को जब देखा तो उन का कुछ भी ओर छोर दिखाई न दिया, वहां सभी वस्तुएं बहुत परिमाण में थीं। कोई भी थोड़ी न थी। वहां का व्यापार बहुत ऊंचा था। वहां बड़े धनी व्यापरी ही (कुछ लाभ) प्राप्त कर सकते थे। थोड़ी पूंजी वाले निर्धन तो बेचारे मुंह ताकते ही रह जाते। वहां लाखों करोड़ों की वस्तुयें बिकती थीं।

हजारों की ओर तो कोई देखता भी न था।

सब ही लीन्ह—सभी व्यापारियों ने सौदा खरीद लिया और अपने घर की ओर प्रस्थान किया। बेचारा ब्राह्मण यहां क्या ले सकता था, क्योंकि उस की गांठ में तो पूंजी बहुत थोड़ी थी।

झुरे ठाढ़—वह खड़ा २ मन ही मन झुलस रहा है और कहता है कि (मैं) यहां क्यों आया? उसे कुछ भी सौदा नहीं मिला, इस लिए पछता रहा था मैं तो इस बाजार से लाभ होगा यह जान कर आया था किन्तु मूल भी गवा कर, उसी राह लौट रहा हूं। मैंने भी क्या मरने को (सर्वनाश की) सीख सीखी, जो कि मरने के लिए यहां आ गया। मेरी तो मृत्यु ही लिखी हुई थी।

पृष्ठ ३७—अपने चलत—मैंने अपने आप यह बुरा व्यवसाय कर डाला था, पर यहां तो कुछ भी लाभ दिखाई नहीं देता। प्रत्युत मूल धन भी नष्ट हो गया है। मैंने उस (पूर्व) जन्म में ऐसा क्या घुना हुआ बीज बोया था, जो कि (यहां) घर की पूंजी भी खाकर जा रहा हूं जिस व्यापारी से मैंने व्यवहार किया था अर्थात् रुपया उधार लिया था, अब यदि वह घर का द्वार रोक लेगा तो मैं उसे क्या ले जा कर दूंगा? अब मैं खाली हाथ घर में कैसे घुसूंगा और उसके पूछने पर क्या उत्तर दूंगा।

साथी चला—उसका साथी व्यापारी चल पड़ा। तब उस बेचारे का सत्व (शक्ति साहस) नष्ट हो गया। अब अनेकों समुद्र और पहाड़ बीच में पड़ गए अर्थात् वह अपने साथियों से बिछुड़ गया। वह सोचता है कि मैं आशा और निराशा के बीच में झूलता फिर रहा हूं, हे भगवान्! अब तो तू ही सहारा दे। ॥१०॥

तब हिं बिआध—इतने में एक व्याध ऐसा तोता लेकर आया जिसका सोने के समान वर्ण बड़े ही अनुपम रूप से शोभित हो रहा था। वह उस तोते को बाजार में लेजा कर बेचने लगा, जिसका मूल्य रत्न और माणिक्य थे, महाजनों के भंडार-खाने में पड़े हुए इस पक्षी (तोते) को भला वहां कौन पूछता? इस लिए ग्राहकों को चलते देखकर वह मन मार कर चुप खड़ा हुआ था। (तब) ब्राह्मण ने आकर उस तोते को पूछा कि वह कुछ गुणवान है य

बिलकुल खाली निर्गुणी है। हे पक्षी जो गुण तेरे पास हैं, बतला। गुणों को अपने ही हृदय में नहीं छिपाना चाहिये। मैं और तू दोनों ही ब्राह्मण हैं। जाति वाला अपनी जाति वाले से सब कुछ पूछ लेता है। यदि तू पंडित है तो वेद सुना। बिना पूछे तो भाई किसी का भेद जाना नही जाता।

हौं ब्राह्मण—मैं ब्राह्मण हूं और पंडित भी हूं, इस लिये तू अपने गुण मुझे बता। (सामान्यतया जितना लाभ होना चाहिये) पढ़े हुए के सामने (अपने गुण कहने से) उससे दुगुना लाभ होता है ॥११॥

तव गुन—(तब तोता कहने लगा कि) हे ब्राह्मण देव ! मुझ में गुण तो तब थे जब कि पिंजरे से छुटा हुआ मैं स्वतंत्र पक्षी था। अब भला मुझ में कौन सा गुण रह गया है, जब कि यह व्याध मुझे पिंजरे में डाल कर बेचने के लिये ले आया है। पंडित तो वह है, जो कभी (अपने को बेचने के लिये) दुकान या बाजार में नहीं जाता। अब तो मैं बिकने ही वाला हूं (अतः बिकने के भय से) अपना सब पढ़ा लिखा भूल गया हूं। इस बाजार में दो मार्ग दिखाई देते हैं। देखें भगवान् किस राह ले जाता है। रोते हुए मेरा मुख लाल हो गया है और भय के मारे शरीर भी पीला पड़ गया है। मैं अपनी क्या बात बताऊं ? मेरी गर्दन में लाल और काले दो कांठें (तोते की गले की धारियां) हैं वे मानो दो फन्दे हैं, इस लिये, मेरा जीव (प्राण) बहुत डर रहा है। अब मैंने अपने गर्दन के इन फन्दों को पहचान लिया है, देखें अब ये फन्दे क्या किया चाहते है ?

पढ़ि गुनि— मैंने बहुत कुछ पढ लिख कर देख लिया है, किन्तु इस समय तो मेरे सन्मुख मृत्यु का भय उपस्थित हो रहा है। संसार में सर्वत्र अंधकार ही अंधकार दिखाई दे रहा है, इस लिये मेरी बुद्धि नष्ट हो गयी है और मैं (अपना पढ़ा लिखा) सब कुछ भूल गया हूं। ॥१२॥

पृष्ठ ३८ सुनि ब्राह्मण— यह सुन कर ब्राह्मण ने बहेलिये से प्रार्थना की कि इस पंक्षी पर दया कर और इसे मत मार। हे निष्ठुर ! तू इस के प्राणों का वध क्यों करता है ? तुझे हत्या करने से भय नहीं लगता ? तूने इस पक्षी का क्या दोष देखा ? बता। जो मांस खाना चाहता है। बड़ा निष्ठुर और दुष्ट है। इस संसार में आते हुये भी मनुष्य रोता है और जाते भी रोता ही जायेगा

तब भी वह सुखोपभोग तथा लोभ को नहीं छोड़ता। और यह भी जानता है कि यह शरीर नष्ट होगा—तब भी दूसरे के मांस से अपने शरीर को पुष्ट करता है। यदि इस प्रकार के दूसरे का मांस खाने वाले लोग न होते तो व्याध पक्षियों को क्यों पकड़ते फिरते? क्यों व्याध पक्षियों को नित्य पकड़ते हैं उन्हें बेचते हुये मन में लोभ नहीं करते।

ब्राह्मन सुआ—उस ब्राह्मण ने तोते की बुद्धि तथा वेद ग्रन्थों (की वाणी) को सुन कर उसे मोल ले लिया और अपने साथियों के साथ आ मिला। इस प्रकार चित्तौड़ के मार्ग पर हो लिया। ॥१३॥

तब-लगि—तब तक चित्रसेन शिवलोक सिधार गया अथवा उसका शव सजा दिया गया और रत्नसेन उसका पुत्र चित्तौड़ का राजा बन गया। उसके सन्मुख यह बात चली कि सिंहल द्वीप से व्यापारी आ गये हैं उनके पास गजमुक्ताओं से भरी हुई सीपियां तथा अन्य अनेकों सिंहल द्वीप की वस्तुएं हैं एक ब्राह्मण ऐसा तोता लेकर आया है, जिसका अनुपम स्वर्ण के समान वर्ण शोभित हो रहा है। उसके कंठ में लाल और काले दो रंग के कंठी (धारियां) हैं। मानो उसके लाल सुन्दर पंखों पर सब शास्त्रों का पाठ लिखा हुआ है ...के दोनों लाल नेत्र भी सुशोभित हो रहे हैं। लाल चोंच हैं, बोलता हुआ मानो अमृत रस ही बरसाता है। उसके मस्तक पर तिलक और कंधे पर यज्ञोपवीत का चिन्ह है। मानो साक्षात् महाकवि व्यास अथवा पण्डित सहदेव (शुक देव) ही है।

बोलि अरथ—वह अर्थ युक्त ऐसी वाणी बोलता है जिसे सुन कर सब कोई तन्मय होकर सिर हिलाने लगते हैं। ऐसा वह अमूल्य तोता तो राजमहलों में ही चाहिये। ॥१४॥

भई रजासय...राजा की आज्ञा हो गयी और लोग तोता लाने के लिये दौड़ाए गये। इस पर तत्काल वह ब्राह्मण तोते को ले आया। ब्राह्मण ने आशीर्वाद दे कर प्रार्थना की कि मैं इस तोते को अपने से अलग नहीं करना चाहता किन्तु यह पेट बड़ा विश्वासघाती है। इसने सब तपस्वी और संन्यासियों को भी झुका दिया। कुशा का बिछौना भी न मिलने पर मनुष्य गर्दन के नीचे अपनी बांह डालकर (अर्थात् बांह का सराहना बनाकर) पृथ्वी पर ही

पढ़े रह सकते हैं। नैनों के बिना अन्धे होकर बिना देखे रह सकते हैं। गूंगे हो कर मुख से बिना बोले रह सकते हैं।

पुहुप ३६—बहिरा होने के कारण कानों से सुने बिना भी रह सकते हैं। (आंख कान, मुंह आदि ये सब इन्द्रियां अपने-२ गुणों या-धर्मों-देखना, सुनना, बोलना आदि-का त्याग कर सकती हैं।) किन्तु यह पापी पेट अपने गुण (रोटी भक्षण) के बिना नहीं रह सकता। यह बड़ा पापी पेट कभी सन्तुष्ट नहीं होता और बार २ द्वार २ घुमाता है।

सो मोंहि—वही भूख प्यास मुझे मांगने के लिये लाती है। यदि मनुष्य के ये भूख प्यास रूपी शत्रु न होते तो कौन किसी से कुछ आशा रखता ?

सुअइ असीस—तोते ने बड़ी मर्यादा के साथ राजा को आशीर्वाद दिया और कहा कि आपका प्रताप बढ़े और राज्य अखण्डित रहे। आप भगवान् (विष्णु) और ब्रह्मा के श्रेष्ठ अवतार हैं। आपका जैसा भाग्य, उसके अनुरूप रूप भी वन्दनीय है। यदि कोई किसी के पास किसी आशा से गया और निराश ही लौटा तो उसके लिये चुप रहना ही उचित है।

कोई यदि बिना पूछे या बुलावे ही बोल पड़े तो उसके वे शब्द मिट्टी के मूल्य के बराबर हो जाते हैं अर्थात् उनका कोई मूल्य नहीं रहता। पढ़-गुनकर और वेद-शास्त्रों के रहस्य जानकर पूछने पर ही बात कहनी चाहिये। कोई भी गुणी व्यक्ति अपनी प्रशंसा स्वयं नहीं करता, किन्तु जो व्यक्ति बिक रहा हो, वह कुछ कहना ही चाहता है अर्थात् उसे अपने बारे में कुछ कह ही देना चाहिये क्योंकि जब तक किसी के गुण प्रकट नहीं होते, तब तक उसके रहस्य को कोई नहीं जान सकता।

चतुर्वेद—मैं चारों वेदों का ज्ञाता पण्डित हूं और मेरा नाम हीरामणि है। मैं पद्मावती के संग रहता था, उसी के यहां सेवा करता था।

रतन सेन—रत्न सेन ने हीरामणि (के गुणों) को पहचान लिया और ब्राह्मण को लाख रुपये दे दिये। ब्राह्मण ने आशीर्वाद देकर अपने घर प्रस्थान किया और वह तोता राज मन्दिर में लाया गया।

तोते की भाषा (बोली) का मैं क्या वर्णन करूं ? वह धन्य है जिसने कि

उसका नाम हीरामणि रखा। राजा उसके मुख की ओर देखता रहता है। ऐसा प्रतीत होता है मानों हृदय पर मोतियों का हार पिरो रहा हो। वह जब भी बोलता है, उसके मुंह से मोती ही बरसते हैं, नहीं तो गूंगा होकर मौन साधे रहता है। मानों उसके मुख में अमृत ही भरा हुआ है। वह स्वयं सारे संसार का गुरु हो गया है और जगत् को शिष्य बना लिया है। गंधर्व सेन सूर्य और पद्मिनी रूपी चांद की कथा उसने कही। राजा ने उस प्रेम कथा को चित लगाकर ग्रहण कर लिया।

जो जो सुनइ—जो कोई उस प्रेम कथा को सुनता है, वही तन्मय होकर सिर हिलाने लग पड़ता है। राजा का भी उसके प्रति अगाध प्रेम हो गया। (लोग कहने लगे कि) ऐसा गुणी भी अच्छा नहीं। यह (प्रेम कथा सुना २ कर) किसी को पागल कर देगा।

अलाउद्दीन का चित्तौड़ पर आक्रमण

पृष्ठ ४०—होईजूद=शान्त होकर। डोलूं=डोलना भूकम्प। सरग=आकाश। पुहुमि=पृथ्वी। शकबंधि=शक संवत चलाने वाला। राहु=मछली शरन्धि=सैरन्ध्री (द्रौपदी)। साका=शाका (संवत्)। ओछा=तुच्छ। जनाई=प्रकट करके, अभिमान करके। छिताई=छत्र। टेकिही=पकड़ेगा। छेकिही=घेरेगा।

पृष्ठ ४०—मास=क्रोध। धाईक=दूत। इसकंदर=सिकन्दर। आगमन=पहले ही से। जावत=यावत् जितने भी। सकाना=डर गया।

पृष्ठ ४२—कमठ=पृथ्वी को धारण करने वाला कच्छप। बजाई=डंके की आवाज। चोट=ललकार कर। पयाना=प्रयाण। बारिघ=दरबार। दर=दल,सेना। सरह=टिड्डीदल। कटक=सेना। पलानई=दौड़ना,भागना। उमाहिं=उमड़ कर आते हैं। बाउर=बावला (पागल)तुरास=शीघ्र। लोहसार=कवच। साम=श्याम (काले)। सरग=आकाश। हाला=हिल गया। गयन्द=गजेन्द्र (हाथी)।

चापा=दब गया। हरऊ=हीरात।

पृष्ठ ४३-एराकिन=इराकी घोड़ों पर। लेजिम=धनुष। घालि=डाल कर पाखर=हाथियों की झूल। बेहर २=भिन्न २। जोजन=योजन (चार कोश)। हिय=हृदय। दरसाजा=सेना सजाकर। पाति=पत्र। मेढ=बांध।

पृष्ठ ४४-पुरहं=पूरा करो। वारि=जल। सिधाये गए। गाढ़ पड़े=विपति पडने पर। गरु=गुरु (भारी टेका= उठा रखा है।

पृष्ठ ४५-संचर=निकले। चांटिन=चींटी। धानु=धनुषधारी। भेरी=नगारा निशान=नगारे। वैरख=झुंड। कमाने=तोपें दारू=बारूद।

पाठहिं=भर देती है खाल=खड्डा।

पृष्ठ ४६-दारू=शराब और बारूद। तरिवन=तरौना और नीचे। लूक= लपट। अलक=बाल। गीठ=गरदन। दशन=दांत। चुरकुश=चूराचूरा। पराश=पलाश। धिकहिं=जल उठते हैं। झारा=लपट। जाम=जम गया। अन्तरिख=अन्तरिक्ष आकाश। डुंगवदि=दुर्ग किले या पहाड़। नियरावा= निकट आगया। कटक=सेना। लोहेमढा=कवचों से सज्जित। दिष्टि=दृष्टि। गज- जूहा=हाथियों का झुंड। रूहा=चढे। अध=नीचे। उरध=उपर। निशानी= झन्डे। धौराहर=धरहरा मीनार या अट्टालिका। रैनी=रात।

पृष्ठ ४७-पोखर=छोटा तालाब। संजोउ=तैयार। अकूत=अगणित। तुखार=घोड़ा। रीसी=क्रोध, ईर्षा। सनाहा=सन्नाह (कवच) घाले=डाले हुए। तुरङ्गम=घोडा। पाखर=हाथी घोड़ों की लोहे की झूलें। बीरा=पान का बीड़ा। वाहन=घोडा। उछाह=उत्साह। मयमन्त=मस्त। रजवारा=राजाओं। सेत= श्वेत।

पृष्ठ ४८-कुरुम=कूर्म। (कच्छप) कनक=सोना। भल्लपति=भाले लिए हुए सैनिक। असु=अश्व (घोड़े। जुझाऊ=युद्ध के। बजाई=ललकार कर। काढि= निकली। मसी=स्याही। अनी=सेना। नग=पर्वत। दुवौ=दोनों। ओनई= उमडते हुए। खिखिन्ध=किष्किन्धा।

झुझार=लडाकू। पेलें=भिड पड़ें। बिज्जु=बिजली। जुट्ट=यूथ, समूह।

पृष्ठ ४९ तराहिं=नीचे। दर=दल (सेना)। उपरहि=उखाडते हैं। गरब= मदजन। रुदिर=रुधिर (खून) निराहि=छिप जाते हैं। कांदा=कीचड़।

अछरी=अप्सरा । सायर=सागर । मलजावा=मासाहारी । विग=वृक (भेड़िया) माड़ों=विवाह का उत्सव, मण्डप । अनी=सेना पोखि=पुष्ट करके ।

पृष्ठ ५०—छेका रहा=घिरा रहा । अमराव=आमों के बाग । जहर=जौहर वह विधि जिसमें हजारों वीरांगनाएं एक साथ ही जल कर भस्म हो जाती थीं अरदास=प्रार्थना (पत्र) पछिम=पश्चिम हरेव=हीरात परावा=परावा आगसन=पहले से ही, अलफि=उजबक्कर, मेराव=मिलाव (सन्धी) भेऊ=भेद समदन=विदाई के समय के उपहार ।

अलाउद्दीन का चित्तौड़ पर आक्रमण

पृष्ठ ४०....राजाअस—अलाउद्दीन बादशाह के भेजे हुए सरजा नामक दूत ने आकर महाराज रत्नसेन से पद्मिनी की मांग की । इस पर रत्नसेन ने उसे अत्यन्त कठोर उत्तर दिया । तब फिर सरजा कहता है कि—

हे महाराज ! आप इस प्रकार क्रोध से लाल मत हूजिए । शान्त होकर (मेरी बात) सुनिए । जलकर (क्रुद्ध होकर) बात मत कहिए । मैं यहां मरने के लिए आया हूं । बादशाह ने भी मुझे यही जान कर भेजा है । (तुम अपने साथियों से पूछ कर देखो) शायद तुम्हारा भार बटाने के लिए और कोई प्रस्तुत न हो, अर्थात् युद्ध छिड़ जाने के लिए और कोई तैयार न हो, अतः पूछ लो और मुझे कल तक उत्तर दे देना ।

बादशाह अलाउद्दीन के प्रति आप ऐसे कठोर वचन न कहें । क्योंकि यदि वह आक्रमण कर देता है, तो संसार में भूकम्प हो जाता है । उस शूर (अलाउद्दीन) को आक्रमण करते कुछ देर नहीं लगती । उसमें ऐसा तेज है, जिससे आकाश पाताल तप जाते हैं । उसकी फूंक से पहाड़ भी उड़ जाते हैं, यह तेरा चित्तौड़ गढ़ तो उसके एक ही झोंके से राख हो जायगा, मिट्टी में मिल जायगा । (उसके आक्रमण कर देने पर) सुमेरु पर्वत भी दब जाता है, समुद्र भी फट जाता है, पृथ्वी कांपने लग पड़ती है । और शेष नाग के फण बोझ के मारे फटने लगते हैं ।

तासौं कौन —उससे लड़ाई कैसी ? तुम तो अपनी राजधानी खास

चित्तौड़ में जमे रहो और साथ ही चन्देरी भी ले लो। एक दासी पद्मिनी की क्या बात है? अर्थात् उसे अलाउद्दीन को दे दो।

जोपै घरनि—इस पर रत्नसेन कहने लगे कि, यदि घर की घरनी (गृहिणी) पत्नी ही चली जाय तो फिर चित्तौड़ से भी क्या लाभ? और चन्देरी का राज्य भी किस काम का? घर के लिये कोई प्राण भी लेने के लिये क्यों न तैयार हो तो भी योगी ही अपना घर दूसरे को सौंप सकता है अर्थात् सिवाय रमते राम के कोई प्राण जाने पर भी अपना घर छोड़ने को राजी नहीं होता, तो फिर घरनी की तो बात ही क्या?

मैं भी रणथम्भोर के महाराज हम्मीर के समान हूं, जिन्होंने अपने सिर अर्थात् सम्मान की रक्षा के लिये शरीर तक त्याग दिया अर्थात् अलाउद्दीन से युद्ध करते करते मारे गये। मैं रत्नसेन (अर्जुन के समान) प्रतिज्ञा का धनी हूं जिसने मच्छी को बेधकर द्रौपदी को जीता था। हनुमान के शरीर के समान मैं अपने कंधों पर भार उठा सकता हूं, और रामचन्द्र के समान समुद्र को भी बांध सकता हूं। संवत् चलाने वाले विक्रमादित्य की भांति मैं पराक्रम के कार्य कर सकता हूं। मेरी ऐसी वीरता के कार्यों को सिंहल द्वीप ने देख लिया है। मैं इससे तुच्छ नहीं हो गया, जो मुझे इस प्रकार लिख दिया। भला जीते सिंह की मूंछ को कौन पकड़ सकता है? भाव-यह है कि मुझ से पद्मिनी को लेना वैसा ही असम्भव है, जैसा कि जीते सिंह की मूंछ को उखाड़ना।

दरब लई—यदि वह बादशाह रुपया पैसा चाहता है तो मैं उसकी बात मान सकता हूं और कोई सेवा कर सकता हूं। किन्तु यदि वह पद्मिनी चाहता है, उसके लिये तो उसे सिंहल द्वीप में जाना होगा (चित्तौड़ की पद्मिनी तो उसे कभी प्राप्त हो नहीं सकती।)

बोलुन राजा—तब दूत कहने लगा कि हे महाराज! आप इस प्रकार अपनी बड़ाई करते हुए उत्तर मत दीजिये। अलाउद्दीन ने देवगिरि तथा अन्य कई देश जीत लिये हैं। सातों द्वीप के राजा उसके आगे सिर झुकाते हैं। उनके साथ उनकी स्त्रियां भी आती हैं। सारा संसार जिसकी सेवा करता है, उसे सिंहल द्वीप लेते कितनी सी देर लगेगी? तुम अपने मन में यह भी मत समझ बैठो कि यह चित्तौड़ गढ़ तुम्हारे पास है। सब कुछ उसी

(अलाउद्दीन) का है, तुम्हारा कुछ नहीं। वह जिस दिन आकर इस गढ़ी पर आक्रमण कर देगा, इसे घेर लेगा, वह तुम्हारा सर्वस्व ले लेगा। तब उसका हाथ कौन पकड़ सकेगा?

पृष्ठ ४१—मिट्टी के सिर में पड़ जाने के कारण, सिर नहीं कटवाना चाहिये, अर्थात् तुच्छ पद्मिनी के लिये प्राण न दे। अन्यथा, फिर, अलाउद्दीन के क्रुद्ध हो जाने पर वह सिर राख में मिल जायगा। इसलिए, तुम्हें अपना जीवन प्रिय है, तो बादशाह की सेवा करो, अन्यथा उसे क्रोध हो जायगा।

जाकर—पहले ही जिसका दिया हुआ जीवन तुम्हें प्राप्त है, उस अलाउद्दीन को आगमन पर आगे बढ़कर बार-बार प्रणाम करो। उसके कामों को क्या स्त्री क्या पुरुष सभी जानते हैं।

तुरकाजाइ—यह सुनकर, महाराज रत्नसेन कहने लगे कि दूत बादशाह सिकन्दर के समान भागते-भागते न मर जाय? कहीं अलाउद्दीन की भी सिकन्दर की सी दशा हो, जो अमृत सुनकर कदली वन को ओर गया किन्तु उसके हाथ वहां कुछ न आया और पछताता रहा और उस दीप में वह पतंग होकर गिर पड़ा, अग्नि के पर्वत पर पांव देकर जल गया? वहां की पृथ्वी तपे हुए लोहे के समान दृढ़ और उसकी लपटों से आकाश तपे हुए तांबे के समान लाल हो गया था। हाथ लम्बा कर उस तक पहुँचते ही प्राण देने पड़ गये। यह चित्तौड़ गढ़ भी वही पर्वत है, सूर्य्य के उदय के साथ ही अथवा सूर (अलाउद्दीन) के आक्रमण करते ही यह पर्वत अग्निमय हो जायगा। यदि वह सिकन्दर की समता करेगा, तो जिस प्रकार वह समुद्र में डूब गया था वैसे ही यह डूब जायगा। जिसने छल से राज्य को प्राप्त किया हो उसकी शीलता में भी छल या धोखे की शंका रहती है।

महूँ समुझि—मैंने भी यह समझ कर कि कभी अलाउद्दीन चित्तौड़ पर भी अवश्य आक्रमण कर देगा, पहले ही गढ़ में तय्यारी कर रखी है। अतः यदि उसे कल आना हो तो भले आज ही आकर आक्रमण कर दे (इसकी मुझे कुछ चिन्ता नहीं)।

सरजा पलटि—सरजा लौट कर बादशाह के पास आया और निवेदन

करने लगा कि हे जहांपनाह ! मैंने उसे बहुत समझाया, पर वह समझता नहीं है। आग में जलने वाला प्राणी किसी के समझाये नहीं समझता। वह जलकर ही रहता है। हे देव ! वह यों ही सरलता से सिर नहीं झुकायेगा। यदि सुलेमान (आप) आक्रमण करदें तो वह आपकी सेवा करना स्वीकार कर लेगा। यह सुनकर सुलेमान इस प्रकार क्रोध से रक्त हो गया, मानों ज्येष्ठ का सूर्य तप रहा हो। वह क्रोध से भर कर हजार किरणों से युक्त हो तपने लगा, मानों वह जिस ओर देखता था, उसी ओर जला देता था। हिन्दुओं का देवता भला क्या बल दिखा सकता है ? अब तो सुलतान से वह स्वर्ग में भी नहीं बच सकता। इस संसार में जिसने अपने मुख में आग भरली, उसने अपने साथ दोनों लोकों को भी अग्निमय कर दिया।

रनथंभउर—जिस आग से रणथम्भौर जलकर बुझ गया, वही मेरे क्रोध की अग्नि चित्तौड पर गिरेगी। एक बार यदि वह लग जायगी, तो फिर किसी के बुझाये नहीं बुझेगी।

लिखा पत्र—अलाउद्दीन ने अपने उमरावों को पत्र लिख दिये। उन्हें लेकर दूत चारों दिशाओं में दौड़ पड़े। जितने भी उमराव थे, उन सबों को तत्काल बुला लिया गया। युद्ध के निशाने पर डंका पड़ा, जिसकी आवाज को सुनकर इन्द्र भी डरने लगा सुमेरु पर्वत हिल उठा और शेषनाग भी व्याकुल हो गया।

पृष्ठ ४२—पृथ्वी कांप उठी, कच्छप तिलमिला गया, मानो समुद्र में मन्थन आरम्भ हो गया हो। बादशाह ने ललकार कर आक्रमण कर दिया है, संसार भर में यह चर्चा फैल गई। पहले दिन का प्रयाण तीस कोस पर हुआ। दरबार चित्तौड़ की ओर बढ़ा। जहां तक बादशाह का आक्रमण सुना गया, उड़ते हुए झंडे ऐसे आकाश तक छा गये, मानों लाल बादल उमड़ पड़े हो।

जहां तहां जो कोई सोया हुआ था वैसे ही अचानक जागकर चकित हो जाता है, और आकर बादशाह को सलाम कर सेना में सम्मिलित हो जाता है।

हस्ती घोड़—हाथी घोड़े और पैदल पुरुषों की सेना तथा ऊंट व खच्चर बड़ी तेजी से इधर-उधर बढ़ते जा रहे थे और सेना टिड्डी दल की

भांति आगे बढ रही थी। सिर और पूंछ को उठाये हुए चार दिशाओं में श्वास छोड़ते हुए (हांफते और हिनहिनाते हुए) क्रोध भरे घोड़े पागल (उत्पात समय की) वायु की भांति तेजी से उड़े चले आ रहे थे।

लोह सार—लोहे की झूलें पहने हुए हाथी काले बादलों की भांति गरजते हुए चले आ रहे थे। वे बादलों से भी अधिक काले थे, अंधेरे में तो कालेपन के कारण वे सर्वथा अदृश्य हो जाते थे। जिस प्रकार भाद्रपद की रात्रि दिखाई देती है वैसेही हाथियोंकी काली २ पीठ असमान तक लगी दिखाई देती थी वे इतने ऊंचे थे कि उनकी पीठ आकाश को छू रही थी जब ऐसे सवा लाख हाथी चलने लगे तो पर्वतों के साथ सारा संसार कांप उठा। इस प्रकार मदमाते हाथी चले आ रहे थे। मार्ग में जो किसी दूसरे हाथी की गंध पालेते तो वे उसी की ओर लपक पड़ते। उनका सिर आकाश में जा लगा और पृथ्वीतल (उनके भार से) दबने सा लगा। उनके चलने से संसार में भूचाल का अनुभव होने लगा। उनके पैरों के भार से दबने के कारण गढा पड़ जाने से पृथ्वी में से पानी निकल आता था।

चलत-हस्ति—हाथियों के चलने पर जगत् कांप उठा और पाताल में शेष नाग भी दब गया। पृथ्वी को उठाने वाला बेचारा कच्छप भी हाथियों के भार से बैठ गया।

चले जो उमरा—जो अमीर उमराव उस सेना के साथ चल रहे थे, उनके बानों (वेषभूषा आदि) का कौन वर्णन कर सकता है? खुरासान, और हीरात वाले चल पड़े। गौड़ देश और बंगाल वाले भी बचे न रहे। रूम, शाम, काश्मीर, मुल्तान, और ठट्ठा के सुलतान भी बाकी नहीं रहे जितने भी बड़े २ मुसलमान उमराव थे वे सब यथा मांडू, गुजरात, पटना तथा उड़ीसा के भी सरदार हाथी घोड़े लेकर चल पड़े। कामरूप, कामता और पिंडवा आदि देश तथा देवगिरि और उदयगिरि वाले भी आ पहुंचे। कुमाऊं का सरदार अपने पहाड़ी लोगों को लेकर चल पड़ा। खस, मगर और दूसरे जितने भी (देशों के) नाम हैं वे सब चल पड़े।

पृष्ठ ४३ उदय-अस्त—उदयाचल पर्वत से लेकर अस्ताचल पर्वत

तक सातों द्वीप और नौ खण्ड के जितने भी देश हैं, उन सबके शासक वहां आ जुड़े। उन सबके नाम भला कौन जानता है ?

धनि सुलतान—सुलतान अलाउद्दीन वास्तव में धन्य हैं सारा संसार जिसका है, वही ऐसी विशाल सेना तैयार कर सकता है। सभी मुसलमान उसे अपना सिरताज कहते हैं। अब सेना में तबले बजने लगे और बाजे पहने जाने लगे। लाखों युद्ध वीर, ज'पुर नामक तोप, साधारण तोप तथा धनुष बाण लिए हुए, जीभ खोले हुए कांसी से गढ़े हुए लेजिस-धनुष धारणकर ईराकी घोड़ों पर चढ़ गये। सजेधजे उनके कवच कांच से भी अधिक प्रकाश-मान् व चमकदार थे। विविध रंग की वेष और भूषाओं से सुसज्जित भांति २ की वह सेना पंक्तियां बांध कर चल रही थी। उन सबकी बोलियां भी भिन्न २ थीं। हे भगवान्, यह सेना न जाने किस खान में से खोदकर निकाली गई हैं ?

सात-सात—एक दिन में वह सेना सात योजन (२८ कोस) चलती थी। सेना का अग्रभाग जहां से प्रस्थान करता, पिछला भाग वहीं पर आकर पड़ाव डालता था अर्थात वह सेना २८ कोस लम्बी थी।

डोले गढ़—(आक्रमण के इन वृत्तान्त को सुनकर) बड़े २ गढ़ हिल उठे और गढ़पति कांपने लग पड़े। उनके शरीर में प्राण नहीं रहे और हाथों से हृदय को थामने लगे। हिला हुआ रणथम्भौर फिर कांप उठा, वहां के महाराज पहले ही स्वर्ग सिधार चुके थे। इसलिए वहां कोई कुछ नही बोला। जूनागढ़ चम्पानेर तथा चन्देरी से लेकर मांडू तक का प्रदेश कांप उठा। ग्वालियर के किले में हल-चल मच गई। अंधियार और खरेला नामक दक्षिण के स्थान भी मलिन हो गए।

कालिंजर के किले में भी भगदड़ मच गई। जयगढ़ के लोग भी भाग निकले वहां का थानेदार भी नहीं टिक सका। बांधवगढ का राणा भी कांप उठा। रोहतास दुर्ग और विजयगिरि वाले भी भयभीत हो गए। उदयगिरि और देवगिरि वाले भी डरकर कांपने लगे उन्होंने अपने आपको छुपाकर बचाकर रख लिया ?

जावतगढ़—जितने गढ़ और गढ़ पति थे, पत्ते की भांति कांपनेलगे

और सोचने लगे कि सम्राट् का छत्र अर्थात अलाउद्दीन किसके लिये चढ़ाई बोलकर जा रहा है।

चितउर गढ़——इधर चित्तौर गढ और कुम्भलगढ दोनों ही सुमेरु की भांति सजने लगे। दूतों ने आकर महाराज से कहा कि तुर्क सुलतान सेना सजाकर चढ़ा चला आ रहा है। महाराज ने यह सुनकर जितने भी हिन्दु नाम को रखने वाले राजा थे, उन सबके पास सन्देश भेजा। चित्तौड़ हिन्दुओं का स्थान है। मुसलमान शत्रु ने बलात् उस पर आक्रमण कर दिया है वह समुद्र की भांति बढता चला आ रहा है, अब वह बांधने से रुक नहीं सकता। मैंने मेड (बांध) बनकर इस भार को अपने सिर उठाया है। तुम मेरे सहायक बनो, इसमें तुम्हारी ही बड़ाई है नहीं तो हमारी प्रतिज्ञा का सत्य कौन छुड़ा सकता है? (अर्थात मैं अकेला ही लडूंगा।) जब तक मेड है तभी तक शाखा और वृक्षादि सुख पूर्वक रह सकते हैं। बांध के टूट जाने पर पानी को नहीं रोका जा सकता।

पृष्ठ ४४—सती जो——सती तो वह है जो हृदय में सत्य को धारण करे और जल जाने पर भी अपने स्वामी का साथ न छोड़े। पान, सुपारी और चूना ये सब कत्थे के साथ ही शोभा देते हैं।

करत जो—जो हिन्दू राजा अब तक बादशाह की सेवा में रहते आये थे, उन्हें भी वह सन्देश सुनाया गया। तब वे सब एक मत होकर चल पड़े और बादशाह अलाउद्दीन को जाकर प्रणाम किया, और कहने लगे कि चित्तौड़ हिन्दुओं के लिये माता (के समान पूज्य) है। इसलिए विपत्ति पड़ने पर उसका साथ नहीं छोड़ा जा सकता। रत्नसेन ने वहां जौहर व्रत सजाया है। वह हिन्दुओं में सब से बड़ा राजा है। हिन्दुओं की पतग के समान दशा है। जहां भी युद्ध की अग्नि देखते हैं, उसकी ओर वे बड़े उत्साह से दौड़ पड़ते हैं। इसलिए कृपा करो और हृदय में धैर्य धारण करो (चित्तौड़ में आक्रमण मत करो) अन्यथा हमें भी बीड़ा दे दो। रत्नसेन के पक्ष में लड़ने की आज्ञा दे दो। हम भी जाकर वहीं उसी स्थान पर मरें क्योंकि हम चित्तौड़ के नाम की लाज को मिटा नहीं सकते।

दीन्ह सहा—बादशाह ने हंसकर उन्हें बीड़ा दे दिया और तीन दिन की

अवधि भी। जिन वीरों ने युद्ध की अग्नि में जल कर मृत्यु को निमन्त्रित करने का निश्चय कर लिया हो, उन्हें भला अब कौन शान्त रख सकता।

रतन सेन— इधर रतनसेन महाराज चित्तौड़ में युद्ध की तैयारी करने लगे। सब राजा कमर कस कर आ बैठे। तोमर, वैश्य, पमार, गहलोत आदि अनेक राजाओं ने आकर प्रणाम किया। पत्ती, पञ्चवान्, बघेले, अगर-पाल (बाल) चौहान, चन्देले, गहरवार परिहार और कलहस आदि वंशों के सब राजा आकर एकत्रित हो गए। वे आगे बढ़ कर जयघोष कर रहे थे। और पीछे मृत्यु का झण्डा फहरा रहा था। सिंगी शंख और तुरई आदि चन्दन से लिप्त व सिंदूरे भरे हुए बाजे बज रहे थे। सब ने साका करने का निश्चय करके युद्ध की तैयारी करदी और जीवन की आशा छोड़ दी। वे मृत्यु को सन्मुख देखने लगे।

गगन धरती— जिसने पृथ्वी और आकाश को उठा रखा है, उसके लिए भला पहाड़ क्या भारी है। ऐसे पुरुष के शरीर में जब तक प्राण हैं तब तक वह विपत्तियों के सामने आगे ही बढ़ता जाता है।

गढ़तस—चित्तौड़गढ़ को सेनाओं से इस प्रकार सुरक्षित कर लिया गया कि यदि कोई चाहे तो बीस बरस भी उसका पतन नहीं कर सकता। उन बांके अजेय वीरों ने गढ़ को भी अजेय बना डाला। किले के चारों ओर के कोट को सुरक्षित कर लिया।

पृष्ठ ४५—स्थान २ पर चौखण्ड (चौबुर्जियां) सजा दिए गए, जिन पर भयङ्कर गोलों की मार करने वाली तोपें लगादी गईं। उन वीरों ने प्रत्येक स्थान को आपस में बांट लिया और उस कोट पर इस प्रकार डट गए कि कीड़ी भी उनके बीच में होकर नही निकल सकती थी। प्रत्येक कगारे पर धनुषधारी बैठ गए। एक अंगुल भूमि भी रिक्त न रही। किले में इस प्रकार मतवाले हाथी बन्धे हुए थे, जिन के खड़े होने पर भार के कारण पृथ्वी फटने लगती थी। चारों ओर बीच २ में बुर्ज बने हुए थे। जिन में ढोलक तबले और नगारे बजते रहते थे।

भागढ़ राज—वह गढ़ों का राजा चित्तौड़ गढ़ सुमेरु के समान सज गया

था, और अपनी ऊंचाई से स्वर्ग (आकाश) को छूना चाहता था। उसकी सेना की विशालता के सामने समुद्र भी कुछ नहीं जंचता था। सहस्र धारायें वाली गंगा तो उसके सामने थी ही क्या ?

बादशाह हठी—बादशाह ने बल पूर्वक प्रयास कर दिया। इससे इन्द्र भी भयभीत होकर कांपने लग पड़ा। नव्वे लाख घोड़ों पर सवार, जिसमें से प्रत्येक कवचों से सुसज्जित था, बढ़ रहे थे। बीस हजार भेरी और नगारे घहराते हुए आकाश को गुंजा रहे थे। झण्डों की छाया से आकाश थर्राया। वह इतनी बड़ी सेना चली आ रही थी कि पृथ्वी में भी नहीं समाती थी। मस्त हाथियों की हजारों पंक्तिया आकाश में बढ़ती हुई और पृथ्वी में भी दबती हुई सी चली जारही थीं। वे हाथी वृक्षों को उखाड़ लेते हैं और उन्हें मस्तक पर झाड़ कर मुंह से डाल लेते हैं।

कोई काहू - उस सेना का दबाव इस प्रकार बढ़ रहा था कि कोई किसी को नहीं सम्भालता था। सब को अपनी २ पड़ी थी। इधर पृथ्वी कांप रही थी तो उधर आकाश कांप रहा था।

चली कमानई—ऐसी भयङ्कर तोपें चल रही थीं जिनके मुखों में बड़े बड़े गोले पड़े हुए थे। उनके चलने से सारी पृथ्वी हिल उठती थी। बज्र से घढ़े हुए पहियों वाले सोने से मढे हुए रथ चमक रहे थे और उन पर अष्ट धातुओं की साँचे में ढली हुई भयङ्कर तोपें धरी हुई थी। वे सौ-सौ मन बारूद पी जाती थी। जहां पर उनका निशाना लग जाता, वहां के पहाड़ भी टूट जाते थे। वे रथों पर मस्त होकर पड़ी हुई थी और शत्रुओं में उठ खड़ी होती थी यदि सारा संसार भी उन्हें खींचने लगे तब भी वे नहीं हिलती वे यदि अपनी जिह्वायें खोल देती तो भूकम्प होने लगता था। उन रथों को हजारों २ हाथियों की पंक्तियां खींचती थी, फिर भी वे मतवाली जरा नहीं हिलती थीं।

नदी नार—जहां वह सेना या तोपें पांव धर देता, नदी नाले सबको पाट देती। उसके चलने से ऊंचे पर्वत या खाई खड्डे या भयङ्कर वन, सब बराबर होते जा रहे थे।

पृष्ठ ४९--कहौं सिंगार—अब मैं उन तोप रूपी कामिनियों के शृङ्गार का

वर्णन करता हूँ। मतवालीं वे बारूद रूपी मद पीती थीं और उठती हुई अग्नि रूपी श्वास छोड़ रही थीं। उनका धुंआ आकाश तक जा पहुंचता था। उनके सिर के ऊपर अग्नि रूपी सिन्दूर लगा हुआ था और नीचे पहिये रूपी तरौने चमक रहे थे। उनके हृदय (मध्य भागों में) गोले रूपी कुच शोभित होरहे थे और ध्वजा रूपी आंचल छिटक रहे थे। आगकी लहररूपी जिह्वा खुले हुए मुख से बाहर निकल रही थी। उनके बोलने पर अर्थात् गोलों की गड़गड़ाहट होते ही लंका भी जल जाती। उनके गलों पर जंजीर रूपी माल बन्धे हुए थे। उनको खींचने वाले हाथियों के कंधे टूटते जा रहे थे। शत्रुसाल और गढभंजन जैसे ऊनके (तोपों के) नाम हैं। इस प्रकार वीर और शृंगार दोनों एकत्र मिले हैं (तोपों का कामिनी रूप में शृंगार वर्णन ऐसा ही है)।

तिलक पलीता—उन तोपों के मस्तकों पर पलीते रूपी तिलक लग रहे थे और वज्र के समान बाण (गोले या पलीते के डंडे) उनके दांत थे। वे जिनकी ओर देख लेती उन्हें मार कर अन्त में चूर चूर कर डालतीं।

जेहि २ पंथ—वे तोपें जिस मार्ग से होकर निकलतीं, वहीं के सब प्रदेश जल जाते। वे इस प्रकार आग लगाती आ रहीं थीं कि जिससे आकाश के समान ऊंचे पर्वत जल उठते व पास के पलासों के जंगल भी धधक उठते। ये गैंडे और हाथी भी उस समय जलने के कारण अब तक काले हैं, वन में मृग, रोज, चितकबरे हो रहे हैं, कोयल सांप कौवे और भंवरे भी तभी से काले हो गये हैं। और न जाने कौन २ उस आग में जल गये। उनको कौन स्मरण रखे? समुद्र तक जल गया, इसलिए उसका पानी खारा होगया। उसी अग्नि की लपटों से यमुना भी काली हो गई। आकाश में जो धुंयें के समूह जम गये, वे ही बादल बन गये। और चारों ओर व्याप्त धुयें से सारा आकाश ही काला पड़ गया। सूर्य, चन्द्रमा और राहु भी जल गये। उस पृथ्वी के जलने से लंका का दाह हो गया।

धरती सरग—पृथ्वी और आकाश जल कर एक होगया। तब भी वह आग नहीं बुझी। बड़े २ दृढ वज्र जल उठे (मानो वज्र बिजलियों की आग से जल रहे हों) और उनका धुआं संसार भर में छा गया।

एहिविधि—इस प्रकार वह प्रयाण, सेना का अभियान बढ़ता चला आ रहा था। अन्त में बादशाह चित्तौड़ के निकट आ पहुँचा। चित्तौड़ में एकत्रित सब राजाओं ने किले पर चढ़ कर देखा कि कवचों से सन्नद्ध सेना चली आ रही है। चारों दिशाओं में जहां तक दृष्टि पहुँचती थी, सर्वत्र बादलों की काली घटाओं के समान हाथियों के झुण्ड छाये हुये थे। ऊपर नीचे कोई भी दूसरी वस्तु दिखाई नहीं देती थी। हां! आकाश में केवल झंडे लहरा रहे थे। रानियां धौरहरों (ऊंची मीनारों) पर चढ़कर देखने लगीं और कहने लगीं कि हे रानी पद्मिनी तू धन्य है, जिसे पाने के लिए सुलतान इस प्रकार प्रयत्न कर रहा है। अथवा, वह महाराज रत्नसेन ही धन्य है, जिसके लिये तुर्कने इतनी बड़ी सेना सजाई है। झण्डों और ढालों की परछाईं के कारण दिन में ही रात्रि हो रही है।

पृष्ठ ४७ अन्ध कूप भा—सारा संसार मानो अन्ध कूप होता जा रहा था। धूलि ही धूलि उड़ रही थी। ताल-तालाब और पोखर सब धूलि से भर गये थे।

राजै कहा—राजा ने अपने वीरों से कहा, अब जो कुछ करना है, शीघ्र कीजिये। मुझे तो इस समय कुछ भी नहीं सूझता। अब तो मरना ही दिखाई देता है।(यह सुनते ही) जितना राज-साज (सैन्य दल) था, तत्काल ही युद्ध के लिये तैयार हो गया। युद्ध के अनन्त तबले बजने लगे। सब राजा सन्नद्ध होकर आक्रमण के लिये प्रस्तुत हो गये। घोड़े वायु से ईर्ष्या करने लगे। अब अपनी गर्दन ऊंची करते तो इतने ऊंचे हो जाते कि उनके सवार भी दिखाई नहीं देते। उनके सिरों की झालरों पर मोर छांह (मोर पंखों की कलगियां) बंधी हुई थीं। पूंछ हिलाते हुए वे ऐसे प्रतीत होते थे, मानो चंवर डुला रहे हो। कवच, पहुँची, टोप और लोहसार या ये सब लोहे के बने हुए कवच पहने हुए, बड़े ही सुशोभित हो रहे थे।

तैसे चंवर—इस प्रकार के चंवरों से सुशोभित और गलझम्प (घोड़े की गर्दन के नीचे का दुपट्टा) धारण किये हुए, सफेद कवचों से बंधे हुए, उन गजगामी घोड़ों को जो देखता, वही भय से कांपने लग पड़ता।

राज तुरंम—मैं महाराज के उन घोड़ों का क्या वर्णन करूं ? वे मानो इन्द्र के रथ से लाकर जोड़े हुए हों। ऐसे घोड़े अन्यत्र कहीं पर दिखाई नहीं देते। वे सवार भी धन्य हैं, जो उनकी पीठ पर रहते हैं। वे बलख के घोड़ों की जाति के थे, जो कि समुद्र की भी थाह ले आवें। उनकी सफेद पूंछें मानो चंवर ही थीं। अत्यन्त सुन्दर रंग-बिरंगे सोने की चित्रकारी से युक्त पाखर (काठियों पर झूलें) उन पर सुशोभित होरही थी। शिर और कंधों पर रत्न जटित आभूषण तथा अनेकों चंवर बंधे हुए थे। इस प्रकार रत्नसेन ने उन वीरों को हीरे इत्यादि रत्नों से अलंकृत घोड़े तथा पान बीड़े दिये। वे क्षत्रिय राजकुमार भी मन मे अत्यन्त उत्साहित होकर उन घोड़ों पर चढ़ते है और उन्हें घाल कर (एड मारकर) आगे किसी को कुछ नहीं समझते।

सेन्दुर सीस—वे राजकुमार सिर पर सिन्दूर का तिलक लगाये हुए और शरीर पर चन्दन का लेप किये हुए थे (युद्ध क्षेत्र में बढ़ रहे थे) क्योंकि उस शरीर को छिपाकर क्यों बचाया जाय, जिसे अन्त में तो मिट्टी में मिलना ही है ?

गज मैमंत—मदमत्त हाथी राजद्वार पर बिखरे हुए, ऐसे दिखाई देते थे, मानो अत्यन्त काले बादल हों। कई सफेद, पीले, लाल और हरे (रंगों से चित्रित) काले हाथी मदमत्त होकर घूम रहे थे। उन पर पड़ी हुई लोहे की अम्बारियां दर्पण के समान चमकतीं, ऐसी प्रतीत होती थीं, कि मानो वे ऊंचे २ पहाड़ों पर पड़ी हुई हों। उनके सिरों और सूंड़ों पर कवच पहना दिये गये। वे शत्रु सेना को देखते ही उसे पैरों तले रौंद डालने वाले थे सेना में घुसने के लिए उनके दांत भी संवरे हुए थे। उनसे हटाने पर तो पहाड़ भी हट जाते।

पृष्ठ ४८ वे पहाड़ों को उलट कर पृथिवीपर पटक देते और उन पर यदि सेना टूट पड़े तो वे उसे पत्तों की तरह झाड़ कर गिरा देते। ऐसे सिंहल द्वीप के हाथी सजाए गए, जिनके भार से कच्छप की मोटी पीठ भी तिलमिला उठी।

ऊपर कनक—उनके ऊपर सोने के हौदे कसे हुए थे और चमर लटक रहे थे। उन पर भाले धारण करने वाले सैनिक भाले लेकर तथा धनुर्धारी वीर भी बैठे हुए थे।

अस्तु दल—हाथी और घोड़े दोनों प्रकार की सेना सज गई, इनमें से कौन अधिक थी, कहा नहीं जा सकता। तब युद्ध के नगारे बजने लगे, महाराज रत्नसेन भी मस्तक पर मुकुट और शिर पर छत्र धारण किए हुए इन्द्र के समान सुशोभित होते हुए आगे बढ़े। उनके सामने रथों की सेना खड़ी थी और पीछे मरणध्वज लहरा रही थी। वह चन्द्रमा के समान प्रकाशित होता हुआ शत्रु को ललकार कर आगे बढ़ा, और हिन्दु सैनिक देव लोक वासियों के लिये प्रिय होगये। मानो उस रत्नसेन रूपी चन्द्रमा ने अपने नक्षत्र रूपी सैनिकों के साथ आगे बढ़कर सूर्य रूपी सुलतान की सेना को रात्रि के अन्धकार से छादिया हो। जबतक सुलतान सूर्य दिखाई नहींदिया, चन्द्रमा रत्नसेन घर से बाहर निकल आया। जिस प्रकार आकाश में तारे गिने नहीं जाते, वैसे ही असंख्य रत्नसेन के सैनिक युद्ध भूमि में निकल आये।

देखि अनि—राजा की सेना को देखकर, उसकी विशालता के कारण बड़े बड़े पर्वत (के समान हाथी) अदृश्य हो गये। चन्द्रमा और सूर्य में आपस में युद्ध छिड़ जाने पर देखें अब क्या हुआ चाहता है।

इहां राज—इधर राजा की इस प्रकार सेना सज गई थी और उधर बादशाह ने भी आक्रमण कर दिया। उसके अगले सैनिक आगे बढ़ आये और पिछले दस कोश तक पीछे छा गये। बादशाह चित्तौड़गढ़ तक आ पहुँचा। उसके पीछे बीस हजार हाथी सजे हुए थे। दोनों ओर की सन्नद्ध सेनायें उनडती हुई आ पहुँचीं। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही युद्ध के लिये ललकार रहे थे। दोनों ही सेनायें समुद्र के समान अपार था सुमेरु किष्किन्धा पर्वत के समान अडिग थीं। दोनों दिशाओं के सैनिक क्रुद्ध होकर एक दूसरे से जा भिड़े और हाथी हाथियों से जा टकराये। चमकते हुए अंकुश बिजली की भांति कड़कड़ा रहे थे और हाथी बादलों के समान गर्ज रहे थे।

धरती सरग—पृथ्वी और आकाश एक हो गये। सैनिकों के मुण्डों पर मुण्ड गिर रहे थे। कोई भी हटाने पर नहीं हटते थे। दोनों ही पक्षों के सैनिक वज्र के समान अटल हो गये थे। (मूल में "सागर" पाठ अशुद्ध है "सरग" चाहिये)

हस्ती सहु—हाथियों से हाथी टकराते और चिंघाड़ते थे। वे ऐसे प्रतीत

हों ! थे मानो आपस में पर्वत टकरा रहे हों। वे भारी हाथी अपने स्थान से नहीं हटते, भले ही उनके दांत या शिर कट कर क्यों न गिर पड़ें।

पृष्ठ ४६——अगर उनके मार्ग में पहाड़ भी आ जाते, तो वे भी नीचे गिरकर सेना में दबकर मिट्टी में मिल जाते। कोई हाथी शत्रु के महावत को पकड़ कर सूंड में लपेट कर पैरों तले पछाड़ डालता, तो कोई सिंह के समान सवार हाथी के मस्तक को फाड़कर सूंडको काट कर उखेमार डालता। हाथियों के मद जल से आकाश पसीज गया(तर हो गया) और खून के चूने से पृथ्वी भीग गई। कुपित मस्त हाथी अपने महावत से संभलताही नहीं उसे तब पता लगता है, जबकि उसका मस्तक घावों से छन जाता है।

गगन रुहिर—आकाश से मानो खून बरस रहा था, इस प्रकार पृथ्वी पर वह वह निकला था। सिर और धड़ कट कट कर उसमें वैसे ही डूब कर छिप जाते, जसे पानी में कीचड़ मिल जाता है।

आठों बज्र—आठो बज्रों के द्वारा जैसा युद्ध सुना गया था, वह युद्ध उससे भी चार गुना अधिक था। तलवारों के खड़खड़ाने से सेना में आग लग उठती और पृथ्वी जला कर आकाश तक पहुँचना चाहती थी। तलवारें ऐसी चमकतीं, जैसे बिजली चमककर प्रकाश कररही हो। वे जिसके सिर पर पड़तीं, उसी को खंड २ कर डालतीं। हाथी आपस में चिंघाड़ते हुए ऐसे लगते, मानो बादल गरज रहे हों। तलवारों की खड़खड़ाहट बिजली की खड़खड़ाहट के समान सुनाई देती थी। बाण और भाले इस प्रकार गिर रहे थे, मानो पृथ्वी पर सावन भादों की वर्षा हो रही हो। क्रोध पूर्वक तलवारें एक दूसरे पर झपटकर पड़ रही थी और ओलों समान भारी गोलों की वर्षा हो रही थी। उन युद्ध करने वाले वीरों का कहां तक वर्णन करें ? वीरगति पाने वाले सैनिकों को अप्सरायें कैलाश को लिए चली जा रही थीं (वे अप्सराओं के साथ स्वर्ग जा रहे थे।) ।

स्वामि काज—जो वीर अपने स्वामी के कार्य के लिये लड़ मरे उन्हीं का मुख यश व तेज से लाल औक प्रकाशमान होगया और जो सत्य कासहास छोड़ कर भाग निकले, उनके मुख पर कालिख लगगई।

भा संग्राम—वह युद्ध ऐसा हुआ कि जैसा कभी पहले नहीं हुआ। दोनों ओर के शस्त्रास्त्र आगे बढ़ रहे थे, शिर और धड़ कट २ कर पृथ्वी पर गिररहे थे, रक्त पानी बन कर समुद्र बन रहा था। मांसाहारी जीव आनन्द बधाई मना रहे थे कि अब हमें जन्म जन्मान्तर के लिये भोजन मिल जायगा। चौंसठ योगिनियों ने अपने खप्पर खून से भर लिए। भेड़ियों औरगीदड़ों के घर बाजे बजने लगे, गीध और चीलों के यहां विवाह का उत्सव छा गया, कौवे किलोलें करने लगे और आनन्द से गाने लगे। आज बादशाह ने हठ करके अपनी सेना का विवाह किया है। इस लिये सब मांसाहारी जीवों ने मन चाहा भोजन प्राप्त कर लिया। इस या पिछले जन्म में जिसने जैसा पराया मांस खाया था, उसका वैसा ही मांस अब दूसरे जीवों ने खा लिया।

काहू साथ—किसी का भी शरीर अपने साथ नहीं गया, सब अपनी शक्ति के अनुसार इस शरीर का पोषण करते हुए मर गये। उसे तो बिल्कुल ओछा समझना चाहिए, जो शरीर को सदा स्थिर रहने वाला समझता है।

पृष्ठ ५० आठ बरसि—आठ बरस तक गढ़ घिरा रहा। सुलतान को या महाराज को किसे धन्य कहें? बादशाह ने आकर जो आम के पेड लगाए, उनके फल लग कर झड़ भी गये, पर वह गढ़ नहीं पा सका। वह सोचता था कि यदि गढ़ को तोड डालूंगा तो गढ़ की सब स्त्रियां जौहर व्रत कर सती हो जायेंगी और इस प्रकार पद्मिनी मेरे हाथ नहीं लगेगी। इस लिए तब तक उसने ढील दे रखी थी। इधर इतने में दिल्ली से प्रार्थना-पत्र आने लगे कि पश्चिम में जो हीरात देश पहले युद्ध में पीठ दिखा कर भाग गया था, वही अब सामने निगाह करके फिर से आक्रमण कर रहा है, जिन शासकों के सिर पृथ्वी पर झुक गये थे, वे फिर अपने सिर आकाश में उठा रहे हैं, हमारी सब चौकियां उठ गई हैं और वहां के रक्षक लोग भाग आये हैं। उधर तो बादशाह चित्तौड पर छाया हुआ है और इधर उसका अपना देश ही पराया होता जा रहा है।

जिह—जिन मार्गों में पहले घास भी नहीं उग पाती थी, उन्हीं में अब बड़े २ बबूल बढ़ गये हैं, अर्थात् जिन देशों में पहिले तिनके के समान तुच्छ शत्रु भी दिखाई नहीं देते थे, उन्हीं में अब बड़े २ शत्रु उत्पन्न हो गये है।

यदि सुलतान रूपी सूर्य शीघ्र चढ़ आये, तो यह निराशा की अंधेरी रात मिट सकती है।

सुना शाह—इन प्रार्थना पत्रों को सुन कर बादशाह के चित्त में चिन्ता उत्पन्न हो गई। मनुष्य अपने मन में पहले ही से सब कुछ सोचे, जब कि उसका सोचा हुआ पूरा हो सकता हो। मन तो अस्थिर होने के कारण झूंठा है और प्राण दूसरे (काल) के हाथ में हैं। एक चिन्ता के कारण हृदय दो जगह बंटा हुआ है। इस गढ़ से एक बार उलझ गए हैं, अब तभी छूट सकते हैं कि या तो सन्धि हो जाय या गढ़ टूट जाय। पत्थर का शत्रु पत्थर ही है अर्थात् हीरे का शत्रु हीरा ही है, क्योंकि हीरे से ही हीरा कटता है। अतः अब रत्नसेन को सम्मान पूर्वक पान का बीडा देकर वश में कर लूं, यह सोच कर अलाउद्दीन ने सरजा के सामने हृदय का भेद बताया और कहा कि तुम फिर रत्नसेन से जाकर कहो कि वह अब भी मेरी सेवा करना स्वीकार कर लेवे। कहो कि मैं तुम से पद्मिनी नहीं चाहता। चूर्ण किये हुए गढ़ को छोड़ देता हूँ।

आपन देस—अपने सारे देश का तुम उपभोग करो और चन्देरी भी लेलो, किन्तु विदाई समय समुद्र ने जो तुम्हें पांच नग दिये थे, वे मुझे दे दो।

सूरदास

विनय

शब्दार्थ

पृष्ठ ५५—विषय-विष=वासना रूपी जहर। किंकर=दूत, सेवक। जूथ=समूह। माचल= हठी। पन=प्रण, प्रतिज्ञा। सकुच=लाज, संकोच। भव-अंबु निधि=संसाररूपी समुद्र। अनंग=कामदेव। तिय-सुत=स्त्री और पुत्र। अघ=पाप।

पृष्ठ ५६—विह्वल=व्यग्र। कादि=निकाली। कथि=बनाकर। अविद्या=मूर्खता। अन्तर्गत=मन में। अमित=बहुत। तोष=संतोष, तुष्टि। अगोचर=जो देखने में नहीं आवे, इंद्रियातीत। जुगुति=युक्ति, उपाय। निरालम्ब=आधारहीन। चारि पदारथ=अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष। अजाचक=जो भीख नहीं मांगे, धनवान्। हरिविमुखन=भगवान् के द्रोही। भंग=टूट, हानि।

पृष्ठ ५७ पय=दूध। भुअङ्ग=सांप। श्वान=कुत्ता। खर=गधा। मरकट=बन्दर। पाहन=पत्थर। भेदत= छेदना। रीतो=खाली, शून्य। निषंग=तरकस। कामरी=कम्बल। हरहाई=लड़ने वाली, मरखनी; हटकत =मना करने से। निवेरि=हटाओ।

बाललीला—घरनी=पत्नी। चरनारविंद=चरण कमल। नेकु=तनिक भी। टारती=हटाती। आरति=क्रंदन, रुदन। धराधर=पर्वत। कमठ=कच्छप।

पृष्ठ ५८—संस=संशय। गंस=गांस, भाला। निकंदन=नाश करने वाले। तरनी=नाव। अजहूँ=आज भी। बल=बलराम। पचि-पचि=परिश्रम कर। जोटी=जोड़ी। अजिर=आंगन। शशि= चंद्रमा। बिरुझावत =तंग करते हैं।

पृष्ठ ५६—बोधति=समझाती है। धरती=पृथ्वी। जल-भाजन=पानी का बर्तन। जायो=पैदा किया। रिस=क्रोध। दाउहिं=बलराम को। रीझै=प्रसन्न होती है। चवई=निन्दा। गोधन=गाएं। हौं=मैं। हाऊ=हौआ। लरिका=बालक। सवेरे=दिन चढ़ते। गवाच्छ=गवाक्ष, खिड़की। पंथ=राह। भोरी=भोली।

पृष्ठ ६०—माट=मटका। कमोरी=डोरी। छूंछी=खाली। मध्य=बीच। श्यामघन=श्री कृष्ण। रुचिर=मनोहर। जेंवत=खाते हैं।

पृष्ठ ६१–रेंगत=चलते हुए। घामहिं=धूप में। टेक=बान। सिगरे=सभी। पिराई=दर्द करता है। पत्याहि=विश्वास करो। सौंह=शपथ। बटैया=आधा हिस्सेदार। खिसैया=खीझ कर। धिरयो=चेतावनी दी। भटक्यो=घूमतारहा। बंहियन=हाथों का। वैर=शत्रुता। भेद=अंतर।

पृष्ठ ६२—लकुटि=लकड़ी। कामरिया=कम्बल। विहंसि=मुस्कराकर।

रूप माधुरी—मुरारी=श्री कृष्ण, मुर नामक राक्षस को मारने वाले। अमर=देवता। निहारि=देखकर। त्रिपुरारि=महादेव, (त्रिपुरासुरको मारने के कारण उनका नाम त्रिपुरारि हुआ)। अरुण=लाल। अंभोज माल=कमल की माला। ग्रीव=गला। कपाल=मुंड। हरिनख=बघनखा, सिंह का नख। रजनीश=चंद्रमा। अनुहारि=मिलता हुआ। नागर=कृष्ण।

पृष्ठ ६३—मकराकृत=मीन के आकार का। भुजंग=सर्प। सुरसरी=गंगा। किंकिनि=करधनी। बिंवित=भासित। उडगन=तारे। श्री=लक्ष्मी। सुधा=अमृत। पूरन-काम=इच्छाएं पूर्ण करने वाला। निकाई=सुन्दरता। तूल=तुलना, बराबरी। ह्रद=सरोवर। तीर-तरु=किनारेके वृक्ष। चिबुक=ठोड़ी। अधरन=ओठों में। दुति=द्युति, प्रकाश। विंब=अनार। कोदंड=धनुष। नीप=कदम्ब। सी खंड-श्री खंड। मलय=चन्दन।

मुरली महिमा

पृष्ठ ६४—बदति=समझती। थावर=स्थावर, अचल। चर=जंगम चलने वाला। बिधि=रीति। भावती=अच्छी लगती है। पौढ़ि=लेटकर। प्रवीन=निपुण। थापी=स्थापित की। विपुल=असंख्य। चतरानन=ब्रह्म।

हरिकर=भगवान् के हाथ।

पृष्ठ ६५—श्रीपत=श्री कृष्ण। मराल=हंस। ऐन=घर। कुल व्रत=कुल की टेक। ताग—जनेऊ। सिखा=चोटी। छगन-मगन=पुत्रों। सुफलक सुत=उद्धव। बंदि=कारागार। बासर=दिन। कर्मवस=भाग्य से। उरहन=उलहना।

भ्रमर गीत पृष्ठ ६६—जोग जगत=योगाभ्यास की युक्ति। कमल नयन=श्री कृष्ण। निर्गुण=निराकार परमेश्वर। घट प्राण=कंठ में जीवन। पंकज=कमल। राजिव=कमल। कुरंग=मृग। व्याध=शिकारी।

पृष्ठ ६७—निमेष=पलक। जोवत=खोजते। वपु=काया। बांचत=पढ़ता। मदन=कामदेव। सरघाती=बाण मारने वाला। आराधे=आराधना करे। पुरवौ=पूरा करो। मधुकर=भ्रमर।

पृष्ठ ६८—जनक=पिता। वरन=रंग। अगिन=अग्नि। तातौ=तप्त। दूषन=कलंक। विभूति=भस्म। आंजै=अंजन करे। श्रुति-वचन=वेदों का कथन। मनसा=ध्यान। तरंग=लहर। भीतहिं=दीवार। अरुझाई=उलझा हुआ। निरखि=देख कर।

विनय

पृष्ठ ५५ अपनी भक्ति—हे प्रभु! आप मुझे अपनी भक्ति दीजिये। मुझे चाहे कोई करोड़ों लालच क्यों न दिखाये, पर कुछ भी अच्छा नहीं लगता। जिस दिन से मैंने जन्म पाया है, मेरा यही नियम रहा है कि विषय वासना रूपी विष हठपूर्वक खाता रहा और अन्याय करते हुये जरा भी नहीं डरा। यमराज के दूत मुझे हटाते २ थक गये, पर मैं उनके रोकने से रुका नहीं। मैं अनेक बार अनेक जन्मों में नरक कूपों में जा कर गिरता रहा, बड़ी भारी मचल मारने में ढीठ बने रहने में मुझे कुछ संकोच नहीं होता। मैं तो अपनी प्रतिज्ञा किये हुए तुम्हारे द्वार पर पड़ा हूँ, अब आपको अपने पतित-पावन के प्रण की लाज रखनी हो तो रख लो।

हे कृपानिधि ! आप मुझ पर क्रुद्ध होकर क्या करेंगे ? मैं कोई कच्चा आदमी तो हूँ नहीं, जो यों ही मान जाऊंगा। मुझे चाहे निकलवा दो तो भी तुम्हारा द्वार न छोड़ूंगा।

अब क माधव— हे भगवान् अब की बार मेरा उद्धार कर दो। मैं संसार सागर में डूब रहा हूँ, हे करुणा सागर प्रभो ! इस संसार सागर में गंभीर माया रूपी जल लोभ रूपी लहरें और तरंगें हैं। काम रूपी मगरमच्छ मुझे अगाध जल में खींचकर ले जारहा है। इन्द्रिय रूपी मछलियां जोर २ से काट रहीं हैं और मेरे सिर पर पापों की भारी गठरी लदी हुई है। मोह रूपी शैवाल (काई)में उलझ कर, इधर उधर पैर भी नहीं टेक पाता। काम क्रोध के साथ तृष्णा की भयंकर तूफानी हवा चल रही है। ये स्त्री, पुत्र आदि भगवान् के नाम रूपी नौका की ओर तो देखने भी नहीं देते। मैं बेहाल और व्याकुल होकर बीच ही में थक गया हूँ। हे करुणासागर ! सुनिये और मुझे बांह पकड़ कर ब्रज के किनारे पर निकाल कर डाल दीजिए।

अब हौं नाच्यो—हे गोपाल ! अब मैं बहुत नाच चुका हूँ। काम क्रोध रूपी चोला पहिन कर विषयों की गले में माला डाल ली है। सहा मोह की झांझरें बज रहीं हैं, और निन्दा का मनोहर शब्द हो रहा है। भ्रमों से भरा हुआ मेरा मन मृदंग हो रहा है और वह कुसंगति की चाल चल रहा है। तृष्णा अनेक प्रकार से ताल देकर हृदय में मधुर ध्वनि कर रही है। मैंने माया रूपी कमरबन्द कमर में बांध रखा है और लोभ रूपी तिलक मस्तक पर लगा लिया है। जल और स्थल में मैंने करोड़ों कलाएं दिखाईं और इस बात का ध्यान ही नहीं रखा कि सिर पर काल है। हे नन्दलाल ! सूरदास के सारे अज्ञान को दूर कर दीजिये।

अविगत गति—सूरदास अन्धे होकर भी निराकार की उपासना न कर साकार के गुण क्यों गाते हैं ? इस शंका का समाधान करने के लिये कहते हैं कि अविगत अर्थात् निराकार ईश्वर की गति कुछ समझ में ही नहीं आती। यदि किसी को उसका साक्षात्कार हो जाय, तो वह उसका कुछ वर्णन नहीं कर सकता, प्रत्युत गूंगे के गुड़ की भांति अपने हृदय में प्रसन्न होता रहता है ! (माना, कि वह निराकार प्रभु परम आनन्द स्वरूप है और उसके

ध्यान में रस भी खूब है, तथा उससे अनन्त सन्तोष भी प्राप्त होता है) फिर भी वह मन और वाणी की पहुँच से परे है, उसे जो पालेता है, वही जान सकता है (पर वर्णन नहीं कर सकता)। क्योंकि उसका न तो कोई स्वरूप ही है, न कुछ आकार प्रकार ही, न कोई गुण है, न जाति ही। अतः मन ध्यान लगाते समय निराधार होकर चकित हो, इधर उधर भटकता रहता है (पर उस निराकार के स्वरुपका ध्यान नहीं कर पाता)। इस लिये निराकार प्रभुको सब प्रकार से अगम्य-अप्राप्य जान कर ही सूरदास तो साकार प्रभु के ही गुण गाता है।

कहावत ऐसें—भक्त सूरदास अपने प्रभु को सख्य भाव से व्यंग्य रूप मे उनके झूंठे ही दानी बनने का उलाहना देते हुए, कहते हैं कि :—

हे प्रभु, तुम तो झूठ-मूठ ही दानी कहलाते हो। आज तक तुमने किसी को कुछ दिया नहीं। सुदामा को चारों (धर्म अर्थ काम मोक्ष) पदार्थ और सन्दीपन गुरु के मरे हुए पुत्रों को फिर से जीवित करके उसे दे दिये। इसी प्रकार हे शारंगपाणि-शारंग धनुष को धारण करने वाले प्रभु! तुमने बाणों से छेदकर रावण के दस मस्तक काटकर, विभीषण को लंका भी दे डाली। किन्तु यह सब तो तुमने उनके पुराने प्रेम को देखकर ही तो किया। मित्र सुदामा को अयाचक (ऐश्वर्यसम्पन्न) पुराने प्रेम के कारण ही बनाया था किन्तु सूरदास के प्रति इतने निठुर क्यों हो गये हो, जो उसकी आंखें भी छीन लीं?

छांड़ि मन—हे मन! तू भगवान् के विरोधियों का साथ छोड़ दे। क्यों कि उनके साथ रहने से कुबुद्धि उत्पन्न होती है और भक्ति में बाधा पड़ती है। सांप को दूध पिलाने से क्या लाभ? वह अपना विष तो छोड़ेगा ही नहीं। हरि विमुख लोग रात दिन काम क्रोध मद लोभ और मोह में मगन रहते हैं। कौवे को कपूर खिलाने से क्या? वह सफेद तो होगा ही नहीं। और कुत्ते को गंगा में नहलाने से वह पवित्र नहीं हो सकता। गधे पर सुगंधित अरगजा के लेप करने से क्या लाभ? वह फिर भी धूल में ही लेटेगा? इसी प्रकार बन्दर के अङ्गों पर आभूषण पहना देने से क्या? जिस प्रकार पत्थर पर मारा गया बाण उसे बेध नहीं सकता, प्रत्युत स्वयं तरकस ही खाली हो

जाता है, उसी प्रकार दुष्ट को कितना ही अच्छा उपदेश क्यों न दो, वह कभी सुधरेगा नहीं क्योंकि) दुष्ट और काले कम्बल पर कभी दूसरा रंग नहीं चढ़ सकता।

माधवजू—हे गोपाल ! (क्योंकि आप गौएं चराते हैं अतः)मेरी भी एक (अविद्या रूपी) गाय आज से आपके सपुर्द है। आप इसे संभालिये और चरा लाइये। यह बहुत ही हरिया हुई है और रोकते हुए भी कुमार्ग में चली जाती है। रात दिन वेद रूपी ईखके खेतों को उखाड़ती फिरती है अर्थात् वेद के उपदेशों को यह नष्ट कर डालती है। अतः हे गोकुल पति ! इसे भी अपने गोधन में मिला लीजिये। आपके बचन सुन कर कि तुम्हारी गाय को मैंने संभाल लिया है, मैं सुख की नींद सोऊंगा। कृपा करके आप मुझे अपनी बांह पकड़ा दीजिये, ताकि मैं निधड़क हो जाऊं और फिर दुबारा जन्म न लेना पड़े। हे यदुराय ! मैं ममता और वासना से पहिले ही निपट लूंगा

बाल लीला

सरलार्थ

चरन गहे—(श्री कृष्ण अपने पैर को पकड़ कर अंगूठा मुंह में डाल रहे हैं और नन्दरानी पलने पर किलक कर खेलते हुए श्री कृष्ण को झूला दे रही है। भगवान् के अंगूठा चूसने के कारण की कल्पना करते हुए कवि कहता है कि) जिन चरणारविन्दों को लक्ष्मी अपने हृदय से क्षण भर के लिये भी नहीं हटाती, मैं भी देखूं तो सही कि इनमें क्या रस है, इस विचार से वे बड़ी उत्सुकता व कठिनता से अंगूठे को मुख में ले रहे हैं। जिन चरणारविन्दों के रस पान के लिये, मनुष्य और देवता आपस में विवाद करते हैं, वह रस जो (इस अवस्था के सिवा अन्यत्र) मुझे भी दुर्लभ है, इसीलिये मानो वे स्वाद ले रहे हैं। श्रीकृष्ण के अंगूठा मुख में लेते ही समुद्र उछलने लगा,

पर्वत कांपने लगे, कच्छप की पीठ तिलमिला उठी, शेषनाग के हजार फन भी कांपने लग गये।

पृष्ठ ५८ बढ़्यो वृच्छ—अक्षयवट वृक्ष बढ़ने लगा, देवता व्याकुल हो उठे, आकाश में उत्पात होने लगा और महाप्रलय काल के बादल जहां तहां उत्पात करते हुए उठने लगे। भगवान् ने देवताओं के हृदय में सन्देह (भय) उत्पन्न हुआ जानकर कृपा करके अंगूठा मुख में से निकाल दिया। सूरदास कहते हैं कि प्रभु राक्षसों का नाश करने वाले और दुष्टों के हृदय में कांटे की भांति चुभने वाले हैं।

कान्ह् चलत—अब कृष्ण पृथ्वी पर दो एक पांव चलने लग पड़े हैं। नन्दरानी जिस बात की मन में इच्छा किया करती थी, वह बात (कृष्ण का पैरों चलना) अब आंखों देख रही है। कृष्ण के पैरों में झांझरें रुनझुन रुनझुन बज रही हैं, जोकि अत्यन्त मनोहर लगती हैं। कभी वे बैठ जाते हैं, तो कभी उठ खड़े होते हैं, उस शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। सुन्दरता के भंडार श्रीकृष्ण को देखकर, सब ब्रज युवतियां अपने आप को भूल गईं। सूरदास का उद्धार करने वाले यशोदानन्दन श्री बालकृष्ण चिरजीवी हों।

मैया कबहि् बढ़ेगी—हे माता! मेरी चोटी अब कब बढ़ेगी? मुझे दूध पीते तो कितने ही दिन हो गये हैं। पर यह तो अभी छोटी ही है? तू तो कहती थी कि मेरी चोटी भी बलदेव की चोटी की भांति लम्बी और मोटी हो जायेगी और काढ़ते गूंथते, नहलाते व पोंछते हुए नागिन की भांति पृथ्वी तक लोटने लगेगी? तू तो बार बार मुझे कच्चा दूध पिलाती रहती है, पच पचकर माखन रोटी तो कभी देती ही नहीं। सूरदास कहते हैं कि श्रीकृष्ण और बलदेव की जोड़ी चिरकाल तक जीती रहे।

ठाढ़ी अजिर—अपने आंगन में खड़ी यशोदा गोद में कृष्ण को लिये हुए चांद दिखा रही है और कहती है कि हे मेरे लाल! तुम क्यों रो रहे हो? मैं तुम्हारी बलिहारी हूँ। जरा चांद को तो देखो और आंखों को तृप्त कर लो। तब श्री कृष्ण चांद की ओर देखने लगे और स्वयं हाथ पकड़ कर बताने

लगे। सोचते हैं कि, न जाने यह मीठा लगता है या खट्टा, देखने में तो यह बहुत ही सुन्दर लगता है। और माता को यह कहकर चांद मांगते हैं कि मुझे भूख लग रही है, मैं चांद खाऊंगा, मुझे जल्दी ला दे। यह कह कर क्रुद्ध हो रूठ जाते हैं। यशोदा मन में सोचती है कि मैंने इसे चांद बताकर यह क्या कर डाला। अब यह रो रहा है और दुःखी हो रहा है। तब यशोदा कृष्ण को समझाती है और आकाश में उड़ती हुई चिड़ियों को दिखाकर बहलाती है।

पृष्ठ ५६ बार बार—यशोदा अपने पुत्र को समझाने के लिए बार २ कहती है कि हे चांद, तू शीघ्र यहां आजा। क्योंकि तुझे मेरा लाल बुलारहा है। यह मधुर मेवा पक्वान्न मिठाई स्वयं न खाकर तुझे खिलायेगा। तुझे हाथों पर लिये खेलता रहेगा, कभी पृथ्वी पर न बैठायेगा। यह कहकर पानीका पात्र हाथ में लेकर उठाती है और कहती है कि तू इसमें आजा। तब जल-पात्र को लाकर पृथ्वी पर रख दिया और पकड़ कर (कृष्ण को) दिखलाने लगी। कृष्ण हंसते हैं और अपने दोनों हाथ उसकी ओर झुकाते हैं।

मैया दाऊ—कृष्ण कहते हैं कि हे माता! बलदेव ने बहुत चिढ़ाया। मुझे कहता है कि तू तो मोल लिया हुआ है। तू यशोदा के कब उत्पन्न हुआ था? क्या कहूँ इसी क्रोध के मारे मैं खेलने नहीं जाता। मुझे बार २ कहता है कि तेरे माता पिता कौन हैं? नन्द और यशोदा तो गोरे हैं, तू काला कैसे है? सब ग्वाल बाल भी चुटकी बजा बजाकर हंसते हैं और बलदेव उन्हें सिखा देता है। तू भी तो मुझे मारना सीखी है, बलदेव को तो कभी खीजती भी नहीं। कृष्ण के क्रोध भरे मुख को देखकर, यशोदा बार २ प्रसन्न होती है और कहती है कि बलदेव तो जन्म से ही चालाक और इधर की उधर लगाने वाला है। मुझे गोधन की सौगन्ध है, मैं माता और तू मेरा पुत्र है।

खेलन दूरि—हे कृष्ण, तू खेलने के लिये बहुत दूर क्यों चला जाता है? सुना है कि आज वन में हौआ आ गया है। तू तो नन्हा बच्चा है, अतः नहीं मानता। एक लड़का अभी भाग कर आया है, कहोतो उसे बुलाकर पुछवा दूं

वह हौआ जिसे लडका देखता है, उसीके कान काट लेता है ? इसलिए सवेरे २ सब घर चलो यह सुनकर कृष्ण ने बलराम को भी शीघ्र ही अपने २ घर भाग चलनेके लिये बुला लिया।

पृष्ठ६० सखा सहित—श्री कृष्ण अपने सखाओं के साथ माखन चुराने के लिए चल पड़े। कृष्ण ने झरोखे से देखा कि एक भोली भाली दही मथ रही है। उसने मथानी को मटके पर रखकर देखा कि माखन ऊपर आगया है, अतः वह स्वयं मटकी मांगने चली गई। इधर इतने कृष्ण ने भी दांव पा लिया। सखाओं के साथ सू घर में घुस गए और सारा माखन-दही खा गए। दही की मटकी खाली छोडकर हसते हुए सब बाहर आगए। इतने में गोपीभी मटकी हाथमें लिए हुए आ पहुँची कि ग्वाल घर से निकले। उसे कृष्ण को माखन से हाथ और दही से मुख लपेटे हुए देख लिया। कृष्ण का हाथ पकड लिया। बाकी बालक ब्रजमें भागगए। ग्वालिन के मनको कृष्णने मुग्ध कर लिया। अतः वह ठगी सी रह गई।

आई छाक—छाक (दोपहर की रोटी) आगई, अतः कृष्णने सब सखाओं को बुला लिया। यह सुन कर सुबल सुदामा और श्री दामा आदि सब सखा इकट्ठे हो गये। कमल के पत्ते और पलाश के दोने सबके आगे रख कर परोसते जाते हैं। सुन्दर श्याम ग्वालों के साथ मिलकर बडे प्रेम से खा रहे हैं। ऐसी तेज भूख लग रही थी कि यशोदा माता ने भोजन भेज दिया। कृष्ण अपनी रोटी नहीं खाते, वे ग्वालों के हाथों से लेकर खाते हैं।

ग्वालन करते—कृष्ण ग्वालो के हाथ से ग्रास छुडा लेते हैं। सब के मुख का जूठा लेकर अपने मुख में डाल लेते हैं। षट् रसके सब पकवान पड़े हैं, पर उन्हें नहीं चाहते। सबसे हा हा कर के मांगते हैं और कहते हैं कि मुझे तुम्हारी रोटी बहुत अच्छी लगती है। इस महिमा को वे ही समझते हैं, जिस लिए वे स्वयं बंधते हैं। भगवान् के लिए तो मुनिवर ध्यान लगाते हैं, फिर भी स्वप्न में भी उन्हे नहीं दीखते।

आज मैं—कृष्ण कहते हैं कि हे माता ! आज मैं भी गौएं चराने बन में जाऊंगा और वृन्दावन के अनेक प्रकार के फल अपने हाथों से तोड़ कर खाऊंगा। तब यशोदा कहने लगी कि हे बालक ! अभी ऐसी बात मत करो

जरा अपनी ओर तो देखो, तुम्हारे छोटे छोटे से पांव हैं, तुम इतनी दूर तक कैसे चलोगे और आते आते भी तो रात हो जाती है ? ये ग्वाल बाल तो प्रातः काल ही गौएं चराने ले जाते हैं और संध्या को घर आते हैं।

पृष्ठ ६१—धूप में रेंगते २ तुम्हारा मुख कमल कुम्हला जायगा। तब कृष्ण उत्तर देते हैं कि हे माता ! तेरी सौगन्द, न तो मुझे धूप ही लगती है, और न भूख ही। सूरदास कहते हैं कि कृष्ण यशोदा का कहना नहीं मान रहे, वे अपनी दृढ़ जिद पकड़े हुए हैं।

मैया मैं—हे माता ! अब मैं गौएं चराने नहीं जाऊंगा। क्योंकि ये सब ग्वाल मुझसे ही गौएं इकट्ठी करवाते हैं। इसलिये मेरे तो पांव भी दुखने लग पड़े। यदि तुमको विश्वास न हो, तो बलदेव को सौगन्ध दिलाकर पूछ लो। तब यशोदा कहती है कि, मैंतो अपने बच्चे को इसलिये भेजती हूँकि मन बहला आवे, किन्तु वे लोग मेरे कोमल बालक को रिंगा २ कर कष्ट देते हैं।

खेलन अब—कृष्ण जी कहते हैं कि माता ! अब मेरी बला खेलने जाती है, अर्थात् मैं खेलने नहीं जाता, क्योंकि बलदेव मुझे लड़कों के साथ खेलता देखते ही खिजाने लग पड़ता है। मुझे कहता है कि तू तो वसुदेव का पुत्र है और देवकी तेरी माता है। वसुदेव को कुछ देकर के बड़ी मेहनत से मोल लिया है। अतः तू अब नंद को बाबा और यशोदा को माता क्यों कहता है ? सब ग्वाल बाल भी इसी प्रकार मुझे खिजाते हैं, तब मैं खिसियाना सा होकर उठ आया। पीछे खड़े नन्द यह सुन कर हंसते २ उन्हें हृदय से लगा लेते हैं। नन्दने बलराम को डांटा, तब कृष्ण मन में बहुत प्रसन्न हुये

मैया मेरी—कृष्ण कहते हैं कि हे मेरी माता, मैंने माखन नहीं खाया। प्रातःकाल होते ही तो तूने मुझे गौओं के पीछे मधुवन भेज दिया था। चार पहर तक वंशीवट के पास भटकता रहा हूँ, सन्ध्या होने पर घर आया। माता तू ही सोच मैं छोटी बाहों वाला बच्चा-छींका कैसे पा सकता था। ये ग्वाल बाल तो सब मेरे शत्रु हो रहे हैं, अतः इन्होंने जबरदस्ती मेरा मुंह लपेट दिया है। और हे माता, तू भी तो बहुत भोली है, जो इनके कहने का विश्वास मान लेती है। मुझे पराया जानकर अबहृदय मेंभी मेरेप्रति कुछ भेद-भाव सा उत्पन्न हो गया दीखता है। ले अपनी लाठी और कमली संभाल अब

तक तूने मुझे बहुत नाच नचाये। इस पर यशोदा ने हंस कर कृष्ण को गले लगा लिया।

रूप माधुरी

सरलार्थ

पृष्ठ ६२ वरनौबाल—मैं कृष्ण के बाल-रूप का वर्णन करता हूँ। नन्दलाल को देखकर देव मुनिगण भी अपने आपको भूल गये। सिर पर बाल हवा के बिना भी चारों ओर बिखर रहे हैं। मानो, इस प्रकार, वे सिर पर जटा धारण किये हुए शिव बने हुए हैं। ललाट पर सुन्दर तिलक और केशर की बिन्दी इस प्रकार शोभित होरही है, मानो शिवजी अपने तीसरे नेत्र की अग्नि की लाल रेखा से अपने शत्रु, काम को जला रहे हों। उनके गलेमें नीलम से युक्त कंठला और हृदय पर कमल की माला ऐसी लगती मानो शिवजी के गले में विष और हृदय पर कपालों की माला हो। कृष्ण के हृदय पर विराजमान सिंह के टेढे नख को स्त्रियां बड़े चावसे देख रहीं हैं। वह ऐसा प्रतीत होता है, मानो शिवजी ने चांद को मस्तक से उतार कर हृदय पर लटका लिया हो। श्याम के शरीर पर आंगन की लिपटी हुई धूलि, मानो शिव जी के शरीर पर लगी हुई भस्म हो, ऐसी लगती है।

देवेन्द्र के स्वामी वे भगवान् श्री कृष्ण, माता से खाने की वस्तु के लिये हठ कर रहे हैं, जिनका ब्रह्मा भी अपने चारों मुखों से जप करता है।

देखो माई—कृष्ण की सुन्दरता का वर्णन करती हुई एक सखी दूसरी से कहती है कि इस सौन्दर्य के सागर श्री कृष्ण को देख! बुद्धि और ज्ञान का बल इसका पार नहीं पा सकता और चतुर मन तो इसी में मग्न हो जाता है। श्याम का शरीर ही अत्यन्त अगाध समुद्र है और कमर का पीतवस्त्र ही तरंगें है। जब ये देखते हुए चलते हैं, तो बहुत ही सुन्दर दिखाई देते हैं। इनके अङ्ग अङ्ग में भंवर पड़ रहे हैं (शरीर पर बालों की भंवरियां छोटे २ से चक्कर और समुद्र में भंवर- आवर्त- होते हैं)।

पृष्ठ ६३,—मछलियों जैसे नुकीले नेत्र, मकर जैसे कुण्डल और बाहुओं में अनन्त नामक भूषण हैं। मोतियों की माला की लड़ियां मानो गंगा की दो धाराएं हैं। मोर मुकुट, मणियों के आभूषण, कटि की किंकिणी तथा नख रूपी चन्द्रिका, ऐसे लगते हैं मानो स्थिर समुद्र में पूर्णिमा के तारे झिलमिला रहे हों। मुख चन्द्र की शोभा तो देखते ही, इस प्रकार आनन्दित कर देती है, मानो समुद्र मन्थन से अमृत और लक्ष्मी सहित चन्द्र प्रकट हो रहा हो। सूरदास कहते हैं कि इस स्वरूप को देखकर सब गोपियां देखती की देखती रह गईं, किन्तु इस शोभा के समुद्र का पार न पा सकीं, वे पचपच कर हार गईं।

नटवर बेश—नटवर वेश धारण किये हुए श्री कृष्ण अत्यन्त ही शोभित हो रहे हैं। चरण कमलों के नख चन्द्र का ध्यान करते ही सब मन कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं। जानु और जंघाओं की सुघड़ता तथा सुन्दरता के समस्त केला भी कुछ नहीं। पीत वस्त्र और कछनी ऐसी प्रतीत होती हैं, मानो कमल की पीली केसर बिखर रही हो। कमर के चारों ओर नाभि के तीर पर सोने की किंकिणयां-छोटी छोटी घंटियां-मानो तालाब के तट पर स्थित सुन्दर हंसों के समान शोभित हो रही हैं। हृदय की रोमावली में गरदन से लटकता हुआ मोतियों का हार ऐसा लगता है, मानो काली रोमावली रूपी यमुना में श्वेत हार रूपी गंगा मिल रही हो और दोनों ओर चन्दन चर्चित भुजाएं मानो दोनों तट और रेणु हों दोनों ओर खड़ी व्रजयुवतियां मानो तट की वृक्षकी मालाएं हों। ठोड़ी और ओठों पर चमकते हुए दांत तो बिजली को भी लज्जित कर रहे हैं। नासिका को तोते की चोंच और नेत्रों को खंजन पक्षी कहते हुए तो कवि लज्जित हो जाता है। उनके कानों के कुण्डल करोड़ों सूर्यों के समान चमक रहे हैं और भौंहें काम के धनुष के समान हैं इस प्रकार का वेश धारण किये हुए और शिर पर चन्दन लगाये हुए श्री कृष्ण कदम्ब वृक्ष के नीचे खड़े (वंशी बजा रहे हैं)।

मुरली महिमा

पृष्ठ ६४,—माई री मुरली—हे सखी, इस वंशी को बड़ा अभिमान हो गया है, इसलिए यह किसी को कुछ समझती नहीं। इसने कृष्ण के मुखकमल को देख कर सुख का राज्य प्राप्त कर लिया है। यह देखते ही ढीठ बन कर पीठ कर लेती है। इसके लिए कृष्ण के अधर ही छत्र छाया है और बिखरते बाल ही सुन्दर श्याम चमर हैं। यह यमुना के जल को भी समुद्र की ओर नहीं जाने देती और स्वर्ग से देवताओं के विमानों को भी पृथ्वी पर बुला लेती है। जितने भी जड़ चेतन पदार्थ हैं, उन सब में नीति अनीति जो चाहे कर डालती है, (अथवा सब अजेय पदार्थों को भी जीत लेती है या जड़ों को चेतन व चेतन को जड़ बना डालती है)। वेद की मर्यादा को मिटा कर अपना नया ही मार्ग चला रही है। सब देव मानव, नाग आदि इस के वश में हो रहे हैं। कृष्ण (विष्णु) ने भी इसी के प्रेम से, लक्ष्मी को भी भुला दिया है।

मुरली तऊ—हे सखी! सुन तो, यद्यपि यह वंशी कृष्ण को अनेक प्रकार के नाच नचाती है, तब भी उन्हें अच्छी ही लगती है। उन्हें एक पांव पर खड़ा किये रखती है और अपना अति अधिकार उन पर जतलाती है। वे स्वयं कोमल शरीर वाले हैं और इसकी आज्ञा बहुत गुरु (कठोर) है, अतः उसके भार से उन बेचारों की कमर भी टेढ़ी हो जाती है। इन चतुर कृष्ण को इस नारी (वंशी स्त्रीलिंग वाचक शब्द) ने अपने सामने झुका कर अपने आधीन कर रखा है। स्वयं (होटों की) शय्या पर सोकर, उनके हाथों से अपने पांव दबवाती है। एक क्षण भी उन्हें प्रसन्न जान कर, अधर से शिर हिलवा देती है!

बांसुरी—यह वंशी ब्रह्मा से भी चतुर। इसके समान भला किसे कहा जाय? इसने सारे संसार को ही अपने वश में कर रखा है। बेचारे ब्रह्मा ने तो चार मुखों से उपदेश देकर जड़ चेतन पदार्थों की मर्यादाएं स्थिर की हैं, किन्तु यह आठ छिद्र रूपी मुखों से बड़े अभिमान पूर्वक गरजती रहती है। फिर भला इसके सामने ब्रह्मा की रीति कैसे चल सकती है? ब्रह्मा ने तो एक

कमल पर आसन पाकर ही बड़ी भारी विभूति–सम्पत्ति महिमा प्राप्त की थी, किन्तु कृष्ण के कर रूपी दो कमलों पर बैठ कर इसका अभिमान तो बहुत ही बढ़ गया है

. पृष्ठ ६५. ब्रह्मा जी ने तो केवल एक ही बार विष्णु के उपदेश देने पर सब गुण गान प्राप्त किये, किन्तु इसके तो लाड़ले कृष्ण रात दिन कानो लगे रहते हैं! इसे कान में कुछ कहते-उपदेश देते-रहते हैं। ब्रह्मा तो केवल एक हंसपर बैठ कर ही सब मे प्रशंसनीय बन गए, किन्तु इसने तो सभी गोपीं जनो के मन रूपी मान सरोवर के हंसों को विमान (मान रहित, विमान) बना डाला है। श्री विष्णु के हृदय में रहने वाली लक्ष्मी भी जिन श्री कृष्ण के चरण कमलों की रज को चाहती है, यह वंशी उन्ही श्री कृष्ण के मुख को सुखदायक सिंहासन बना कर विराजमान हो रही है। इसने कृष्ण के अधरो के अमृत को पीकर सब कुल मर्यादा को नष्ट कर दिया है। न तो शिखा और न सूत्र–यज्ञोपवीत--को ही यह धारण करती है। फिर भी नन्दलाल को इसी से प्रेम है।

जसोदा बार बार–श्री कृष्ण जब मथुरा जाने लगे, तो यशोदा बार २ यों कहने लगी कि क्या कोई ब्रज में हमारा हित चिन्तक है, जो मथुरा जाते हुए कृष्ण को रोकले? मेरे इस भोले लाडले बालक से क्या काम था, जो कंस ने इसे मथुरा बुलाया है? यह सुफल्क का पुत्र अक्रूर मेरे प्राण लेने के काल रूप हो कर आया है। कंस चाहे तो मेरे सब गोधन (गौएं) लेले और मुझे भी बन्दिनी बना डाले। किन्तु, इतना सा सुख तो मुझे मिलना ही चाहिये कि मेरे लाल मेरी आंखों के सामने खेलते रहें। दिन भर मैं इनका मुख देख कर जीती हूँ। इन से बिछुड़ने पर भी यदि दैवयोग से मैं जीती बचपाऊं तो फिर किसे प्रसन्नता से हंसकर बुला पाऊंगी? इस प्रकार कृष्ण के गुण गाते गाते यशोदा के मुख और अधर कुम्हला गये। सूरदास कहते हैं कि नन्दरानी के दुःखों का कहां तक वर्णन करूं?

मेरे कुवंर—यशोदा कहती है कि मेरे लाल के बिना सब पदार्थ अब वैसे के वैसे ही धरे पड़े हैं। अब प्रातः काल होते ही कौन मकखन लेनेकेलिये मेरे हाथ से नेत—मथनी की धूती—पकड़े? यशोदा इस प्रकार पुत्र से सूनेघर

में उनके गुणों को याद कर कर के दुखी होती है कि अब प्रातःकाल होते ही कोई ग्वालिन घर को घेर कर उलाहना नहीं देती। कृष्ण के रहते हुए ब्रज में जो आनन्द था, उसका अनुभव तो मुनियों के मन भी नहीं कर सकते। किन्तु अब तीनों लोक के स्वामी कृष्ण के बिना ब्रज को कौड़ी में भी कोई नहीं पूछता।

भ्रमर गीत

पृष्ठ ६६ ऊधो ब्रज की—गोपियां उद्धव से कहती हैं कि हे उद्धव! पहले कुछ ब्रज की दशा देख लो, फिर अपने योग की कथा कहते रहना। तुमको श्री कृष्ण ने जिस लिये भेजा है, उस कार्य को मन में सोचो। विरह और धर्म चर्चा में कितना बड़ा अन्तर है, इस बात को तुम जानते हो या नहीं ? तुम तो अत्यन्त चतुर और कृष्ण के निकट रहने वाले हो। फिर भला तुम पानी में डूबते हुए को झाग के पकड़ने को बार २ क्यों कहते हो ? (अर्थात् तुम्हारे निराकार ब्रह्म का ध्यान हमारे लिये वैसे ही व्यर्थ है, जैसे डूबते हुए के लिए झाग को पकड़ना) हम उस मुस्कराहट भरी सुन्दर चितवन को अपने हृदय से कैसे हटाएं ? हम तो तुम्हारी सब योग की युक्तियों और मुक्ति की परम निधि को भी उस वंशी पर न्योछावर कर सकती हैं। जिस हृदय में कमल के समान नेत्र वाले श्री कृष्ण रहते हैं, उसमें भला दूसरा कैसे आवे ? हम तो उस भजन को त्याग देतीं हैं, जिसमें कृष्ण के सिवा और अच्छा लगे।

ऊधो ना हम—हे उद्धव ! सही बात तो यह है कि न तो हम ही सच्ची विरहिणी हैं और न तुम ही खरे सेवक। कृष्ण को छोड़कर उस शून्य ब्रह्म को भजने के लिये कहते सुनते भी हमारे शरीर में अभी प्राण विद्यमान हैं, फिर भला हम विरहिणी कैसी ? विरहिणी तो मछली है, जो पानी से बिछुड़ते ही जीवन की आशा छोड़ कर मर जाती है। पपीहा भी भले ही प्यासा मर जाय, अपना दास भाव नहीं छोड़ता (स्वाति नक्षत्र के सिवा अन्य जल नहीं पीता। कमल भी कीचड़ में खिलता है, किन्तु यदि दैवयोग से जल के बाहर आजाय तो सूर्य उसे कुम्हला देता है, फिर भी कमल सूर्य के इस दोष पर ध्यान नहीं देता और चन्द्रमा से सदा विरक्त ही रहता है। अपने प्राण प्रिय पुत्र के वन में जाते ही प्राण त्याग कर दशरथ ने सच्चे प्रेम का प्रत्यक्ष पालन

किया। हमने कृष्ण से पतिव्रत धर्म का पालन करके भी जगत की हंसी के डर से छोड़ दिया। (अथवा, जगत की हंसी की कुछ पर्वाह न कर, हमने भी कृष्ण के प्रति पतिव्रत धर्म का पालन किया)।

सब जग तज्यौ—हमने सारा संसार प्रेम के लिये त्याग दिया है। पपीहा स्वाति की बूंद को नहीं छोड़ता, इसीलिए सब के सामने उसी की रट लगाता रहता है। मछली जल के महत्व को समझती है, अतः उससे बिछुड़ते ही मर जाती है। यद्यपि व्याध हिरण को गीत पर मुग्ध कर, उसे बाण से मार डालता है, तोभी हिरण, प्रेम को नहीं छोड़ता। चकोर चन्द्रमा को देखते देखते युग बितादेता है, पर पलभर के लिए भी पलक नहीं लगाता।

पृष्ठ ६७—पतंगा भी दीपक की ज्योति देखते ही अपना शरीर जला डालता है, फिर भी उसका प्रेम घट अभी तक रिक्त नहीं हुआ। जो बातें हमने व्रजराज के साथ की थीं, हे सखी ! तू ही बता, वे भला कैसे भूली जा सकती हैं ? इस शरीर के लिये, भला हम उन्हें कैसे छोड़ सकती हैं ?

कोऊ व्रज—इस व्रज में तो अब कोई कृष्ण का पत्रभी नहीं पढ पाता। विरही के लिये कठोर काती के समान हृदय-विदारक पत्र हे कृष्ण ! तुमक्यों लिख लिख भेजते हो ? हमारी आंख सदा सजल रहती हैं और पत्र का कागज बड़ा कोमल होता है। अतः सदा यह सन्देह बना रहता है कि कहीं आंखों के सामने गल न जाय। इधर हमारे हाथों की अंगुलियां भी विरहाग्नि से अत्यन्त ही तपी हुई हैं, सो यह भी भय है कि कहीं हाथ में पड़ते ही पत्र जल न जाय। इस प्रकार दोनों प्रकार से कठिनाई है। फिर उन कठोर काम बांण चलाने वाले अक्षरों को हम समझ भीतो नहीं सकती हैं ? हम तो कृष्ण को देखकर ही अब बच सकती हैं और दिन रात उन्ही के चरणों में पड़ी रहस-कती हैं।

उरमें माखन—हमारे हृदय में तो माखन-चोर गड़ गए हैं। वे इस में इस प्रकार तिरछे होकर फंस गए हैं, किसी प्रकार निकाले नहीं निकलते हैं। यद्यपि यशोदानन्दन जाति के अहीर हैं, तो भी वे हम से छोड़े नहीं जा सकते। चाहे वे वहां जाकर यदु वंश जैसे बड़े कुल के बने हैं, पर हमें तो

बड़े नहीं लगते। वसुदेव देवकी कौन हैं, हम नहीं जानतीं। हमें तो कृष्ण के देखे बिना और कुछ नहीं सूझता।

उधौ मन—हे उद्धव! हमारे दस बीस मन तो हैं ही नहीं। एक ही तो था, सो वह भी कृष्ण के साथ चला गया। अब तुम्हारे निर्गुण ब्रह्म की यहां कौन आराधना करे? हम तो कृष्ण के बिना सब वैसे ही व्याकुल हो रहीं हैं, जैसे सिर के बिना शरीर। किन्तु ये श्वास कृष्ण मिलन की आशा के कारण अटके हुये हैं और उस आशा में करोड़ वर्ष तक जी सकते हैं। तुम तो श्याम सुन्दर के सखा हो और सब योग (मिलन) के ईश हो, तो फिर हम रसिकों के मन की बात (कृष्ण से मिलने की इच्छा) भी तो पूर्ण कर दो।

निरगुन कौन—हे उद्धव! जरायह तो बताओकि तुम्हारा वह निर्गुण, जिसका इतना प्रचार करते फिरते हो, किस देश का निवासी है? हे मधुकर! हम तुम्हें सौगन्द दिलाकर कहती हैं कि हम सचमुच पूछ रही हैं, हंसी नहीं करतीं।

पूछ ८८—उस निर्गुण निराकार ब्रह्म के माता पिता और पत्नी कौन हैं? उसका रंग रूप वेश कैसा है? और किस रस में उसकी विशेष प्रीति है? यदि तुमने हमें सच सच न बताकर, कुछ झूठ बतलाया, तो तुम्हें अपने किये का फल मिल जायेगा। यह सुनकर उद्धव ठगे से होकर, चुप हो रहे और उनकी सब बुद्धि नष्ट हो गई।

उधौ हमलायक—हे उद्धव! हमें जो हमारे योग्य हो, वही उपदेश दो। तुम्हारा यह निर्गुण ब्रह्म के ध्यान का उपदेश तो अग्नि से भी गरम है, बताओ इसे कैसे स्वीकार करें? तुम्ही बताओ, यहां पर इतनी गोपियों में इसको सीखने वाली कौन है। जो लोग योगी यति हैं और माया से रहित हैं, उन्हें ही यह उपदेश अच्छा लगता है। सब लोग कहते हैं कि अपने विरुद्ध बात को कोई क्यों सुनेगा। तुम स्वयं अपने मन में विचार कर देखो, यह सुनकर कि तुम हमें ऐसा उपदेश दे रहे हो, तुम्हें ही सब बुरा कहेंगे जो अपने शरीर पर चन्दन और अगर की सुगन्धि लगाया करती हैं, वे भला भस्म कैसे रमा सकती हैं भला अंधी आंखों में अंजन लगाने से वे कैसे शोभा पा सकती हैं?

कहां लौं कीजै—तुम उस निराकार ब्रह्म की बहुत बड़ाई करके क्या लोगे ? यह तो अत्यन्त अगाध है, यहां तक कि वेद वचन भी उसका पार नहीं पा सकते। फिर मन तो भला वहां पहुंच ही कैसे सकता है ? जिस के रूप रेखा, आकार-प्रकार शरीर आदि कुछ नहीं, जिसके कोई संगी साथी भी नहीं,उस निर्गुण ब्रह्म से भला निरन्तर प्रीति कैसे निभाई जा सकती है ? हे उद्धव ! तुमने तो निर्गुण के ध्यान का उपदेश देकर ब्रज में नई नीति चला दी है कि जल के बिना भी तरंग, दीवार के बिना भी चित्र और बिना मनके भी चतुरता हो सकती है। हमारा मन तो उस कृष्ण की मधुर मूर्ति में लग गया है, रोम रोम उसी में उलझ रहा है। श्याम के सुन्दर रूप को देखकर ये मन और नेत्र बलिहारी है।

मीरा की पदावली

शब्दार्थ

पृष्ठ ७३——बांके बिहारी——श्री कृष्ण। मोर मुकट—मोर मुकुट। अल्काकारी—काली जुल्फों वाले। छबि—रूप। राजति—शोभा पाती है। भक्त वछल—सेवकों पर कृपा रखने वाले। कबर-कब। देख्यूं—देखूं। ग्रिह—घर।

पृष्ठ ७४——नाऊं—नीचे करूं। त्रिकुटी महल—जहां आत्मा निवास करता है, ज्ञान चेतना। सुन्न महल—ब्रह्म रंध्र, तादात्म्य भाव। बेल-लता। राणों—महाराज ने। भुजंगम—सर्प। दिवाणी-पगली, मस्त। सूती छी—सोई थी। दाध्या—जला हुआ। हिवड़ी—बहुत बड़ा। करबत—काम। सार्यो—पूरा किया।

पृष्ठ ७५—बौरी—पगली। औषद—दवा। कमठ—कछुआ। बांण—टेक, लत। दांवन—पल्ला, चादर। रावरी—आपकी।

पृष्ठ ७६—खतजु—अपराध। कनक—सोना। नट—मुकरे, इंकार

फ़रे । हटकी—मना किया ; घोल मठोल—निन्दा, शिकायत । गटकी—पी गई ।

मीरा की पदावली

सरलार्थ

हमरौ प्रणाम—मैं उस बांकेबिहारी को प्रणाम करती हूँ, जिनके मस्तक पर मोर मुकुट और तिलक तथा अलकों के साथ कुण्डल शोभित हो रहे हैं, जो मधुर अधरों पर बंशी बजा कर प्रसन्न होकर राधा प्यारी को प्रसन्न कर रहे हैं। गिरधारी मोहन की इस शोभा को देख कर मीरा मगन हो गई है।

बसो मोरे—हे नन्दलाल, तुम सदा मेरे नेत्रों में बस जाओ। आप की श्यामल मूर्ति बड़ी सुन्दर है और विशाल नेत्र हैं। सुधारस से भरे हुए अधरों पर मुरली, हृदय पर वैजयन्ती माला, कमरमें तड़ागी और पैरों में झांझरों का शब्द होरहा है। मीरा के प्रभो ! आप भक्तवत्सल व सन्तों के सुखदायक हैं।

तनक हरि—हे भगवान् ! कुछ मेरी ओर भी देखिये। मैं तो रात दिन तुम्हारी ओर देखती रहती हूं, पर तुम नहीं देखते। बड़े कठोर हृदय वाले हो गये हो। मुझे तुम्हारी कृपा दृष्टि की ही आशा है। मेरी और किसी तरफ रुच नहीं है। मुझे तुम्हारे जैसा और कहीं नहीं मिल सकता, किन्तु तुम्हारे लिएतो मेरी जैसी लाखों करोड़ों हैं। मैं खड़ी २ प्रार्थना करती हूं और प्रार्थना करते२ प्रातः काल हो गया है। मीरा के प्रभु भगवान् अविनाशी हैं, वे अवश्य शीघ्र प्राण दान करेंगे।

नैणा लोभी—ये मेरे लालची नेत्र एक बार कृष्ण की शोभा को देख कर फिर उससे हट नहीं सके। पैर से सिर तक रोम २ को देखते हुए अधिक से अधिक ललचाते जारहे हैं। मैं अपने घर में खड़ी थी कि कृष्ण उधर से निकले। उनका मुख चन्द्रमा के समान प्रकाशित हो रहा था और वे मन्द २ मुस्करा रहे थे। सब लोग तथा कुटुम्बी मना करते और बातें बनाते हैं। किन्तु ये चंचल नेत्र किसी की मनाही को नहीं मानते और दूसरे के हाथ में बिक गये हैं। कोई भली कहे चाहे बुरी, सबको शिर माथे स्वीकार करती हूँ। किन्तु कृष्ण के बिना पल भर भी नहीं रह सकती।

पृष्ठ ७४ नैनन बनज—यदि मैं प्रियतम को पालूं तो उन्हें अपने नेत्रों में बसा लूंगी। इन नेत्रों में मेरे स्वामी रहते हैं। अतः डरती हुई पलकें भी नहीं हिलाती। त्रिकुटी रूप महल में झरोखा बना हुआ है। वहां उसकी झांकी पाऊंगी। ब्रह्मरन्ध्र रूपी महल में समाधि लगाकर सुख की शैया बिछा लूंगी। मीरा प्रिय गिरधर पर बलिहारी है। मेरे तो कृष्ण के सिवाय और दूसरा कोई नहीं है। मोर मुकुट धारी ही मेरे पति हैं। कुल की मर्यादा को मैंने छोड़ दिया है तो मेरा कोई क्या बिगाड़ेगा? सज्जनों के पास बैठ २ कर लोक लाज भी खो दी है। आंसू रूपी जल से सींच २ कर मैंने प्रेम बेल बोई है। अब यह बेल फैल गई है और आनन्द का फल प्राप्त हो गया है। मैं भक्तों को देख कर प्रसन्न और संसारी लोगों को देख कर दुःखी होती हूँ। हे गिरधरलाल! अब अपनी दासी मीरा का उद्धार कर दीजिये।

मैं गोविन्द गुण—मुझे तो गोविन्द के गुण ही गाने हैं। राजा तो रूठ कर अपना नगर रख लेगा। पर भगवान के रूठ जाने पर फिर कहां ठिकाना है? राणा ने विष का प्याला भेजा, पर मैंने उसे शालिग्राम समझा। मीरा तो प्रेम की दिवानी होरही है। वह तो कृष्ण ही को पति रूप में पायेगी।

रे पपइया—ऐ पापी पपीहा! तूने कब का पुराना बैर निकाला? मैं अपने घर में सो रही थी, कि तूने पी पी पुकारकर जलेपर नमक छिड़क दिया।

पृष्ठ ७५—तू उस वृक्ष की शाखा पर उड़ बैठा और बोल २ कर कंठ थका लिया। मीरा तो अपने स्वामी गिरधर नागर के चरणों में चित्त लगाये हुए है।

मैं हरि बिन—हे सखी, मैं कृष्ण के बिना क्यों जीवित रहूँ? मैं प्रिय के कारण पागल हो गई हूँ, जैसे लकड़ी को घुन खा जाता है। मुझे अब कोई औषधि नहीं लगती। कछुआ मेंढक भी जल में उत्पन्न होते हैं और उसी में रहते हैं। किन्तु मछली पानी से बिछुड़ते ही तड़प २ कर मर जाती है। मैं प्रिय को ढूंढने के लिये वनों में भटकती थी कि कहीं वंशी की ध्वनि सुनाई दे, और सुखदायक प्रिय मिल जाये।

कोई कहियो रे—कोई प्रियतम के आने का सन्देश दे दो, वे न स्वयं आते हैं और न कुछ लिखकर ही भेजते हैं। उन्हें ललचाने की आदत पड़ गई है। ये मेरे दोनों नेत्र भी कहना नहीं मानते। इनसे सावन की नदियों की भांति आंसू बह रहे हैं। मैं विवश हूँ, क्या करूं? उड़ जानेके लिए तो पंख भी नहीं हैं। हे प्रभो, तुम कब मिलोगे? मैं तो तुम्हारे ही आंचल की दासी हूँ, अब मैं आपकी शरण में आगई हूँ। हे कृपा निधान, अब मेरी रक्षा करो। तुमने अपराधी अजामिल, सदन कसाई, जल में डूबते हुए गजराज, गणिका तथा अन्य बहुत से पापियों का उद्धार किया है। कुब्जा और नीच भीलनी को भी तुमने तारा है। इसे सारा संसार जानता है। कहां तक कहूं, वेद पुराण भी गिनते २ थक गये हैं? मीरा कहती है कि हे प्रभो! दोनों कान देकर सुनलो कि मैं तुम्हारी शरण में हूँ।

मेरो मन—मेरा मन राम २ ही रटता है। ऐ प्राणी! राम नाम जप ले। इससे करोड़ों पाप कट जाते हैं और जन्म जन्मान्तरों के कर्मों के संस्कार नष्ट हो जाते हैं।

पृष्ठ ७६ यह सोने के कटोरे में भरा हुआ नाम रूपी अमृत है। इसे पीने से कौन नटेगा? मीरा कहती है, अविनाशी हरि प्रभु से मेरा तनमन लग गया है।

गोविन्दसू—पहले जब मैं कृष्ण से प्रेम करती थी, तभी क्यों न रोका? छोटा सा वट वृक्ष का बीज अब वृक्ष रूप में बहुत बड़ा फैल चुका है। अब तो अन्य किसी बातका विचार नहीं हो सकता किनारे की छाया पड़ रही है। जिस प्रकार नट रस्से पर अपने कर्तब दिखाता चूक जाय तो गिर कर मर जाय, उसी प्रकार यदि कृष्ण के प्रेम के मार्ग से हट जाऊं, तो मेरे लिए कहीं भी स्थान न रहे। रसना (जिह्वा) के गुण (रस्सी) में बहुत कड़ी गांठ लग गई है। उसे छुड़ा२ कर मैं हार गई, किन्तु वह नाम की रटन रूपी गांठ खुलती नहीं। घर २ में मेरी चर्चा चल रही है, किन्तु मैंने तो सभी को प्रणाम कर लोक लाज को हटा दिया है। अब मैं मदमाती हस्तिनी के समान प्रेम में मग्न होकर घूमती फिरती हूं। मैंने भक्ति की बून्द हृदय में पी ली है।

नन्द दास

भ्रमर गीत

शब्दार्थ

पृष्ठ—७६—ब्रज नागरी=ब्रज की युवतियां। सील=स्वभाव। लावन्य=सौंदर्य। अवसर=समय, मौका। मधुपुरी=मथुरा। नेति=यह नहीं। तरु=वृक्ष। अमल=स्वच्छ। वारि-जल।

पृष्ठ ८०—तरनि—सूर्य। दुराई=छिपना। मांझ=में। अच्युत=परमेश्वर। दृष्टि-विकार=आंखोंकी खराबी। अधोक्षज=नीचेकी ओर। नास्तिक=ईश्वर की सत्ता नहीं मानने वाले।

पृष्ठ ८१—अरुन—लाल। मधुप=भौंरा। तर्क-वितर्क=वादविवाद। गोरस=दूध,इन्द्रिय सुख। कपटी=छली। कुसुम=फूल। मतिमंद-मूर्ख। दुविध=द्वैत भाव। मधुकारी=सुख देने वाला। गांठि=बंधन। जोग=सन्यास, विरक्ति।

पृष्ठ ७२—षट्पद =भौंरा। आनन =मुख। बादि=छोड़ दो। कंथा=कौपीन। पधारो=लौटो। संज्ञा=नाम। लोपी=नष्ट कर।

पृष्ठ ८३—मुरारि=मुरानामकराक्षस को मारने वाले कृष्ण। गिलानि=लज्जा। सिगरी=सभी। कृत कृत=सफल। मरजाद=सीमा। पी=स्वामी पटतर=उपमा। उरमद=हृदय का अभिमान। साध=योगी, महात्मा। बृथा=निष्फल। निवारियां=मना किया। जीवनमूरि=जीवन देने वाली बूटी।

पृष्ठ ८४—सुभाय=स्वभाव से, अपने आप। निर्दय=कठोर। अवलंवी=सहारा लेते हैं। नातरू=नहीं तो। आवेश=जोर। उलहि=फैलकर। कल्प तरु=कल्प वृक्ष।

भ्रमर गीत

सरलार्थ

पृष्ठ ७६, ऊद्धव को=हे रूप शील सौन्दर्य तथा अन्य सब गुणों क

भण्डार प्रेम की पताका रूपिणी व साकार रस की प्रतिमा, सुख देने वाली, सुन्दर कृष्ण के साथ वृन्दावन के कुंजों में विलास करने वाली व्रज युवतियों! उद्धव का उपदेश सुनिये।

कहन श्याम—मैं तुम्हें श्याम का एक सन्देश देने आया हूँ। अब तक, मुझे वह संदेश सुनाने का समय नहीं मिला था। इसलिए, मन में सोच रहा था, कि कब मुझे एकान्त स्थान मिले, तो कृष्ण का सन्देश देकर, फिर मथुरा लौट जाऊं।

जो उनके—यदि ब्रह्म के कोई गुण होता, अर्थात् यदि वह सगुण रूप वाला होता, तो वेद "नेति नेति" (उसके गुण नहीं है) इस शब्द के द्वारा उनका वर्णन क्यों करता? वह निर्गुण ब्रह्म सगुण आत्मा का रूप धारण कर जगत् में विलास किया करता है? वेद पुराण खोज कर भी उसका एक भी गुण नहीं पा सके। जो स्वयं गुण के भी अन्य गुण हो सकते हों, तो आकाश जैसी शून्य वस्तु भी किन्हीं गुणों से लिप्त हो जायगी। हे व्रज नागरियो! इसे ध्यान देकर सुनो (और इसी लिए ब्रह्म को निर्गुण निराकार मानकर उसी की उपासना किया करो)।

जो उनके—तब व्रज युवतियाँ उत्तर देती हुई कहती है कि हे श्याम के सखा! सुनो। यदि इस ब्रह्म के गुण न हों तो यह संसार के सभी गुण कहां से प्रकट होगये? तुम हमें बताओ कि क्या कभी बीज के बिना भी वृक्ष उत्पन्न हो सकता है? उन्हीं के गुणों का प्रतिबिम्ब तो माया रूपी दर्पण में प्रतिबिम्बित हो रहा है। इसलिए उस ब्रह्म के शुद्ध गुण माया के सम्पर्क से उसी प्रकार मलिन हो गये हैं, जिस प्रकार निर्मल जल कीचड़ के साथ मिल कर मलिन हो जाता है।

पृष्ठ ८० प्रेमाजु—प्रेम तो वह वस्तु है, जोकि प्रेमी को देखते ही उसके प्रति तन्मय कर दे। किन्तु जब तक किसी वस्तु को देखा ही न जाय तब तक उसके प्रति भला अनुराग कोई हो ही कैसे सकता है? जिस से सूर्य और चन्द्रमादि ने अपना रूप ग्रहण किया है, उस ब्रह्मको गुणातीत कैसे (गुणों से रहित) समझना चाहिये?

तरनी अकाश—अकारमात तेजस्वी सूर्य रूपी साकार ब्रह्म श्री कृष्ण

आकाश में सन्मुख रहता हुआ भी छिप रहा है। किन्तु दिव्य दृष्टि के बिना किसी को भी कहो कब दिखाई दे सकता है? जिसकी यह दिव्य दृष्टि नहीं है, उसे वह नहीं दिखाई दे सकता। अपने कर्म बन्धनों के कुएं में गिरे हुए लोगों को इस पर विश्वास भी तो नहीं हो सकता।

जो गुण आवै—संसार के ये जो भी गुण दिखाई देते हैं, वे सब ईश्वर रूप ही तो नहीं हैं। अच्युत श्री कृष्ण इन सब से भिन्न और निर्लिप्त हैं। वे भगवान् विष्णु, इन्द्रिय या दृष्टि के विकारों से रहित हैं। अतः उनके शुद्ध स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करो, ताकि मनस्तुष्टि प्राप्त हो सके।

नास्तिक जे हैं—हे श्याम के सखा! सुनो, जो लोग नास्तिक हैं, वे भला उस प्रेम स्वरूप को क्या पहचानेंगे? वे तो प्रत्यक्ष सूर्य को छोड़कर धूप की परछांई को ही ग्रहण करना चाहते हैं। हमें तो उस कृष्ण के रूप के सिवा और कुछ भी अच्छा नहीं लगता, जो कि अपने हाथ की झलक से करोड़ों ब्रह्म दिखा देता था।

ताही छिन—उसी समय एक भौंरा उड़ता हुआ, कहीं से वहां आ पहुंचा और ब्रज-वनिताओं के समूह में गुंजता हुआ शोभित होने लगा। उसे देखकर यों लगा कि वह गोपियों के चरणों को लाल कमल दल जानकर उनपर चढ़ना चाहता है, अथवा मानो उद्धव मधुकर का रूप धारण कर, वहां पहले ही आ पहुँचा है।

ताहि भंवर—उसी भंवरे से सब गोपियां प्रत्युत्तर की बातें कहने लगीं और तर्क वितर्क से युक्ति प्रेम रस की व्यंगभरी बातें भी करने लगीं कि-हे भ्रमर तुम हमारे चरणों को मत छुओ, हम तुम्हें चोर समझती हैं। नन्दकिशोर मोहन भी तुम्हारे समान कपटी थे। अतः यहां से दूर हो जाओ।

कोउ कहै—कोई कहने लगीं कि इस भ्रमर ने भी उन (श्रीकृष्ण) का ही रूप धारण कर लिया है। यह भी श्याम और पीतवर्ण का है। इसकी गुंजार ही मधुर वचन हैं और झंकार ही झांझरें हैं। उस पुर (मथुरा) में माखन चुराकर फिर इसी ब्रज-भूमि में आगया है। इसका कोई विश्वास मत करो। इसने कपट वेश धारण कर रखा है। हमारा भी कहीं कुछ चुरा न लेजाय।

कोउ कहै—कोई कहने लगी कि तू रस की महत्ता क्या समझे? तू अनेक फूलों

के पास भटकने वाला है और सब को अपने ही समान समझता है। हे मूर्ख ! तू हमें भी अपने समान बनाना चाहता है ? कपट के वेश से दुविधा का ज्ञान उत्पन्न करके अर्थात् श्रीकृष्ण और ब्रह्म को अलग बतला कर, प्रेम के आनन्द में, दुःख उत्पन्न किया चाहता है।

कोउ कहै—कोई कहने लगी कि ऐ मधुप ! तुझे भला मधुकारी (मधुरता उत्पन्न करने वाला) कौन कह सकता है ? क्योंकि, तू तो अपने मुख में योग की चर्चा लिए फिरता है और व्यर्थ ही मे गांठों (माया की ग्रन्थियों या काठ की कठोर गांठों) को काटता फिरता है। बहुतों का खून किया अर्थात् उन्हें कड़वी बातें कह कर सताया। इसी लिए तेरे होंठ लाल रंग में रंग रहे हैं। अब तुम ब्रज में किसकी घात करने आए हो ? हे पापी ! यहां से चला क्यों नहीं जाता ?

पृष्ठ८२ कोउ कहै—हे भंवरे ! तू सचमुच प्रेम के विषय में षट्पद (छःपैरों वाला) पशु ही निकला। तूने अब तक इस ब्रज भूमि में किसी को नहीं पहिचाना। तेरे मुख पर दो सींगहैं और काला पीला शरीर है। विष को अमृत के समान समझता है और वास्तविक अमृत को देख कर डरता है इसलिए तेरी यह रसिकता व्यर्थ ही है।

कोउ कहै—कोई कहती है कि हे भ्रमर ! तू तो यहां उल्टा उपदेश देने आया है। जो पहले ही मुक्त होचुके हैं, उन्हें फिर कर्म करने का उपदेश दे रहा है। जिन्हों ने वेद और उपनिषदों के सार कृष्ण के गुणों को पहले ही ग्रहण कर लियाहै, योगकी पाठशाला में उन्हीं की आत्मा को फिर से शुद्ध करने के लिये, तुम बार २ उपदेश दे रहे हो।

कोउ कहै—कोई कहती है कि हे भ्रमर ! तुम्हें लज्जा नहीं आती कि तुम्हारा सखा कृष्ण अब कुबड़ी का नाथ कहलाता है ? गोपी नाथ की पदवी तुच्छ थी। उस कुबडी दासी की जूठन खाकर अब तो यदुकुल पवित्र होगया होगा ? बोलने के लिए मरते हो ?

कोउ कहै—कोई कहती है कि हे भ्रमर ! कृष्ण तो योगी (गुरु) हैं और तुम उनके चेले हो। तुम दोनों ने कुब्जा रूपी तीर्थ में जा कर अपनी

इन्द्रियों को मैला कर लिया है। अब मथुरा की याद भुलाकर, यहां गोकुल में आ गए हो, किन्तु यहां तो सब सच्चे प्रेमी रहते हैं, तुम्हारा कोई ग्राहक नहीं। आप यहां से बिदा हो जायं।

यहि विधि—इस प्रकार कृष्ण का स्मरण कर, गोपियां उद्धव से कह रही हैं। सम्पूर्ण मर्यादा को नष्ट कर, वे उसे भ्रमर के रूप में सम्बोधित करके इस प्रकार कह रहीं हैं।

पृष्ठ ८३—उसके बाद सब ब्रज-नारियां "हे करुणामय! हे केशव! कृष्ण! मुरारी!" कह कर एक बारगीं रोपड़ीं, उनका हृदय फट चला।

प्रेम प्रशंसा – उनकी दशा देख कर, उद्धव प्रेम की प्रशंसा करने लगे कि इन्होंने जो शुद्ध भक्ति प्रकट की, उससें मेरे सब सन्देह, ज्ञान या अभिमान या ग्लानि और मूर्खता आदि नष्ट हो गए हैं। मुझे यह कहते हुए, बड़ा आश्चर्य होता है, कि ये कृष्ण के सच्चे उपासक हैं। मैं तो इनके दर्शन मात्र से ही कृतकृत्य हो गया हूं और मेरी ग्लानि का मैल मिट गया है!

जो जैसे जो लोग इस प्रकार कुल की मर्यादा को मिटा कर भी मोहन का ध्यान करते हैं, वे प्रेमपद के परमानन्द को क्यों न प्राप्त करें? ज्ञान योगादि सब कर्मों से प्रेम बहुत उत्कृष्ट है, यह बात बिल्कुल सही है। प्रेम के आगे इन सब वस्तुओं को हीरे के सामने कांच की उपमा देता हूं। ये योग आदि तो बुद्धि के भ्रम मात्र हैं।

धन्य २—जो लोग इस प्रकार, कृष्ण की उपासना करते हैं, वे धन्य हैं। बिना प्रेम के भला कोई पारस को कैसे प्राप्त कर सकता है? मेरे इस तुच्छ ज्ञान को, हृदय के अहंकार को, उपाधि ही कहा जा सकता है। अब मुझे ज्ञात हुआ कि ज्ञान तो ब्रज-प्रेम के आधे के बराबर भी नहीं है। इसके लिए तो लोग व्यर्थ परिश्रम करके थकते हैं।

पुनि कहिं—फिर वे गोपियों के चरण पकड़ कर कहने लगे कि पहले इन्हें मैं कृष्ण प्रेम से हटाता था। तब इन सबने मुझे भ्रमर नाम से सम्बोधित कर मेरी खूब निन्दा की। अब तो मैं ब्रज भूमि की चरणों की धूलि बनकर रहूंगा, ताकि मुनियों को भी दुर्लभ सब सुख और जीवन के आधार भूत ब्रज वासियों के पद मुझ पर पड़ा करें।

पृष्ठ ८४—कैसे होहुं—मैं इस व्रज भूमि के वनों में, किसी प्रकार वृक्ष या लता ही बन जाऊं, ताकि आते जाते व्रज वासियों की परछाइं ही मुझ पर पड़ जाया करे। यह बात भी तो मेरे वश में नहीं, जो मैं कुछ उपाय करूं। यदि कृष्ण प्रसन्न हो जायें, तो मैं उनसे यही वर मांगूगा कि मुझे कृपा कर यह देदो।

करुणा मयि—उद्धव मथुरा में आकर श्री कृष्ण से कहने लगे कि तुम्हारी यह रसिकता झूठी ही है। जिस प्रकार बंधी हुई मुट्ठी में किसी वस्तु का वास्तविक स्वरूप दिखाई नहीं देता, वैसे ही तुम्हारी रसिकता व्रज के बिना ज्ञात नहीं होती। मैंने व्रज में जाकर तुम्हारे निर्दय स्वरूप को देख लिया है। जो तुम्हारा सहारा लेते हैं तुम उन्हीं को कुएं में धकेलते हो, यह भला कहां का धर्म है?

पुनि २ कहि—वे बार २ कहने लगे कि, चलो, वृन्दावन में चलकर रहो और प्रेम की पुंज गोपियों के साथ रहकर प्रेम को प्राप्त करो और सब काम छोड़कर उन्हें सुखी करो। नहीं तो सब स्नेह सम्बन्ध अभी टूटा जाता है। फिर क्या करोगे?

सुनत सखा के—उद्धव सखा के वचनों को सुनकर कृष्ण के दोनों नेत्र भर आये। प्रेमावेश में मग्न हो गये और शरीर की सुध-बुध भी न रही, श्याम शरीर का रोम २ गोपिकामय हो गया। मानो, कृष्ण कल्प वृक्ष और व्रज वनिताएं उनके अङ्ग से अंकुरित हुए पत्ते हो गई हों।

तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास

मंथरा-कैकेयी संवाद

शब्दार्थ पृष्ठ ८६

गिरा—सरस्वती। उछाहू—खुशी। दाहू—जलन। किराती—भीलिनी। अनमनिहमि—चिंतित है। गालु—बढ़कर बातें करना। सिख—शिक्षा, दण्ड

सालु - दुःख । जनेसु—राजा । तुराई—तुरीय अवस्था, बेसुधी । अरगानी—दुष्टा ।

पृष्ठ ६० — पुर—पूरा । दिनकर कुल—सूर्यवंश । छोहू—कृपा । छोभ—व्यथा । ठकुर सोहाती—हां में हां मिलाना । अनभल—बुराई । चूक—गलती, अपराध । गूढ़—गंभीर । सबरी—भीलिनी । भावी—होतव्यता, नियति । फाबी—सफल । साढ़ सती—शनीचर ।

पृष्ठ ६१— सोहाग—मान, भाग्य । सालु—कंटक । प्रबोधु—उपदेश । पाखु—पन्द्रह दिन । सुधि—खबर । विधि—ब्रह्मा । बल भाषी—जोर देकर कहती हूं । भामिनि—सुन्दरी ।

पृष्ठ ६२—कद्रु—सर्पों की माता । विनता - गरुड़ आदि पक्षियों की माता । सहमि—डरकर । तनपसेऊ—शरीर से पसीना आ गया । बकिहि—बगुली । मराली हंसिनी । अघ—पाप । भरब—बिताऊंगी । ऊना—दुख मान कर, कम जानकर वासर—दिन । जामिनि—रात । कस न—कैसे नहीं । पाहन—पत्थर । बलिपशु—यज्ञ का बलिदानी बकरा । माहुर—विष ।

पृष्ठ ६३ सुधि - याद । थाती—धरोहर । जुड़ावहु—ठंडी करो हुलासू—हर्ष । चख—आंख ।

राम धाम—श्रवण—कान । सरि—नदी । रूरे—सुन्दर । जलधन—बादल । निदरहिं—अपमान करते हैं । मानस हृदय, मान सरोवर । जीहा जीभ । मुक्ताहल—मोतियों के ढेर ।

पृष्ठ ६४—सुभग अच्छा । नासा—नाक । निवेदित—अर्पित । मंत्रराज—'राम' का नाम । रति—प्रेम । दम्भ—पाखंड । जननी—माता । सदन—घर । विप्र—ब्राह्मण । धेनु—गाय ।

पृष्ठ ६५—खच—टुकड़ा । अपवर्ग—मोक्ष । निरंतर—बराबर ।

राम राज्य—त्रैलोका—आकाश, पाताल, पृथ्वी । बरनाश्रम—वर्णधर्म । विरुज—रोग रहित । निर्दम्भ—पाखंड हीन । अबुध—मूर्ख । कृतज्ञ—उपकार मानने वाला । नभगेश—गरुड़ । मेखला—करधनी । प्रभुता—बड़ाई ।

पृष्ठ ६६—खगेश—गरुड़ । फनीश—शेषनाग । सारदा—सरस्वती । झारी—प्राणी । दंड—लाठी, सजा । नर्तक—नाचने वाला । भेद—बनावट ।

पंचानन—सिंह । सुरभि—सुगाय । सबहीं—देती है । संकुल—पूरित । मयूख—चाँदनी, अमृत । वारिध—मेघ ।

कलि महिमा

ग्रसे—पकड़ लिया । मति—चाह । कल्पि—गढ़ कर । पंथ—राह ।

पृष्ठ ९७ हरिजन—गरुड़ । स्मृति—शास्त्र । अनुशासन - कानून । निगम—वेद पुराणों शास्त्रों का । सयान—बुद्धिमान् । भच्छाभच्छ—खाद्य-अखाद्य । लबार—झूठा । मर्कट—बन्दर । उदर—पेट ।

पृष्ठ ९८—बादहिं—विवाद करते हैं । अभेद वादी—अद्वैत वादी । निरच्छर—मूर्ख । वृषली—शूद्रा । विवेक—ज्ञान । विरति—वैराग्य । दाम—धन । कौतुक—तमाशा । अपी—दरिद्र ।

पृष्ठ ९९—वृन्द—समूह । व्रात—समूह । दुकाल—दुर्भिक्ष । मार—कामदेव । तामस—राक्षस । जामहिं—लगते हैं । पंचदश—पन्द्रह । संवत—वर्ष । कल्पांत—प्रलय तक । बगरे—फैले । व्यालारि—गरुड़ । अगार—भण्डार । निस्तार—मुक्ति ।

यज्ञ-रक्षा

बन्दि—प्रणाम कर । आयसु—आज्ञा । पाथोज—कमल ।

पृष्ठ १००—कलित—सुन्दर । खौरि—लेप । सरोरुह—कमल । रजनी, चर—राक्षस । दामिनी—बिजली । पावक—अग्नि । घन—मेघ । अनंग—काम देव । मग-लोग—राही ।

कौशल्या की चिंता

धौं—तरह । कौशिक—विश्वामित्र । उबटि उबटन लगा कर । काढ़ि—निकाल कर ।

पृष्ठ १०१—निमेषनि—पलकों की तरह । सुठि—सुन्दर । पनह—पदत्राण, जूता ।

श्रीकृष्ण की बाल लीला

बानि—लत, टेक । युक्ति—उपाय । उबरन—बचाव । भाजन—बर्तन । पानि—हाथ । बदन—मुख । केलि—खेल ।

पृष्ठ १०२—उरहना—शिकायत । सौं—शपथ । हौंहो—मैंही । मीचि—

बंद कर। सकुचि—लजाकर।

उद्‌बोधन

बिलगान्यो—अलग हुआ। गेह—घर। दारुण—कठिन। भव-सूल—सांसारिक कष्ट। मृग-भ्रम वारि-मरुस्थल का जलाभास, मृगमरीचिका। जरा-बुढ़ापा। मज्जसि—स्नान कर। त्रयकाल-भूत, भविष्य, वर्तमान।

पृष्ठ १०३—निरंजन-अदृश्य। संसृत—संसार। पुरीष—मल। कर्दमावृत—कीचड़ से भरा। निकाय-शरीर। चक्रपाणी—भगवान् विष्णु। प्रचंड-कठोर। व्याधि—रोग।

पृष्ठ १०४—व्यतिरेक-विलगाव। रात्यो—रंगा हुआ। आवर्त—जलके भंवर। प्रतिहत—नष्ट। महाभव—जन्म। अवगाही—डूबे। कैवल्य—मुक्ति। द्रवै—दयालु हो।

पृष्ठ १०५—विकार—बुराई। निरामय-अविवेक हीन।

राम विवाह

नगर—शहर। निशान—धौंसा। राचहीं-रचना करते हैं।

पृष्ठ १०६—पन—प्रतिज्ञा। भावतो—चाहा हुआ। मुदित—आनंदित। तृण तोरी—बलैया लेकर।

बनवास

सिथिल—थकित। काम-इच्छा-कामदेव। मन-हृदय। बाणी-वचन। कुलिश—वज्र। जाई—पैदा हुई।

पृष्ठ १०७-आतुरता—जल्द बाजी। ग्राम वधू—गांव की बहुएं। सयानी—बुद्धिमती। लोचन लाहु—दर्शन का लाभ। सरासन, सायक-धनुष बाण। तड़ाग—सरोवर। कंज-कमल। सिलीमुख—भौंरा। रति नायक—कामदेव।

लंका दाह

बालधी-पूंछ। रसना-जीभ। व्योम बीथिका—आकाश की राह। कृसानु-अग्नि। जातुधान—राक्षस। कानन—फुलवारी। बसन—वस्त्र। घने घर-अनेकों गृह। अध उर्द्ध-नीचे ऊपर। हाटक—सोना। कनक—सोना। ताप-गर्मी।

पृष्ठ १०८—सुरारि—रावण। उपचार—चिकित्सा। समीर सूनु—हनुमान्। रजाय—आज्ञा। जातरूप—सुवर्ण। गाज—गर्जना। बात-जात—हनुमान।

पृष्ठ ११०—फंग—उछल। अम घात—चवस्दर। सइल—पर्वत। विद्दरनि—पहाड़ों की चोटी फोड़ने वाला। पिनाकी—महादेव। वधिर—बहरा। गर्भ-अर्भक—गर्भ के बच्चे।

पृष्ठ १११—आनन-श्री—मुख की शोभा। तीय—स्त्री। वीर—भाई।

पार्वती तपस्या

गिरिजा—पार्वती। अहिगन—सांपों का समूह। परसत—छूते। असन—भोजन। अपरना—पत्तों से भी विमुख। नवल—नवीन। धवल—उज्वल।

पृष्ठ ११२—कुंवर कुमारिका—पार्वती। ससिसेखर—महादेव। मृदु—कोमल। बिलगु—अन्यथा। भवरतनाकर—संसार रूपी समुद्र। बटु—ब्राह्मण, ब्रह्मचारी।

पृष्ठ ११३—भव—संसार। जटिल = कठिन। सरोष—क्रुद्ध। मुख पंच—पांच मुंह वाला। तिलोचन—तीन आंखों वाला। हठ—आग्रह। गोइअहि—छिपालेंगे। अचल सुता—पार्वती। बयारी—हवा।

पृष्ठ ११४—फनी—सर्प। विसिष—बाण। बरबर—मूर्ख, असभ्य। विपरीत—उलटा। सोधि—जांच कर। पुलक—हर्ष। सौंतुख—आगत। पेखत—देखते हुए।

मंथरा कैकेयी संवाद

सरलार्थ

पृष्ठ ८६ नामु मन्थरा—कैकेयी की मंथरा नामक दुष्टबुद्धि वाली दासी थी। सरस्वती उसे अपयश का पात्र बनाकर, उसकी बुद्धि को विपरीत करके चली गई।

दीख मन्थरा—मन्थरा ने अयोध्या नगरी की सजावट देखी और देखा कि नगर में चारों ओर सुन्दर मंगलमय बधाई के बाजे बज रहे हैं। तब उसने लोगों से पूछा कि आज किस लिये इतना उत्साह है। राम का राज तिलक सुनते ही उसका हृदय जल उठा। वह कुबुद्धि और कुजाति वाली मन्थरा मन में सोचने लगी कि किस तरह रात भर में काम बिगड़ सकता है। जैसे शहद के छत्ते को

लगा देखकर दुष्ट भीलनी सोचती है कि किस प्रकार मैं इसे प्राप्त करलूं ! तब वह रोती हुई भारत माता के पास पहुँची। उसे इस प्रकार उदास देखकर रानी ने हंस कर कहा कि तू आज ऐसी उदास क्यों है ? वह उत्तर कुछ नहीं देती और लम्बी २ आहें भर रहीं है तथा अनेक प्रकार के स्त्री-चरित्र कर आंसू गिराती जा रही है। फिर रानी ने हंस कर कहा कि तू बड़ी बड़बोली है, इसलिये शायद लक्ष्मण ने तुझे कुछ शिक्षा दी होगी, ऐसामेरा अनुमान है। फिर भी वह पापिनी कुछ उत्तर नहीं देती और नागिन के समान श्वास छोड़ती रही।

सभय रानी—तब रानी ने डर कर पूछा कि बोलती क्यों नहीं? राम महाराज, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, आदि सब कुशल से हैं ?

कत सिख देइ—भाई हमें क्यों कोई शिक्षा देगा और मैं भी किसके बल पर मुंह से बड़ी बात निकालूंगी ? और तुमने जो कुशल की बात पूछी सो तो राम को छोड़ कर और किस की आज कुशल हैं, जिन्हें महाराज आज युवराजपद दे रहे हैं ? आज कौशल्या के दैव अनुकूल हो रहा है। आज तो अभिमान उसके हृदय में समा ही नहीं रहा है। तुम स्वयं जाकर उस सारी नगरी की शोभा को देख क्यों नहीं लेती. जिसे देख कर मेरे मन में इस प्रकार क्षोभ हो रहा है ? तुम्हारा पुत्र विदेश में गया हुआ है, पर तुम्हें तो कुछ चिन्ता ही नहीं। तुम तो समझती हो कि बस महाराज मेरे वश में हैं। तुम्हें तो नींद शय्या और तुराई बहुत प्रिय है अर्थात् रात दिन सोई पड़ी रहती हो, अतः महाराज की कपट चतुराई को पहचान नहीं पाती। मन्थरा के इन प्रिय लगने वाले वचनों को सुन कर तथा उसके मन को मलिन जान कर केकई ने, कहा कि बस अब चुप रह। यदि तूने फिर कोई ऐसी बात कही तो हे घर-फोड़ी ! मैं तेरी जीभ निकलवा लूंगी।

काने खोरे—काने खोड़े कुबड़े लोग सदा कपटी और बुरी चाल वाले होते हैं। और स्त्री ऐसी हो तो और भी बुरी। वह भी यदि दासी हो तो कहना ही क्या ? (सभी बुराइयां एकत्रित हो गईं। मन्थरा में उक्त सभी बातें हैं। अतः इसका ऐसा स्वभाव होना उचित ही है) यह कह कर भरत की माता कुछ हंस पड़ी।

पृष्ठ ६० प्रिय वादनी—कैकयी कहने लगी कि हे प्रिय बोलने वाली! मैंने तो तुझे समझाया है। यों मुझे स्वप्न में भी तुम पर क्रोध नहीं आता। जिस दिन तेरा कहा सार्थक होगा, वह दिन बहुत ही मंगल दायक होगा। बड़ा भाई स्वामी और छोटा सेवक होता है, यही सूर्य वंश की सुन्दर रीति है। यदि सचमुच ही कल राम का राज्य तिलक है, तो हे सखी! मांग, मैं तुझे मुँह चाही वस्तु दूंगी। राम को यों तो सभी माताएं कौशल्या के समान ही प्रिय हैं, किन्तु फिर भी वह मुझसे विशेष स्नेह रखता है। मैंने उसके प्रेम की परीक्षा करके देख लिया है। यदि भगवान् कृपा कर मनुष्य जन्म दें, तो राम और सीता के समान ही पुत्र पुत्र-वधू दें। मुझे तो राम प्राणों से भी प्रिय हैं। उसके राज्य तिलक के कारण तुझे दुःख क्यों हो रहा है?

भरत सपथ—तुझे भरत की सौगन्द है। कपट और छिपाव को छोड़ कर सच कह कि इस आनन्द के अवसर पर तू क्यों दुःखी हो रही है? इसका मुझे कारण बता।

एक ही बार—मेरी तो एक बार बोलने से ही सब आशा पूरी हो गई। अब किस दूसरी जीभ से कुछ कहूं? मेरा तो यह भाग्य ही फोड़ने लायक है, अर्थात् मैं बड़ी अभागिन हूं, जो भले की कहते हुए भी, आप को बुरा लगा। जो लोग झूठी सच्ची बातें बना कर कहते हैं, तुम्हें वे प्रिय हैं, पर हे माई! मैं कड़वी लगती हूं। मैं भी अब ठकुर सुहाती ही कहा करूंगी, नहीं तो दिन रात मौन साधे रहूंगी। मुझे तो भगवान् ने पहले ही कुरूप बनाकर परवश कर दिया है। (पर इस में किसी का क्या दोष?) जिसने (पिछले जन्म में) जो बोया होगा, वही तो (इस जन्म में) काटेगा और जो दिया होगा वही पावेगा। कोई भी राजा क्यों न बने मेरी उसमें हानि ही क्या है? अब मैं दासी से रानी तो हो नहीं सकती। किन्तु मेरा तो यह स्वभाव ही जलाने योग्य है, जिससे कि तुम्हारा बुरा देखा नहीं जाता। इसी लिए मेरे मुंह से कुछ बात निकल गई। हे देवी, क्षमा करो, मुझ से बड़ा अपराध हुआ।

गूढ़ कपट—मन्थरा के इन गूढ़ रहस्य पूर्ण और कपट भरे प्रिय वचनों को सुनकर, स्त्रियों की सी ओछी बुद्धि वाली रानी ने देवताओं की माया के कारण, इस शत्रु मन्थरा को भी मित्र जान कर विश्वास कर लिया।

सादर—कैकयी मन्थरा को बार २ बड़े आदर के साथ पूछती है, जैसे

कि भीलनी के गान पर मृगी मोहित हो जाती है (उसी प्रकार उसकी बातों में आगई)। जैसी होनहार थी वैसी ही बुद्धि फिर गई। दासी ने देखा कि अब मेरा दांव चल गया। (कहने लगी कि) तुम तो पूछती हो, पर मैं कहते हुए डरती हूं। क्यों कि तुमने तो पहले ही मेरा घर-फोड़ी नाम धर दिया है। इस प्रकार अनेक प्रकार से गढ़ छील कर विश्वास बनाकर, तब, अयोध्या के लिये साढ़ सती की दशा के समान दुःखदायी मन्थरा बोली।

पृष्ठ ६०. हे रानी, तुमने कहा कि तुम्हे सीता राम बहुत प्रिय हैं और राम को भी तुम प्रिय हो, किन्तु सूर्य, जो कि कमलों को खिलाता है, भी पानी के बिना उन्हें जला कर राख कर देता है। तुम्हारी सौतिन कौशल्या तुम्हारी जड़ उखाड़ना चाहती है। तुम चाहो तो उपाय रूपी सुन्दर जल बनाकर उसे बचा लो।

तुम्हहिं न— अपने सुहाग के बल पर तुम्हें तो कुछ चिन्ता नहीं है। तुम तो राजा को अपने वश में समझती हो। महाराज मुंह के तो बड़े मीठे हैं, पर उनका मन बिलकुल मैला है और इधर तुम्हारा स्वभाव बड़ा सरल है।

चतुर गभीर—राम की माता बड़ी चतुर और गंभीर है। उसने अवसर देख कर अपनी बात बना ली। महाराज ने भरत को ननिहाल भेज दिया और राम की माता तुम्हारे विचारों को खूब जानती है कि दूसरी सौतिन तो मेरी भली भांति सेवा करती है, किन्तु भरत की माता अपने पति के बल पर अभिमान में भरी रहती है। हे माई ! कौशल्या को तुम्हारा कांटा चुभता रहता है, किन्तु वह उसे कपट चातुरी से प्रकट नहीं होने देती। वह राजा के तुम्हारे पर विशेष प्रेम को सौत होने के कारण देख नहीं सकती। अतः उसने प्रपंच रचकर और महाराज को वश में कर के राम के राज्य तिलक के लिए मुहूर्त निकलवा लिया है। तुम कहती हो, रघुकुल के लिए यह उचित है कि राम ही को राज्य तिलक हो। सभी को यह अच्छा लगता है, मुझे भी ठीक जंचता है। किन्तु जब मैं अगली बात सोचती हूं तो डरती हूं। अस्तु फिर जो कुछ भगवान् देंगे वही फल मिलेगा।

रचि पचि - इस प्रकार मन्थरा ने करोड़ों कुटिलपने की बातें बना कर कपट पूर्ण उपदेश दिया और ऐसी सैकड़ों कथाएं कहने लगी, जिनसे सौतों का

आपस में विरोध बढ जाए।

होनहार के कारण कैकेयी के हृदय में (कुबडी की बातों का) विश्वास हो गया, अतः वह फिर सौगन्ध दिला कर पूछने लगी। (तब कुबड़ी कहने लगी कि) मुझे क्या पूछती हो ? अपना हानि लाभ तो पशु भी पहचानता है। आज राज समाज को सजते पन्द्रह दिन हो गए, पर तुम्हें इसकी सूचना मुझसे आज मिली है। मैं तुम्हारे ही राज में खाती पहनती हूं, अतः सत्य कहने में मुझे कुछ दोष नहीं है। यदि मैं कुछ बात बनाकर झूठ कहूं, तो भगवान् मुझे उसका दण्ड दे। यदि कल राम को राज्य तिलक हो गया, तो समझ लो कि विधि ने तुम्हारे लिए विपत्ति का बीज बो दिया। मैं पत्थर पर लकीर खींचकर कहती हूं कि हे भामिनी, तब तुम दूध की मक्खी के समान हो जाओगी (जिस प्रकार दूध में से मक्खी निकाल कर फैंक दी जाती है, उसी प्रकार तुम भी तब इस राज्य परिवार में से पृथक् कर दी जाओगी)। यदि तुम अपने पुत्र भरत के साथ सेवा करती रहोगी तो इस घर में रह सकोगी। इसके सिवा और कोई उपाय नहीं रहेगा।

पृष्ठ ६२ कद्रू -- जिस प्रकार कद्रू ने विनता को दुःख दिया, उसी प्रकार कौशल्या भी तुम्हें दुःख देगी। भरत तो बन्दीगृह में रहेंगे और लक्ष्मण राम के होंगे।

केय सुता—कैकेयी इस कटु वाणी को सुनते ही सहम कर सूख गई कुछ भी उत्तर न दे सकी। शरीर पसीना पसीना हो गया और केले की भांति कांपने लगी। तब कुबड़ी ने अपनी जीभ दांतों तले दबा ली। करोड़ों कपट कहानियां कह कर, रानी को समझाने लगी कि धैर्य धरो। कैकेयी का भाग्य विपरीत हो गया अतः बुरी चालों वाली भी अच्छी लगती है, जैसे मन्थरा रूपी बगुली को हंसी समझ कर उसकी प्रशंसा करने लगी हो। हे मन्थरा ! सुन, तेरी सब बात सच है। आज कल मेरी दाहिनी आंख फड़कती रहती है। मैं नित्य प्रति रात को बुरे स्वप्न देखती रहती हूं। किन्तु अपने मोह के कारण तुझे कहती नहीं हूं। हे सखी ! क्या करूं ? मेरा स्वभाव ही बड़ा सीधा है, मैं अपना पराया भला बुरा कुछ नहीं समझ पाती।

अपने चलते—अपनी समझ में तो मैंने आज तक किसी का बुरा नहीं किया। फिर न जाने किस पाप के कारण दैव ने मुझे यह असह्य दुःख दिया है ?

नैहर जनक—भले ही मेरा सारा जन्म मायके में ही क्यों न बीत जाय, पर जीते जी तो मैं सौत की सेवा न करूंगी। जिसे भगवान् शत्रु के वश में रख कर, जीवित रखता है, उसका तो मरना ही अच्छा। इस प्रकार रानी के दीन वचनों को सुनकर कुबड़ी ने अपना कपट चरित्र आरम्भ किया (वह कहने लगी कि) मन में उदास होकर ऐसा क्यों कहती हो ? तुम्हारा सुख-सुहाग दिन दूना हो। जिसने तुम्हारा बुरा सोचा है, वही इसका फल पायेगा। हे स्वामिनी ! मैंने जब से इस कुमति को सुना है, तब से मुझे न दिन में भूख है, न रात में नींद है। मैंने ज्योतिषियों से पूछा, तो उन्होंने पत्थर पर लकीर खींच कर कहा कि भरत अवश्य राजा होंगे, यह बात सच्ची है। हे भामिनी, यदि करो तो उपाय बताऊं ? महाराज तुम्हारी सेवा के कारण वश में हैं।

परउँ कूप (कैकेयी कहने लगी कि) तेरे कहने पर तो मैं कूएं में भी गिर सकती हूं और अपने पुत्र तथा पति को भी त्याग सकती हूं। तू मेरा बड़ा दुःख देखकर ही तो कह रही है, फिर भला मैं तेरी बात को बड़े प्रेम के साथ क्यों न मानूंगी ?

कुबरी करि—तब कुबड़ी ने कैकेई को कुबलि-छुरी- बलि-का बकरा बनाकर, हृदय रूपी पत्थर पर कपट रूपी छुरी को तेज कर लिया। रानी अपने सिर पर विद्यमान निकट के दुख को भी उसी प्रकार नहीं देखती जैसे हरा घास खाता हुआ बलि का पशु अपने सिर पर मंडराती मौत को नहीं देखता। उसकी बात सुनने में तो प्रिय हैं, किन्तु परिणाम में भयंकर है। वह मानों शहद में विष घोलकर दे रही है।

पृष्ठ ६३—दासी कहने लगी कि हे स्वामिनी ! तुमने जो कथा मुझे कही थी, वह तुम्हें याद है कि नहीं ? महाराज के पास तुम्हारी धरोहर के दो वरदान हैं, उन्हें मांग लो और अपने हृदय को शीतल कर लो। अपने पुत्र को राज्य और राम को वनवास दे दो और सौतिनों के सब आनन्द को छीन लो। जब महाराज राम की सौगन्द खा लें, तो मांगना, ताकि वे फिर अपने वचनों से टल न जायें।

थोड़ आज की रात बीत गई, तो काम बिगड़ जायगा, अतः मेरे कथन को अपने हृदय में प्रिय समझो।

बड़ कुघात यह पापिन अत्यन्त कुघात कर कहती है कि कोप-गृह में जाओ। सावधान रहकर सब काम बनाना और सहसा विश्वास मत कर बैठना। रानी कुबड़ी को प्राणप्रिय जानकर उसकी बुद्धि की बार बार प्रशंसा करने लगी। तेरे समान मेरा संसार में कोई नहीं है, जो तू मुझ बहती हुई के लिये आधार बनी। हे सखी, यदि कल मेरा मनोरथ पूरा हो जाय, तो मैं तुझे अपनी आंखों की पुतली बना लूंगी। (इस प्रकार) दासी को अनेक प्रकार से आदर देकर, कैकेयी कोप-भवन में चली गईं। विपत्ति की बिजली चमकी, दासी वर्षाऋतु बनी, कैकेई की कुबुद्धि भूमि बनी, कपट रूपी जल पाकर अंकुर उत्पन्न हो गया, जिसके दो वर रूपी पत्ते लगे और जिसका फल दुःख हुआ।

राम धाम

जिन्ह—जिनके कान समुद्र के समान हैं, हे राम! और तुम्हारी कथायें नदियां बन कर जिनमें निरन्तर गिरती रहती हैं, किन्तु फिर भी वो कभी भरते नहीं, उनके हृदय तुम्हारे घर हैं। जिनके नेत्र चातक रूप हैं, जो आपके दर्शन रूपी मेघों के लिए सदा उत्सुक रहते हैं जो समुद्र नदी और तालाबों के जल की कुछ चिंता नहीं करते तथा केवल आपके दर्शन रूपी बूंद से ही संतुष्ट होते हैं उन्हीं के हृदय रूपी मंदिर में हे राम! तुम सीता और लक्ष्मण के साथ सदा निवास किया करो।

यश तुम्हार—जिनकी जिह्वा रूपी हंसिनी तुम्हारे पवित्र यश रूपी मान-सरोवर में, तुम्हारे गुण रूपी मोतियों को चुगती रहती है, हे राम! तुम उन्हीं के हृदय में वास करो।

पृष्ठ ६४ प्रभु प्रसाद—आपकी पवित्र कृपा रूपी सुगन्ध ही जिनकी नासिका में नित्य आती रहती है, जो पहिले आपको समर्पण कर भोजन करते हैं, देवता, गुरु और ब्राह्मण को देखकर जो झुककर प्रणाम करते हैं और प्रेम पूर्वक उनके संमुख नम्रता प्रदर्शित करते हैं, जिनके हाथ सदा राम के पदों की पूजा करते हैं, जो एक मात्र भगवान् का भरोसा ही हृदय में रखते हैं और किसी का नहीं,

और जिनके चरण सदा राम-तीर्थों में जाते हैं, हे राम ! तुम उन्हीं के हृदय में निवास करो। जो लोग तुम्हारे नाम रूपी मंत्र का जप करते हैं, परिवार के साथ तुम्हारी पूजा करते हैं, नित्य तर्पणादि अनेक विधियां करते हैं, ब्राह्मण-भोजन कराके अनेक प्रकार का दान देते हैं, गुरु को तुमसे भी अधिक जो मानते हैं और सब प्रकार संमान पूर्वक उसकी सेवा करते हैं।

सब कर मांगहिं—और जो सभी कार्यों का एक ही फल मांगते हैं कि राम के चरण में प्रेम हो, उन्हीं के मन मन्दिर में सीता और राम दोनों निवास करें।

काम क्रोध—जिन्हें काम, क्रोध, मान, मद, लोभ, क्षोभ, राग-द्वेष, कपट, दम्भ या माया कुछ भी नहीं है, हे राम ! तुम उन्हीं के हृदय में वास करो। जो सबके प्रिय हैं और सबके हितैषी हैं सुख-दुख और प्रशंसा निन्दा जिन्हें समान है, जो सत्य और प्रिय वचन विचार कर कहते हैं, जागते और सोते हुए जो आपकी शरण में रहते हैं और तुम्हें त्याग कर जो किसी दूसरे की शरण में नहीं जाते, हे राम ! तुम उन्हीं के हृदय में निवास करो। जो लोग पर-स्त्री को माता के समान समझते हैं, दूसरे के धन को विष से भी भयंकर विष समझते हैं, जो दूसरे की संपत्ति को देखकर प्रसन्न होते हैं, तथा दूसरे की विपत्ति को देख कर दुःखी होते हैं, और जिन्हें आप प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं, हे राम ! उनके मन आपके सुन्दर मन्दिर हैं।

स्वामी सखा—जिनके स्वामी, माता, पिता, गुरु, और प्रिय सब कुछ तुम ही हो, उन्हीं के मन में सीता सहित दोनों भाई निवास करें।

अवगुण तजि— — ...... जो दुर्गुणों को छोड़कर सब के गुणों को ग्रहण करते हैं, ब्राह्मण और गौ के लिये संकट सहते हैं, जो नीति-निपुण और संसार को मर्यादा में रखने वाले हैं, उन्हीं का सुन्दर मन आपका सुन्दर निवास-स्थान है। जो गुणों को आपके और दोषों को अपने समझते हैं, जिन्हें सब प्रकार से आपका ही विश्वास है और जिन्हें राम भक्त प्रिय लगते हैं, उन्हीं के हृदय में आप सीता के सहित निवास कीजिए।

पृष्ठ ६५—जाति पांति धन धर्म, बड़ाई प्यारे परिवार और सुख दायक घर, इन सब को छोड़कर जो तुमसे ही प्रेम करते हैं, हे राम, तुम उन्हीं के हृदय में रहो। स्वर्ग नर्क और मोक्ष को जो समान समझते हैं, जहां-

तहां धनुष बाण धारण किये हुए आप को ही जो देखते हैं और कर्म वचन और मन से जो आप के भक्त हैं, हे राम! तुम उन्हीं के हृदय में निवास करो। जिन्हें कभी कुछ नहीं चाहिए, और जिनका तुम से सच्चा प्रेम है, उन्हीं के मन में तुम निरन्तर रहो, वही तुम्हारा अपना घर है।

राम राज्य

राम राज— जब रामचंद्र राज-सिंहासन पर बैठ गये, तो तीनों लोक प्रसन्न हो गये और उनके समस्त शोक मिट गए। कोई किसी से वैर नहीं करता। राम के प्रताप से सभी विषमताएं नष्ट हो गईं।

वर्णाश्रम—सभी वर्ण और आश्रम के लोग अपने २ धर्म में लग कर वेद-मार्ग पर चल रहे हैं और इस प्रकार सुख पा रहे हैं। उन्हें कोई भय, शोक या रोग नहीं है।

दैहिक दैविक—शारीरिक, दैवी या भौतिक, किसी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं है, सब लोग आपस में प्रेम करते हैं और सुधर्म में लगकर वेद-मार्ग पर चलते हैं। संसार में धर्म अपने चारों पदों पर प्रतिष्ठित होकर रह रहा है और स्वप्न में भी पाप नहीं है। सभी स्त्री पुरुष राम-भक्ति में लीन हैं और सभी परमगति (मोक्ष) के अधिकारी हैं। किसी की आयु छोटी नहीं है और न किसी को कुछ दुःख है। सभी सुन्दर हैं और नीरोग शरीर वाले हैं, न कोई दरिद्र है और न कोई दीन दुःखी है और न कोई मूर्ख या लक्षणों से हीन ही है। सभी कपट से रहित और धर्म में लगे हुए पवित्र हैं। स्त्री और पुरुष सभी चतुर और गुणी हैं। सब गुणज्ञ ज्ञानी और पण्डित हैं और कृतज्ञ हैं। कोई भी कपट में चतुर नहीं।

राम राज्य—काग भुशुण्डी जी कहते हैं, हे गरुड़ जी! सुनो, राम के राज्य में चराचर मात्र में काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से उत्पन्न होने वाला किसी को कोई दुख नहीं है।

भूमि सप्त—सातों समुद्रों से घिरी हुई पृथ्वी के कौशलेश रामचन्द्र जी ही एक राजा हैं। जिनके एक २ रोम में अनेक लोक रहते हैं, उनके लिए यह प्रभुता कोई बड़ी बात नहीं है।

पृष्ठ ६६——सो महिमा——भगवान् की उस महिमा को समझते हुए, इस प्रकार उनका वर्णन करना बड़ी हीनता का कार्य है। हे गरुड़! जिन्हों ने उस महिमा को जान लिया है फिर भी वे इस राम के चरित्र में अनुरक्त हो जाते हैं, यह लीला भी उस ज्ञान का ही फल है, ऐसा बड़े तपस्वी संयमी मुनि लोग कहते हैं। राम राज्य की सुख सम्पत्ति का वर्णन तो शेषनाग और सरस्वती भी नहीं कर सकते। राम के राज्य में सभी लोग उदार और परोपकारी हैं। सभी स्त्री पुरुष ब्राह्मणों की सेवा करने वाले हैं। सभी पुरुष एक-नारी-व्रत का पालन करने वाले हैं और स्त्रियां भी मन, वचन, कर्म से पति का हित करने वाली हैं।

दण्ड जतिन्ह——राम के राज्य में दण्ड केवल सन्यासियों के ही हाथ में है अर्थात् अन्य किसी को दण्ड नहीं दिया जाता। वहां नर्तकों के नृत्य में ही अनेक भेद उपभेद हैं (आपस में भेद भाव या फूट बिल्कुल नहीं है)। मन ही को वहां जीता जाता है अर्थात् बलात्कार से कोई किसी पर विजय प्राप्त नहीं करता। ऐसी बातें राम के राज्य में पाई जाती हैं।

फूलहिं फरहिं——जङ्गल के वृक्ष वहां सदा फूलते फलते हैं। हाथी और शेर वहां एक साथ रहते हैं। पक्षी और मृगादि अपने स्वाभाविक बैर को छोड़ कर सभी आपस में प्रेम बढा रहे हैं। पक्षी समूह बोल रहे हैं और मृगादि निर्भय होकर वनों में घूम रहे हैं, आनन्द कर रहे हैं। शीतल सुगन्धित मन्द वायु बह रही है और गूंजते हुए भ्रमर पुष्प-रस लिए उड़े चले जा रहे हैं। लता और वृक्ष मांगने पर मधु बरसाते हैं और गउएं मन चाहा दूध देती हैं। पृथ्वी सदा खेती से लहलहाती है। त्रेता युग में भी सत्युग जैसी बातें हो रही हैं। पर्वत अनेक प्रकार की मणियों की खानें प्रकट करते हैं और संसार ने महाराज राम को जगदात्मा रूप जान लिया है। सब नदियों में सुन्दर शीतल जल बह रहा है, जो अत्यन्त स्वच्छ स्वाद और सुखदायक है। समुद्र भी अपनी मर्यादा में स्थित है और रत्नों को तटों पर डाल देते हैं, जिन्हें मनुष्य प्राप्त कर लेते हैं। सारे तालाब कमलों से भरे हुए हैं और दशों दिशायें अत्यन्त प्रसन्न (निर्मल) हैं।

विधु महि——चन्द्रमा पृथ्वी पर पूरी कलाओं के साथ प्रकाशित होता है।

सूर्य उतना ही तपता है, जितनी आवश्यकता होती है और रामचन्द्र के राज्य में बादल भी मांगते ही जल देते हैं।

कलि महिमा

पृष्ठ ९६ कलिमल—कलियुग में सब धर्म कलयुग के पापों द्वारा ग्रस लिये गये हैं। सब श्रेष्ठ ग्रंथ नष्ट हो गये हैं और अभिमानी लोगों ने अपनी बुद्धि के अनुसार कल्पना करके बहुत से पंथ चला दिये हैं।

पृष्ठ ९७ भये लोग—सब लोग मोह के वश में हो गये हैं। शुभ कर्मों को लोभ ने ग्रस लिया है। ऐ ज्ञान के भण्डार गरुड़! सुनो, मैं कुछ कलियुग की बातें बताता हूं।

वरण धर्म—चारों वर्णाश्रम धर्म (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्ण और ब्रह्मचर्य्य गृहस्थ वानप्रस्थ, संन्यास चारों आश्रम) नहीं रहे। सभी स्त्री पुरुष वेदों का विरोध करने में लगे हुए हैं। ब्राह्मण वेदों के बेचने वाले हैं। राजा लोग प्रजाओं को पीड़ित करने वाले अथवा खाने वाले हैं। शास्त्र की आज्ञा का कोई पालन नहीं करता। जो जिसे अच्छा लगता है, वही उसके लिये मार्ग हो जाता है। जो बहुत बातें बनाना जानते हैं, वे ही पण्डित हैं। जो दूसरों को ठगने के लिये अच्छा कार्य्य शुरू करते हैं और कपटी हैं, उन्हीं को लोग संत कहते हैं। जो दूसरे के धन को हरने वाला है, वही चतुर है और जो अधिक दिखावा करता है, वही बड़ा सदाचारी है। जो झूठी और हंसी की बातें बनाना जानता है, कलियुग में वही गुणी कहलाता है। जो वेद मार्ग को त्यागकर आचरण-हीन हो जाता है, कलियुग में वही ज्ञानी और वैरागी समझा जाता है। जिसके नख और जटाएं लम्बी हैं, वही तपस्वी समझा जाता है।

अशुभ भेस—जो लोग बुरे वेष और भूषणों को धारण करते हैं और जो भक्ष्य अभक्ष्य सब कुछ खा लेते हैं, वे ही योगी और सिद्ध पुरुष हैं और कलियुग में पूज्य माने जाते हैं।

अपकारी—जो अपकारी और जार हैं, उन्हीं को संसार में गौरव और मान प्राप्त होता है। वचन, मन और कर्म से जो झूठे हैं, कलियुग में वेही बड़े भारी व्याख्याता समझे जाते हैं।

नारि विवस— सभी लोग स्त्रियों के वश में हो गये हैं और मदारी के बन्दर की भांति उनके इशारे पर नाचते हैं। शूद्र ब्राह्मणों को ज्ञान का उपदेश देते हैं और कन्धे पर जनेऊ डाल कर बुरा दान लेते हैं। सभी मनुष्य काम और क्रोध में लीन तथा लोभी है। वे देवता, ब्राह्मण, वेद और सज्जनों के विरोधी है और अभागी स्त्रियां अपने गुणो वाले और सुन्दर पति को भी छोड़कर, पर पुरुष के पास जाती रहती हैं। सुहागिनें तो भूषणों से रहित और विधवायें नए नए श्रृंगारों से सुशोभित हैं। अन्धा गुरु और बहरा चेला की कहावत हो रही है, शिष्य तो गुरु की बातें सुनता नहीं, और गुरु स्वयं भी शुभ बातों को नहीं जानता। वह शिष्यों का धन हरना है, पर उनके कष्टो को नहीं हरता। ऐसा गुरु घोर नरक में गिरता है। माता पितासे बच्चों को बुलाकर उनसे पेट भरता है बस यही धर्म की शिक्षा देता है।

ब्रह्मज्ञानविनु–सभी स्त्री पुरुष ब्रह्म के ज्ञान के बिना कोई दूसरी बात भी तो नहीं करते, किन्तु एक कौडी के लिये भी, लोभ के कारण, पूज्य गुरु तक की हत्या कर डालते हैं।

पृष्ठ ९८ बादहिं शूद्र—शूद्र ब्राह्मणों से बहस करते है कि हम क्या तुम से कम हैं ? जो ब्रह्म को जाने, वही ब्राह्मण है, ऐसा कह कर आंखें दिखाकर डांटते है।

पर तिय लम्पट–जो लोग पर स्त्री मे आसक्त और मोह, द्रोह, ममता में लिपटे हुए तथा कपट में चतुर हैं, वह ही अद्वैत-वादी, ज्ञानी पुरुष कहलाते है। ऐसा मैंने कलियुग का चरित्र देखा है। जो लोग श्रेष्ठ मार्ग पर पर चलते है, वे कपटी उन्हे भी नष्ट कर देते हैं स्वयं तो नष्ट होते ही हैं। जो कुतर्क करके वेद की निन्दा करते हैं, वे कल्प-कल्पांतरों तक नरकों में गिरते हैं। जो नीच जाति के तेली, कुम्हार, चाण्डाल, भील, कोल, कलाल, आदि हैं यदि उनकी स्त्री मर गई अथवा घर या सम्पत्ति नष्ट हो गई, वे सिर मुंडा कर सन्यासी हो जाते हैं और ब्राह्मणों से अपनी पूजा करवाते हैं। इस प्रकार वे दोनो लोकों को नष्ट करलेते हैं। ब्राह्मण तो निरक्षर, मूर्ख, लालची, कामी दुराचारी, दुष्ट तथा नीच जाति की स्त्रियों से विवाह करने वाले हो गए हैं और शूद्र अनेक प्रकार के जप, तप,, व्रत करते हैं और सुन्दर आसनों पर बैठ कर

पुराणों की कथा करते हैं। सब लोग अपने मन माने आचरण करते हैं। कलियुग के अपार अन्यायों का वर्णन नहीं किया जा सकता।

भये वरन संकर—सब लोग वर्ण-संकर हो गए हैं और उन्होंने मर्यादाएं छोड़दी हैं। वे पाप करते हैं, इस लिए, दुख पाते हैं और भय रोग शोक तथा वियोग को सहते हैं।

श्रुति सम्मत—जो वेदों से स्वीकृत भगवान् की भक्ति का मार्ग है, ज्ञान और वैराग्य से युक्त है, मोह के कारण मनुष्य उस पर नहीं चलता और अनेक नए पन्थों की कल्पना करता फिरता है।

बहु दाम संवारहीं—सन्यासी भी बहुत सा धन आदि सम्हालते फिरते हैं। विषय वासनाओं ने उन की वैराग्य वृत्ति को नष्ट कर दिया है। तपस्वी साधु तो धनवान् और बेचारे गृहस्थी निर्धन हैं। अप्रिय कलियुग के तमाशे का वर्णन नहीं किया जा सकता। बडे बड़े कुल वाले भी सती स्त्रियों को निकाल देते हैं और घर में दूसरी किसी स्त्री को दासी बना कर रखलेते हैं। पुत्र भी अपने माता पिता का तभी तक सम्मान रखता है, जब तक कि उसे स्त्री के दर्शन नहीं हुए। जब से उसे सुसराल प्रिय लगने लगती है, तभी से उसका अपना परिवार शत्रु के समान हो जाता है। राजा लोग पाप में लीन हो गए हैं और अनेक प्रकार के कष्ट देकर प्रजा को नित्य दुखी रखते हैं। यदि कोई नीच जाति का भी धनवान् है तो वह कुलीन ही कहलाता है। ब्राह्मण का चिन्ह केवल यज्ञोपवीत ही माना जाता है और जो नंगे बदन रहे, उसी को तपस्वी कहते हैं। जो वेद और पुराणों को नहीं मानता, वही सच्चा भगवद् भक्त और सच्चा संत कलि में कहलाता है।

पृष्ठ ६६ कवि वृन्द—संसार में कवि और उदार तो सुनाई भी नहीं देते। सभी गुणों की निन्दा करने वाले है, कोई भी गुणी नहीं है। कलियुग में, बार बार अकाल पडते रहे हैं, अन्न बिना सब लोग दुखी मर रहे हैं।

सुनु खगेश—हे गरुड, सुनो। कलियुग में कपट, हठ, द्वेष, दम्भ, पाखण्ड अभिमान मोह-मद और काम आदि सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो रहे हैं।

तामस धर्म—मनुष्य तामस धर्म में लगकर तप, जप, व्रत, यज्ञ, दान

आदि करते हैं। इसी लिए मेघ पृथ्वी पर वर्षा नहीं करते और बोने पर भी धान उगता नहीं।

अवला कच—स्त्रियों के बाल ही शृंगार रह गए है और वे बहुत क्षुधा (भूख) वाली हो गई हैं। मनुष्य दुखी, धन-हीन और माया मोह के साथ में घिरे हुए हैं। मूर्ख धर्म में तो लगते नहीं, और सुख चाहते है। इनकी बुद्धि भी स्वल्प है। इनमे कोमलता का तो नाम ही नहीं और ये अत्यन्त कठोर हैं। वे रोगों से अत्यन्त पीडित हैं, उन्हें सच्चे सुखों का उपभोग प्राप्त नहीं है। वे बड़े अभिमानी और बिना किसी कारण के ही दूसरे से विरोध करने वाले हैं। जीवन तो उनका बहुत छोटा सा पन्द्रह वर्ष का है, किन्तु अभिमान इतना है कि जैसे वे कल्पान्त तक भी नहीं मरेंगे। कलयुग ने सब मनुष्यों को आकुल और व्याकुल कर डाला है। वे किसी को बहन और लड़की नहीं समझते। उनमें संतोष, विवेक और शान्ति बिल्कुल नही है। सब जात और कुजात वाले मंगते हो गए हैं। सब में ईर्षा कठोर वचन और लोभ भरे हुए हैं। समता नष्ट हो गई है। सब लोग वियोग और शोक से भरे हुए हैं। वर्णाश्रम धर्म के आचार नष्ट हो गए है। संयम, दान, दया और ज्ञान का तो नाम भी नहीं है, सर्वत्र मूर्खता और ठगी ही बढी हुई है। सब लोग अपने ही शरीर का पोषण करने वाले हैं और दूसरों की निन्दा करने वाले ही लोग संसार मे बिखरे पड़े हैं।

सुनु व्यालारि—हे गरुड़ जी! सुनो, यह भयंकर कलियुग पाप और दुर्गुणों का भण्डार है। किन्तु (इस कलियुग का) एक बड़ा भारी गुण भी है कि मनुष्य अन्य कोई प्रयत्न किये बिना ही केवल भक्ति के द्वारा ही इस संसार सागर से तर जाता है।

यज्ञ रक्षा

ऋषि संग हर्षि चले दोऊ भाई—राम लच्मण दोनों भाई प्रसन्नता-पू र्क महाऋषि विश्वामित्र के साथ चल पडे। सिर से पिता जी को प्रणाम कर उन्होंने पिता जी की आज्ञा प्राप्त की और उनके उपदेशों को आशीर्वाद के साथ ग्रहण किया। उनके शरीर की कांति नीले और पीले कमलों के सम।

थी अर्थात् श्री रामचन्द्र श्याम वर्ण के और लक्ष्मण गौर वर्ण के थे। उनकी किशोर अवस्था बड़ी सुन्दर दिखाई देती थी। उनके हाथों में धनुष बाण, कमर में पीताम्बर तथा पीठ पर तूणीर शोभित हो रहे थे।

पृष्ठ १०० कलित कण्ठ—उनके सुन्दर गले में मणियों की माला और शरीर पर चन्दन का लेप विराज रहा था। उनके सुन्दर शरीर और कमल के समान सुन्दर नेत्र तथा मुख की शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। उनके सिर पर पुष्प पत्ते तथा सुन्दर पर आदि मांगलिक वस्तुएं शोभित हो रही थीं। उनके वेश की सुन्दरता का मैं किस प्रकार वर्णन कर सकता हूं? मानों तीनों लोकों की सुन्दरता शरीर धारण करके राम और लक्ष्मण इन दो भाइयों में बंट गई हो। कभी तालाबो में प्रविष्ट होकर, तो कभी पहाड़ों की शिलाओं पर चढ़कर, वे पक्षी मृग और वनों की शोभा को देखते हैं। महाऋषि विश्वामित्र भी उन्हें (इस प्रकार नदी तालाबों और पहाडों पर अकेले जाते देख) बडे आदर प्रेम और भय से रोमांचित हो बार २ वापिस बुला लेते हैं। उन्होंने (राम और लक्ष्मण ने) निशाना लगाकर एक ही तीर से ताडका को मार डाला। महाऋषि विश्वामित्र ने उन्हें सब विद्याएं पढ़ा दी थीं। तब दोनों भाइयों ने राक्षसों को जीत कर यज्ञ की रक्षा की। उनका यश संसार भर में प्रसिद्ध हो गया। अहिल्या उनके चरणकमलों की धूलि का स्पर्श करके अपने पतिलोक में पहुँच गई। तुलसीदास जी कहते हैं कि भगवान् राम के पूछने पर महर्षि विश्वामित्र ने गंगा की सारी कथा बता दी।

दोऊ राज सुवन राजत मुनि के संग—राम लक्ष्मण दोनों राजकुमार मुनि विश्वामित्र के साथ शोभित हो रहे हैं। वे सिर से पैर तक सुन्दर हैं। उनका मुख भी सुन्दर है। नेत्र भी सुन्दर हैं। उनके अंगों का रंग बादल और बिजली के समान श्याम और गौर है। उनके सिरों पर चोटियां शोभित हो रही हैं। पीताम्बर और जनेऊ धारण किये हुए वे हाथों में धनुष बाण लिये तथा कमर में तरकस कसे हुए हैं। मानो यज्ञ मे विघ्न डालने वाले राक्षसों को नाश करने के लिये, दशरथ ने अपने पुत्र रूपी अग्नि को, विश्वामित्र रूपी सूर्य के साथ भेज दिया हो। बादल मार्ग में उनके लिए छाया करते हैं, देवता फूल वर्षा करते हैं। उनकी सुन्दरता अनन्त काम देवों

से भी अधिक है। तुलसी दास कहते हैं कि भगवान् को देखकर मार्ग के लोग पशु पक्षी तथा मृगादि भगवान् के रंग और प्रेम में मग्न हो रहे हैं।

कौशल्या को चिंता

मेरे बालक कैसे धौं मग निवहहिंगे—

(जब राम लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्र के साथ यज्ञ रक्षा के लिये वन में चले गये तो पीछे से कौशल्या उनके लिये चिन्ता करती रही, मन में सोचती है कि) मेरे लाडले लाल वन मार्ग में न जाने किस प्रकार अपना निर्वाह क रहें होंगे ? वे लज्जा के कारण भूख-प्यास शीत या अपनी थकावट को विश्वामित्र जी से कैसे कहेंगे ? प्रातः काल ही उबटन करके उन्हें कौन स्नान करायेगा और रसोई घर में से निकाल कर कलेवा भी कौन देगा ! कौन भूषण पहिनायेगा और अपने आपको न्योछावर करके नेत्रों का सुख भी कौन प्राप्त करेगा ?

पृष्ठ १०१—नयन निमेषनि...जिनको माता पिता और सम्बन्धी सेवक आदि निरन्तर नयनो से टिकटिकी बांधे देखा करते हैं, उन्हीं को यज्ञ की रक्षा करने के उद्देश्य से विश्वामित्र के साथ भेज दिया। अत्यन्त सुन्दर सुकोमल घुंघराले बालों वाले अपने लाडले बालों को फिर देखकर जब प्रसन्नता पूर्वक हृदय से लगाऊंगी भगवान् ऐसा शुभ दिन भी दिखायेगा ?

जब ते लै मुनि संग सिधाये—(कौशल्यादि रानियों से सुमित्रा कहती है कि) महर्षि विश्वामित्र जब से राम लक्ष्मण दोनों भाइयों को अपने साथ लेकर चले गये है, सखी ! तब से उनका कोई समाचार नहीं मिला। वहां उन्हें बिना जूतियो के नगे पांव चलना पड़ता होगा और खाने को केवल कन्द मूल फलादि ही मिलते होंगे । वृक्ष की छाया में पृथ्वी पर ही सोना पड़ता होगा। नदी तलावो का पानी पीने के लिये मिलता होगा। उन बच्चों के साथ कोई अच्छा सेवक भी तो नहीं है। यद्यपि महर्षि विश्वामित्र जी अत्यन्त दयालु, परम हितैषी, सब बातों मे समर्थ और सुखदायक हैं तथा शुभ करने वाले हैं, किन्तु फिर भी हमारे बच्चे अत्यन्त ही कोमल हैं तथा लजीले हैं। यही सोच कर हे सखी ! मुझे चिन्ता हो रही है। सुमित्रा के इन

वचनों को सुन कर सभी रानियां स्नेह विह्वल हो उठीं। इतने में ही भरत ने आकर (उनके विवाह का) शुभ संवाद सुनाया।

श्रीकृष्ण की बाल लीला

मोकहिं झूठहिं दोष लगावहिं—(कुछ गोपियों ने आकर यशोदा से शिकायत की कि यह तेरा लाल नित्य नई शरारत करता रहता है, इसे समझा लो। तब वे उत्तर देते हुये कहते हैं कि) ये तो मुझको झूठा ही दोष देती हैं। इन्हें तो दूसरों के घरों में मंडराने की आदत सी पड़ गई है। इसके लिये ये अनेक युक्तियां सोचती रहती हैं। इनके लिये तो मैंने खेलना छोड़ दिया। फिर भी तो मुझे छुटकारा नहीं मिलता। अपने मक्खन के बर्तन को तोड़ कर और हाथ लपेट कर उलहना देने आती हैं (कि यह हमारे बर्तन तोड़ आया है)। और, कभी अपने बच्चे को रुला कर और इसी बहाने उसका हाथ पकड़ कर चल पड़ती हैं (कि देखो! हमारे बच्चे को पीट कर चला आया है) ये गोपियां करती तो आप हैं, और दूसरे के माथे मढ़ देती हैं और बात बना कर तो ये ब्रह्मा को भी चक्कर में डाल देती हैं। मेरी आदत तो तू बलदेव से ही पूछले। वह सदा मुझको अपने साथ ही खिलाता है। जो बच्चे किसी से शरारतें करते हैं, वे मुझे अच्छे नहीं लगते। ग्वालिनें श्रीकृष्ण की इस वाक पटुता से मुंह छिपा कर चुपके चुपके हंसती हैं (कि कहीं इसे पता न लग जाये)। तुलसीदास कहते हैं कि मुनि लोग भी बाल कृष्ण की सुन्दर क्रीड़ा का सुन्दर गान किया करते हैं।

पृष्ठ १०२—अबहीं उरहनो दै गई बहुरि फिर आई—कृष्ण उलहना देने आई हुई गोपी की बातों का खंडन करते हुये बोले कि) देखो ? मां, यह गोपी अभी अभी तो उलहना देकर गई थी, फिर अभी (कोई और उलहना देने के लिये) लौट कर आई। हे माता ! सुनो, तेरी सौगन्ध, इसको लड़ने की बान सी पड़ी है। और लाज शर्म तो इसने बेच ही खायी है। इस ब्रज मे और भी तो लडके रहते हैं, क्या मैं ही शरारती रह गया हूँ ?

बात तो यह है- तूने इसे मुंह लगा लिया है, इसलिये यह तेरे शिर पर सवार हो रही है। इस अहीरन ने तुझे सीधा साधा देख लिया है।

छोड़ो मोरे ललित ललन लरिकाई-(यशोदा कृष्ण को चोरी आदि न करने के लिये समझाती हुई कहती है कि) हे मेरे सुन्दर लाल! अब तुम यह बचपन की बातें छोड़ दो। यह देखो कल ही तो उन्होंने (नन्द बाबा ने) तुम्हारे विवाह की बातें चलाई थीं अर्थात् वे तुम्हारा विवाह करना चाहते हैं। इसलिये, तुम्हारी चोरी की बातें सुनकर सास ससुर डर जायेंगे और वह नई बनने वाली दुलहिन भी हंसेगी। (यदि तुम चोरी की आदतें छोड़ दो तो) मैं तुम्हें उबटन करके नहलादूं और चोटी गूंथ दूं तो वे लोग भी सुन्दर वर को देख कर बड़ाई करेंगे। तब कृष्ण ने माता का कहना कर लिया और कहा कि कितनी देर हो गई, अभी तो कल आई ही नहीं? यशोदा कहती है कि तू सो जा, (तब आयगी)। यह सुन कर श्रीकृष्ण बिस्तर पर लेट गये और आँख बन्द कर ली। दूसरे दिन, प्रातः उठ कर कहा कि जल्दी कुर्ता पहिनादे। (क्योंकि अब नंगा रहना उचित नहीं,विवाह होने वाला है। कृष्ण को कुर्ते के लिये इतनी शीघ्रता करते देखकर यशोदा बड़ी प्रसन्न होती है और घर मेंआई हुई पड़ोसिन ग्वालिनें भी भी हंस पड़ीं। तब भगवान् श्रीकृष्ण भी माता की गोद में दौड़ कर जा छिपे।

उद्बोधन

पृष्ठ १०२ जिव जब ते हरि ते बिलगान्यो..................

हे जीव, जब से तू भगवान् से बिछुड़ा, तब से तूने शरीर को ही अपना घर समझ लिया। माया के कारण तूने अपने स्वरूप को नहीं पहिचाना। उसी भ्रम के कारण तू भयंकर दुख पा रहा है।

पायो जो दारुन.......... ...तू ने बड़ा भयंकर दुख पाया। स्वप्न में भी सुख नहीं मिला। सांसारिक कष्ट और शोक जिस मार्ग में बिखरे पड़े हैं, उसी मार्ग पर बार बार हठ पूर्वक चलता रहा है। मूर्ख! तूने अनेकयोनियो और जन्मों,में वृद्धावस्था और विपत्ति में पड़ कर भी भगवान्को

नहीं पहिचाना। किन्तु रे मूर्ख ! भगवान् राम के बिना, कहीं विश्राम दिखाई दे सकता है, यह सोच तो सही अर्थात् प्रभु के बिना कहीं भी शान्ति नहीं है। तू तो आनन्द सागर का निवासी है, तब भी बिना ज्ञान के तू प्यासा क्यों मर रहा है? तू ने मृग तृष्णा अर्थात् रेत के भ्रम के जल को ही सच्चा जल समझ लिया और उसी में सुख मानकर रम गया, जहां त्रिकाल में भी कहीं जल का लेश नहीं है, तू वहीं जल पाकर, उस से मग्न हो, गोते लगा रहा है। हे दुष्ट ! तू स्वाभाविक आत्म स्वरूप को विस्तृत करके यहां आया है।

पृष्ठ १०३ निर्मल निरंजन निर्विकार...............

तूने अपने नि ल, निर्विकार, और निर्लेप तथा उदार आत्म-रूप के सुख से मुँह मोड लिया और व्यर्थ ही में राजा की भाँति राज्य को छोड़ स्वप्न में कारागार में आ पड़ा।

तैं निज कर्म डोरी............

अपने कर्मों की डोरी को दृढ़ बना लिया और अपने ही हाथों उस में गांठें लगा ली। इस लिये, हे अभागे, तू परवश हो गया और उसी के फल स्वरूप भविष्य में गर्भ वास में होने वाले अनेक दुख तुझे मिलेंगे।

आगे अनेक समूह.......... ..

तू ने पहिले भी कई बार के जन्मों में माता के पेट में पड़े हुये, संसार में आने के कष्टों का अनुमान कर लिया था। तेरा सिर नीचे और पेट ऊपर था। ऐसे कष्टों में पड़े हुये की तेरी बात भी नहीं पूछी? खून तथा मल मूत्र में, कीचड़ और कीड़ों से लिपटा हुआ पड़ा रहता है, इस कोमल शरीर में भयंकर पीड़ा होती है, और तू सिर धुन धुन कर रोता है। इस प्रकार तुझे, जहाँ पर तेरे ही कर्म जालों ने बाँध रखा था, वहां भी भगवान् ने तेरा साथ नहीं छोड़ा, तेरी अनेक प्रकार रक्षा की और तुझे ज्ञान दिया।

तोही दियो ज्ञान को विवेक............उसने तुझे ज्ञान विवेक दिया। अतः तुझे अनेक जन्मों का स्मरण हो आया और तू कहने लगा कि मैं उसी भगवान् की शरण में हूं, जिसकी यह त्रिगुणात्मिका माया

बड़ी विषम है। जिसने जीव को कर्म के वश में किया है और प्रति दिन रस हीन बनाया है और जो प्रभु विपत्ति में बुद्धि देने वाला है, वही श्रीपति विष्णु मेरी शीघ्र सुधि ले।

पुनि बहुविधि गिलानि·······फिर हृदय में, अनेक प्रकार की ग्लानियों का अनुभव कर निश्चय किया कि अब के ंसार से जाकर (जन्म पाकर) भगवान् का भजन करूंगा। ऐसे विचार करके तू चुप हो रहा। इतने मे ही प्रसव काल की पवन से तू अपराधी प्रेरित हुआ (अनेक प्रकार के कष्ट सहता हुआ संसार मे आ पहुँचा)। जब उस प्रचण्ड गर्भ वायु ने प्रेरित किया, तेरे वे ज्ञान ध्यान और वैराग्य के अनुभय सभी प्रसव पीड़ा की अग्नि मे जल गये। तू अत्यन्त दुःखी होकर व्याकुल हो रहा था। उस समय तुझ में कोई शक्ति नहीं थी। एक क्षण तो मुंह से कोई शब्द भी न निकाल सका। तेरे उस भंयकर कष्ट को कोई भी नहीं जानता था और सब लोग प्रसन्न होकर गा रहे थे।

वाल दसा जेते·······

तूने इस बचपन में जितने दुख पाये, वे अनन्त हैं, गिने नहीं जा सकते। तू भूख रोग आदि अनेक प्रकार के कष्टों से पीड़ित था और उन दुःखों को माता भी नहीं जान पाती थी। माता उस पीड़ा को पहिचान भी नहीं पाती थी कि बच्चा किस लिए रो रहा है। इसीलिए वह भी ऐसे ही अनेक उपाय करती थी जिससे तेरा हृदय और भी जलता था।

पृष्ठ १०४—कौमार शैशव अरु··········शिशु अवस्था में, कुमार अवस्था में और किशोर अवस्था में जितने तुमने अपार दुःख सहे, उनको कौन वर्णन कर सकता है ? ऐ महा दुष्ट और निर्दय ! तेरे उन दुष्कर्मो और दुःखों को तुम्हारे बिना दूसरा कौन कह सकता है ?

जोवन जुवती संग·······युवा अवस्था, तूने भयंकर मोह के मद के वश में होकर युवतियों के संग में, उनकी रंगरेलियों मे बिता दी। उसमें तूने सब धर्म-मर्यादा को भी तोड़ दिया और पहले गर्भवास तथा बचपन में जितने कष्ट सहे थे, सब को त भूल गया।

बिसरे बिषाद निकाय···········तूने सब दुःख और गर्भ के कष्टों को भुला दिया। कुछ भी तू नहीं समझा। यह जानकर हृदय फटता जाता है।

तू फिर भी वैसे ही कर्म करता रहा, जिन से गर्भ के भंवर जाल में और संसार के चक्र में बार बार फंसता रहे। इस शरीर का अन्त तो कीड़े या भस्म में है अर्थात् मरने पर शरीर को गाड़ दिया जाये तो कीडे खा जाते हैं, यदि जला दिया जाये तो राख हो जाती है। ऐसे घृणित शरीर के कारण सारे संसार को शत्रु बना रक्खा है। इस संसार में मनुष्य पर-स्त्री तथा परधन को हरने के लिए, दूसरे से शत्रुता करने के लिए, नित्य आगे ही आगे बढ़ता जाता है।

देखत ही आई————देखते ही देखते वह बुढ़ापा भी आ पहुँचा, जिसको तूने स्वप्न में भी नहीं बुलाया था। इस बुढ़ापे के दोषों का कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता, उसके सब दोष अब इस शरीर में प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं।

सो प्रगट तनु——वे सब दोष [बुढ़ापे के कारण] शरीर में प्रकट हो गये हैं। अनेक रोग और कष्ट सताते हैं। कभी शिर चकराता है, इन्द्रियों की शक्ति बिल्कुल नष्ट हो गई है। और, तेरा बोलना भी किसी को अच्छा नहीं लगता। घर के चौकीदार से भी तेरा अपमान हो रहा है। तुझे खाना पीना भी समय पर नहीं मिलता। ऐसी दशा में भी संसार से विरक्ति नहीं होती है। उल्टा तृष्णा की तरंगों को बढ़ाता ही जाता है।

कहि को सकई——तेरे जन्म जन्मांतरों के दुःखों का कौन वर्णन कर सकता है? मैंने तो यहां एक जन्म के कुछ कष्टों को गिनाया है। तू निरन्तर कष्ट पारावार में डूब रहा है। फिर भी कुछ विचार नहीं करता।

अजहुं विचारु—अब भी विचार कर, विषय विकारों को छोड़ कर, सब को सुख देने वाले श्री राम का भजन कर। संसार रूपी अपार सागर से पार करने वाले, सुदर्शन चक्र धारी देवेश प्रभु का स्मरण कर, वे बिना कारण के दया करने वाले, उदार और इस अपार माया जाल से उद्धार करने वाले हैं। वे मोक्ष देने वाले हैं, जगत् के स्वामी हैं, लक्ष्मी के पति हैं, सबके प्राणेश हैं और मुक्ति के कारण हैं।

रघुपति भगति–राम की भक्ति सब के लिये सुलभ और सुखदायक है। यह तीनों प्रकार के दुःखों को–आधिदैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक कष्ट शोक को–दूर करने वाली है। बिना सत्संग के भक्ति नहीं हो सकती है। और वह सत्संग तब प्राप्त होता है, जब उन्हीं की (राम की) दया हो जाये।

जब द्रवैं दीन दयालु—जब भगवान् कृपा करते हैं, तभी सज्जनों का सत्संग प्राप्त होता है। सज्जनों के दर्शन स्पर्श और समागम आदि से सब पाप समूह नष्ट हो जाते हैं।

पृष्ठ १०४जिनके मिले दुःख—उनके (साधुओंके) मिलने से, सुख दुःख आदि में समान भाव, निरभिमानता आदि गुण आ जाते हैं, और श्रेष्ठ ज्ञान उत्पन्न हो जाने से, मोह, लोभ, क्रोध, दुःख अपने आप नष्ट हो जाते हैं।

सेवत साधु द्वैत........सज्जनों की सेवा करने से, द्वत भाव दूर हो जाते हैं—भगवान् के चरणों में प्रेम हो जाता है—शारीरिक रोग सब दूर हो जाते हैं और फिर वह (जीव) अपने आत्मरूप में अनुरक्त हो जाता है।

अनुराग सोनिज...........अपने आत्मरूप में अनुरक्ति से उसे जगत् विचित्र दिखाई देता है। संतोष, शान्ति, शीतलता और संयम विराजते रहते हैं, वह एक प्रकार से विदेह हो जाता है। वह निर्मल तथा निर्दोष हो कर, सर्वज्ञ, समरस तथा समदर्शी हो जाता है, फिर उसे संसार के सुख दुःख नहीं सताते। जिसकी ऐसी दशा हो गई, वह सदा तीनों लोकों में पवित्र रहता है।

जो तेहि पंथ........यदि मन लगा कर इस मार्ग पर जला जाये, तो भगवान् भला क्यों न सहायक हों? वेद और सज्जनों ने जो मार्ग दिखलाया है, उसी पर चलने से सब लोग सुख पा सकते हैं।

पावै सदा—जो व्यक्ति संसार की आशा को त्याग देता है,वह भगवत कृपा से सुख पाता है। द्वैत भावना में (अपने और पराये का भेद भाव समझने में) स्वप्न में भी सुख नहीं है। ब्राह्मण, देवता, गुरु, सज्जन की सेवाके बिना, कोई भी संसार सागर से पार नहीं हो सकता। तुलसीदास कहते हैं कि, यह जान कर, कष्टों को दूर करने वाले भगवान् के गुण गाओ।

रामविवाह

पृष्ठ १०५ नगर निसान .... सारे नगर में नगारे बज रहे हैं और आकाश में भी देवता लोग दुंदुभी तथा नगारे बजा रहे हैं। देवांगनाएं विमानों में चढकर गा कर नाच रही हैं। जब राम के गले मे जयमाला

डाली गई, तब तीनों लोकों में जय जय कार हो गया। देवता भगवान् के सुन्दर रूप में तल्लीन होकर, पुष्प वर्षा करने लगे।

पृष्ठ १०६ जनक कों पन ....महाराजा जनक की प्रतिज्ञा पूरी हो गई और सब की मन भाती बात हुई। तुलसीदास जी कहते हैं कि सब का रोम रोम प्रसन्न होकर आनन्द विभोर हो उठा। सांवरे किशोर राम और गौर बदनी सीता की शोभा पर, तिनका तोड कर, (कहीं नजर नहीं लग जाय) सखियां भगवान् से प्रार्थना करती हैं कि यह जोड़ी युग—युग बनी रहे

दूल्हा श्री रघुनाथ .... सुन्दर मंडप में श्रीरामचन्द्र तथा सीता वर वधू बने हुए हैं, सभी मिलकर सुन्दर गीत गाते हैं। और, ब्राह्मण लोग इकट्ठे होकर वेद पढ़ रहे हैं। जानकी राम के रूप को अपने कंकन के नग की परिछाई में देख रही है। इसलिए वह अपनी सब सुध बुध भूल गई, अपने हाथ को स्थिर रक्खे हुए है, पल भर भी उसे नहीं हटातीं।

बनवास

सिथिल सनेह कहै ....कौशल्या सुमित्रा से कहती है, मैंने कैकेई को कभी कमस्नेह वश सौत नहीं समझा, मैं तो सदा उसकी बहन भांति सेवा करती रही।(राम) मुझे मां कहता, तो मैं उसे समझाती, हे भइया, मैं तेरी मां नहीं हूँ, मैं तो भरत की मां हूँ, मैं तुझ पर बलिहारी हूँ, तेरी तो माता कैकेई है। सरल स्वभाव वाले रामचन्द्र भी उसे ही अपनी मां समझते थे, उन्होंने मन, वचन, कर्म से कभी नहीं जाना कि वह सौतेई मां है। मेरा दुर्भाग्य है कि मेरा सुख, को जो सिरीष के पुष्प के समान कोमल था, इस कैकेई ने छल रूपी छुरी को क्रोध रूपी पत्थर पर तेज करके चीर डाला।

कीजै कहा जी जी जू..... .....सुमित्रा कौशल्या के पांव पकड़ कर कहती है कि हे जीजी क्या किया जाये? भगवान् जो कुछ सहावे, सब सहना पड़ता है,। राम के जन्म काल से लेकर ही तुम्हारा स्वभाव विदित ही है। किन्तु क्या भरत की माता माता के लिये ऐसा करना उचित था? राज वंश में उत्पन्न हुई, राज परिवार में विवाह हुआ और राज पुत्र प्राप्त

करके भी सुख नहीं मिला।

पृष्ठ १८७ इ सुधागह ....देखो, इस चन्द्रमा का शरीर अमृत का भंडार है। फिर भी मृग के चिन्ह कलंक ने इसे कलंकित कर दिया है। उस पर भी, यह बिना बाहों वाला (जिसका केवल मात्र सिर ही सिर बच रहा है) राहु भी इसे पकड़ लेता है।

पुरते निकसी रघुवीर वधू ......(वन मे जाने के लिये) श्रीराम की पत्नी सीता ने अयोध्या नगर से वाहर निकल कर धीरज धर कर मग मे दो एक पांव रक्खे। इतने से ही, इनके मस्तक पर पसीने की बूंदें झलक पड़ीं और सुन्दर अधर दल सूख गये। फिर पूछती हैं कि कितना और चलना है, अपनी पर्ण कुटी कहां जाकर बनाओगे? पत्नी की इस व्याकुलता को देखकर, प्रिय राम की आंखो से पानी झरने लगा।

शीश जटा उर बाहु विशाल ..... ग्रामीण स्त्रियां सीता से पूछती हैं कि ये, जिनके सिर पर जटायें हैं, जिनकी छाती और भुजायें विशाल हैं, जिनके सुन्दर नेत्र कुछ २ लाल हैं, तिरछी सी भौएं हैं, जो तीर तरकश और तीर कमान धारण किये हैं, जो इस बन मार्ग में अत्यन्त शोभित हैं, जो स्वाभाविक भाव से तुम्हारी तरफ बडी आदर भावना से देखते हैं और हमारे मन को मोहित कर रहे हैं, सांवले से, हे सखी, तुम्हारे कौन हैं?

सुनि सुन्दर वैन सुधा ....ग्राम वधुओं के इन अमृत भरे वचनों को सुन कर, चतुर जानकी उनकी इच्छा को समझ गई और अपने नैन तिरछे करके, इशारे से समझा कर मुस्करा पड़ी। तुलसीदास कहते हैं कि उस समय सब ग्राम वधुएं सीता को देखती और अपने नेत्रों का लाभ प्राप्त कर रही थीं मानो प्रेम के तालाव में सूर्य के उदय होने पर सुन्दर कमल की कलियां खिल उठी हों।

सर चारिक चारु वनाई.....भगवान् राम ने, अपनी कमर पर लटके तूनीर में सुन्दर चार-एक वाण कसे हुये हैं और हाथ में धनुष वाण लिया हुआ है, वे वन-वन शिकार खेलते फिरते हैं। तुलसीदास कहते हैं, उस शोभा का कौन वर्णन कर सकता है? उस अलौकिक रूप को देखकर सब हिरण और हिरणियां चौंक कर चकित हो जाते हैं और ध्यान लगाकर देखने लगते है। वे

न तो हिलते डुलते ही हैं, न भागते ही हैं। हृदय में ऐसा जानते हैं कि मानो वे पांच बाण धारण किए रामचन्द्र रूपी साक्षात् कामदेव ही हैं।

लंकादाह

पृष्ठ १०७—बाल धी विशाल.....अत्यन्त भयंकर और विशाल पूंछ में लगी हुई आग की लपटें, ऐसी प्रतीत होती थीं, मानो लंका को निगलने के लिये काल ने अपनी जिह्वा खोल रक्खी है—अथवा, आकाश रूप। गली में बहुत से धूमकेतु भरे हुए हैं—अथवा मूर्तिमान् वीर रस ने मानो वीरता की तलवार निकाल रक्खी है—

पृष्ठ १०८ तुलसी सुरेस-चाप........अथवा मानो इन्द्र धनुष है, या बिजलियों के झुन्ड हैं—किम्वा, सुमेरु पर्वत से बड़ी भारी आग की नदी निकल रही है। आग को देखकर राक्षस और राक्षसियां व्याकुल होकर कहती हैं, इसने अशोक वाटिका को उजाड दिया और अब नगर को भी जला देगा।

पानी पानी पानी.....रावण की सब रानियां व्याकुल होकर पानी पानी पुकार रही हैं। वे हाथी के समान मस्त चाल वाली स्त्रियां भागी जा रही हैं, वस्त्रों को भी भूल गई हैं, मणि आभूषण को भी नहीं संभाल रही हैं, उनके मुख सूख गये हैं और कहती हैं कि अब हमें कौन बचायेगा। मन्दोदरी हाथ मल कर शिर धुन कर कहती है, कल मैंने कितना कहा था, पर किसी ने एक भी बात नहीं मानी, बेचारे विभीषण ने भी कहा कि यह बानर बड़ा बली है, सब के घरों को उजाड देगा।

वीथिका बजार प्रति .. लंका के हर एक बाजार में बानर ही बानर दिखाई दे रहे हैं—ऊपर नीचे बानर हैं, दिशा विदिशाओं मे बानर हैं। मान तीनों लोकों मे वानर ही बानर हैं—अगर आंखें बन्द कर लें तो हृदय में भी बन्दर दिखाई देता है, यदि आंख खोल लें तो बानर खड़ा दिखाई देता है—जहां कहीं भी भाग कर जायें, बानर ही बानर दिखाई देते हैं। लो अब मजा चखलो, उस समय जिस किसी को कहते थे, कोई भी नहीं मानता था, सब इतराते थे।

हाट बाट हाटक . लंका के हाट बाटों का सोना घी की भांति पिघल

कर वह चला और लंका रूपी सोने की कढाई आँच से खौलने लगी—सब बलवान् राक्षसों के पक्वान्न बन बन कर, अच्छी प्रकार तल कर एक ढेरी लग गई।

पाहुने कृसानु पवमान—हनुमान् ने वायु से परसवाकर, अग्नि रूपी पाहुने को बड़े आदर पूर्वक जिमाया। तुलसीदास कहते हैं कि इस दृश्य को देखकर श ु की स्त्रियाँ गाली देकर कहती हैं कि पागल रावण! तूने व्यर्थ ही मे भगवान् रामचन्द्र जी से वैर किया।

रावण सो राजरोग······रावण रूपी राज रोग (यक्ष्मा) सम्पूर्ण ब्रह्माड के हृदय में बढ रहा था और वह दिन २ व्याकुल होकर तिनके के समान सूख रहा था—

देवता, सिद्ध और मुनि लोग उपचार करते हार गए—उनसे जरा भी शान्ति नहीं मिल रही थी। और, उसका शोक नष्ट नहीं हो रहा था। हनुमान् ने राम की आज्ञा से, समुद्र पार कर, लंका रूपी सकोरे (कुल्हड़) को स्वच्छ करके, राक्षस रूपी बूटी को, लंका के सारे रत्न की पुटपाक मे जलाकर, उस रावण रूपी राजरोग को नष्ट करने के लिए, यह मृगाँक रसायन बना दी है।

आयो आयो आयो······लंका में अंगद के आने पर, शोर मच गया, वही बन्दर अर्थात् हनुमान फिर आ गया है। इसलिए कोई घर मे से सामान निकालने लगा, कोई कांपने लगा, कोई भागने लगा। लोग कहने लगे, क्या होगा? वीर लोग घबराने लगे। वह अंगद राम २ की जय जयकार, कर गरजा, राक्षसों ने कान बन्द कर लिए, मानो बिजली तड़क रही है। हनुमान् की याद आ जाने पर वे लोग सहम कर सूख रहे थे और जिस प्रकार बाज के झपटने पर बटेर छिप जाता है, वैसे ही छिप रहे थे।

युद्ध वर्णन

पृष्ठ ११० जे रजनीचर वीर———जो राक्षस बडे वीर विशाल और भयंकर थे, जिनको देख कर काल भी भय खाता था, वे युद्धमें वानर राज-कुमार अंगद के द्वारा बुरी तरह फंसा लिए गए। हनुमान् ने उन्हें पूंछ मे लपेट कर ललकारते हुए आकाश को ओर देखा और आकाश में फेंक दिया। उके

शरीर सूख गए आकाश में जाते हुए। वे ऊपर के अन्तरिक्ष में बबूले के चक्कर में फंस गए और फिर पृथ्वी पर नहीं गिर सके।

मत्त भट मुकट —————— अभिमानी वीर शिरोमणि रावण के उत्साह रूपी पर्वतों की चोटियों को नष्ट करने के लिये वज्र के टुकड़े के समान, हनुमान् की भयंकर ललकार को सुन कर, दिग्गज पृथ्वी को दांतों से दबा कर चिंघाड़ने लगे, पृथ्वी को धारण करने वाले कच्छप और शेषनाग सिकुड़ गए और भगवान् शंकर भी चकित हो गए। सुमेरु पर्वत कांप गया, सब समुद्र उछलने लगे, ब्रह्मा महाराज भी घबरा गए, दसों दिशाएं बहरी हो गईं और राक्षस स्त्रियों के घरों मे भय के मारे गर्भ के बच्चे गिरने लग पड़े।

ओझरी की झोरी काँधे ......

कंधे पर पर ओझरी की झोरी (मास की पतली झिल्ली) डाले हुऐ, आंखों की पगडी बांधे हुए, मुण्ड के कमण्डल लिए हुए और खप्पर लिए हुए, योगिनिओं के झुंड के झुंड तपस्विनियों के समान युद्ध रूपी नदी के तट की रेत म कतार बांध कर लेटे हुए हैं। वे मास के गट्टे को सत्तू के समान रक्त में तर करके खा रही हैं—और भगवान शकर जी अपने बेतालों और भूतों को साथ लिए हुए, हाथ से हाथ मिला कर इस दृश्य को देखकर हंस रहे हैं।

राम सरासन ते ...... राम के धनुष से जो बान निकले, वे रावण के शरीर में ही नहीं रहे (बल्कि उस से पार हो गए) उन से उसकी हड्डी का जाल टूट गया। वीर रावण उस से जरा भी नहीं घबराया। इस दृश्य को देखकर योगिनियां खप्पर लेकर इकट्ठी हो गईं।

पृष्ठ १११ सोनित छींटि .. रावण के शरीर से निकले हुए खून के छींटों से छिटे हुए भगवान् राम अत्यंत शोभित हो रहे थे। उनको ऐसी शोभा हो रही थी, मानो नीलम के विशाल पवत पर वीर बहूटियाँ बिखर रही हों।

कानन बास... भगवान् राम को वन मे रहना पड़ता है। उनका रावण के समान भयंकर शत्रु है, फिर भी उनकी शोभा ने च द्रमा को भी जीत लिया है। उन्होंने बड़े बलवान् वालि को भी मार गिराया, सुग्रीव की रक्षा की और विभीषण को लंका का राजा बना दिया। उनकी स्त्री का अपहरण हो गया,

छोटा भाई लक्ष्मण युद्ध में घायल होकर गिर पड़ा, ऐसी अवस्था में भी उनके हृदय मे केवल शरणागत विभीषण की चिन्ता भरी हुई थी। विशाल भुजा वाले, उदार और दयालु रामचन्द्र के समान भला दूसरा वीर कौन है ?

पार्वती की तपस्या

फिरउ मातु पितु——माता पिता तथा अन्य सभी सम्बन्धी पार्वती की प्रतिज्ञा को देखकर (अपने आप को उसे समझाने में असमर्थ पाकर) लौट गये। जिस से हृदय में प्रेम हो जाय, वही अपना हितैषी या प्रिय प्रतीत होता है।

तजेऊ भोग——पार्वती ने (भगवान् शंकर को प्राप्त करने के लिये तपस्या करने के उद्देश्य से) भोग विलास को रोग की भांति और सभी लोगों को सापों की भांति त्याग दिया अर्थात् वह एकान्त तपोवन में चली गई। वहाँ उसने ऐसी तपस्या में मन लगाया, जो कि मुनियों के मन से भी अचिन्त्य है, अर्थात् बडे २ ऋषि लोग भी जैसी तपस्या की कल्पना नहीं कर सकते, ऐसा कठोर तप प्रारम्भ किया। पार्वती के जो कोमल अंग पहिले वस्त्र भूषण का स्पर्श करते हुए भी मुरझा जाते थे, उन्हीं अंगों से उसने भगवान् शंकर के लिये बड़ाभारी तप आरम्भ कर दिया।

पूजहि सिवहि——वह प्रातः सांय तथा मध्याह तीनों समय स्नान करके शिवजी की पूजा करती, उसके प्रेम व्रत तथा नियम को देख कर सज्जन उसकी प्रशंसा करते थे। उसे न नींद थी, न भूख न प्यास ही, इसके लिये दिन रात बराबर थे। उसके नेत्रों में प्रेमाश्रु, मुख में भगवान् शिव का नाम, शरीर मे रोमान्च और हृदय में सदा शंकर रहते थे।

कंद मूल असन——वह कभी कन्द मूल खाकर और कभी केवल पानी या हवा के सहारे ही अथवा बेल के सूखे पत्ते चबा कर ही दिन बिताती थी। जब उसने पर्ण अर्थात् पत्ते भी खाने छोड़ दिए, तो उसका नाम अपर्णा (पत्ते न खाने वाली) पड़ गया। उसकी नई और स्वच्छ कीर्ति सारे संसार में व्याप्त हो गई।

देखि सराहहिं——पार्वती को देखकर बड़े २ मुनि-महामुनि भी उसकी प्रशंसा करते हैं और कहते हैं, ऐसा तप तो संसार में आज तक कभी किसी ने देखा सुना भी नहीं।

पृष्ठ ११२ काहू न देख्यो——ऋषि लोग कहते हैं कि ऐसा तप किसी ने नहीं देखा। यह तप तो धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारों फलों को देने वाला है। यह भी तो नहीं जाना जाता और न यह स्वयं कहती ही है कि पर्वत राजकी पुत्री ऐसी क्या वस्तु चाहती है, जिसके लिए ऐसा कठोर तप कर रही है। भगवान् शशि शेखर शंकर उसके प्रेम, प्रण, व्रत और नियम को देखने के लिये, ब्रह्मचारी का रूप धारण कर, वहां जा पहुँचे और मन से उन्होंने अपने आप को पार्वती के समर्पित कर दिया। वे बड़े मधुर शब्दों में कहने लगे।

देखि दसा——कवि कहता है कि पार्वती की उस दशा को देख कर करुणा के भंडार भगवान् द्रवित हो गये। और उनके मन मे आया कि जैसे उनका निर्मोही स्वभाव वाला हृदय बहुत ही कठोर है। फिर वे प्रत्यक्ष रूप से पार्वती के वंश की प्रशंसा कर और माता पिता की योग्यता का वर्णन कर, सुनने में सुखदायक अमृत के समान वचन बोले।

देवि! करऔ कछु——हे देवी! मैं कुछ विनय करता हूँ, बुरा न मानना। सच समझो कि मैं स्वाभाविक स्नेह के कारण कुछ कहना चाहता हूं। तुमने ससार में जन्म लेकर अपने माता पिता का यश फैलाया है। संसार रूपी समुद्र में तुम स्त्री रूपी रत्न उत्पन्न हुई हो।

अगम न कछु——ऐसी कोई संसार में वस्तु नहीं जो तुम्हें न मिल सकती हो। मुझे तो ऐसा ही दिखाई देता है। किन्तु विना किसी कामना के मनुष्य कष्ट भी तो नहीं उठाता। यदि तुम वर के लिये तप कर रही हो, तव तो तुम्हारा यह विल्कुल लड़कपन है, अर्थात् वर प्राप्ति के लिये तप करना तो मूर्खता ही है। क्योंकि यदि (सोना बनाने के लिए) पारस मणि घर में ही मिल जाये, तो (सोना प्राप्ति करने को) भला कोई सुमेरु पर्वत पर क्यों जायगा?

मोरे जान———मेरी समझ में तो तुम व्यर्थ ही में कष्ट सह रही हो। क्या कभी अमृत भी रोगी को ढूंढता फिरता है या कभी रत्न भी राजा को चाहता है?(अर्थात् जिस प्रकार अमृत रोगी को नहीं, प्रत्युत रोगी हो अमृत को प्राप्ति के लिये प्रयत्न करते हैं, वैसे ही तुम्हें किसी वर को पाने के लिये नहीं प्रत्युत वरों को तुम्हें प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करना चाहिये) इसलिये, मैं तो हृदय में हार गया हूं, मुझे तुम्हारी तपस्या का कोई कारण नहीं दिखाई देता। इन प्रिय वचनों को सुन कर, पार्वती ने अपनी सखी के मुख की ओर देखा।

गौरि निहारऊ—पार्वती ने जब सखी की ओर देखा तो उस सखी ने संकेत पाकर पार्वती की तपस्या का कारण बता दिया कि यह शिव के लिये तप कर रही है। यह सुनकर ब्रह्मचारी हंस कर कहने लगा कि तब तो महा मूर्खता है। जिस ने तुम्हें यह उपदेश दिया है कि इतने कष्ट सहकर तुम उस बावले को वर रूप में प्राप्त करो, वह सचमुच तुम्हारा बड़ा ही भयंकर शत्रु है। यह मैं तुम्हारे हित के लिये कह रहा हूँ।

पृष्ठ ११३ कहहुं काह सुनि—तुम यह तो बताओ कि उस अकुलीन (क्योंकि भगवान् शंकर अनादि हैं, उन का कोई कुल नहीं। अतः उन्हें अकुलीन कहा गया है) निर्गुण अमान, अजाति और माता पितासे हीन हैं। उस वर पर तुम क्या सुनकर प्रसन्न हुई हो? अरे, वह शिव तो भीख मांगकर खाता है, नित्य चिता की भस्म में सोता है। पिशाच और पिशाचियों के साथ नाचता है।

भाँग धतूर—भांग धतूरे का आहार करता है, नित्य राख लिपटाये फिरता है। वह योगी, जटाधारी, और क्रोधी है, उसे भोगविलास तो अच्छे लगते ही नहीं। ऐ सुन्दर मुख और नेत्रों वाली पार्वती! तू तो इतनी सुन्दर है, किन्तु शिव पांच मुख और तीन नेत्रो वाला है। उसका वामदेव यह नाम बिल्कुल ठीक है (वामदेव शब्द के दो अर्थ हैं एक श्रेष्ठ देवता और दूसरा उल्टा देवता। यहां ब्रहमचारी ने इस दूसरे अर्थ मे इस शब्द का प्रयोग किया है) और वह काम के अहंकार को नष्ट करने वाला है

एकउ रहि—उस शंकर मे एक भी वरों के योग्य गुण नहीं, विपरीत इसकेषोद करोड़ों हैं। वह मनुष्यों के कपाल, गजचर्म, सांप और विष को

धारण करता है। कहाँ तो तुम्हारा गुण शील और सौन्दर्य से युक्त यह मनोहर रूप है और कहां उस का भयंकर और अमंगल वेश !

जो सोचहि—(क्योंकि, संसार में सब से सुन्दर पहिली वस्तु चन्द्रकला है, वह तो पहिले ही से उस योगी के पास है, अतः) अब तक तो संसार उस एक चन्द्रकला के लिये ही सोचता था कि(वह उसके पास है)किन्तु अब संसार को तुम्हारे लिये भी शोक करना पड़ेगा। मेरा कहा हृदय में धारण कर, उस बावले को मत वरो । हृदय में सोच समझकर हठ छोड़ दो। हठ करने से दुख पाओगी और विवाह के समय, मेरी इस सीख को सोच २ कर, पछताओगी।

पछितांव भूत—जब वह भूत और पिशाचों की बरात सजा कर लायगा, यमदूतों के झुंड के समान उन्हें देखकर सब नर नारी डर कर भाग जायेंगे, तब तुम पछताओगी। जब इसके ओढ़े हुए हाथी के चमड़े से तुम्हारे दिव्य दुकूल (दुपट्टे) का गठजोड़ा किया जायगा, तो सखियां मुंह छिपाकर हंसेंगी। कोई तो प्रत्यक्ष ही और कई हृदय में कहेंगी कि यह तो अमृत के साथ विष को मिलाया जा रहा है।

तम्हहि सहित—जब वह तुम्हारे साथ बैल पर सवार होगा, तो नगर के स्त्री-पुरुष मुंह छिपा कर हंसेंगे। वह ब्रह्मचारी करोड़ों कुतर्क करके, जो चाहे सो बोल रहा है किन्तु उस पर्वत पुत्री पार्वती का मन रूपी पर्वत क्या हवा से हिल सकता है ? कभी नहीं। जो चाहता है कि सच्चे प्रेम और सच्ची लगन को अपनी हठ से बदल दें, वह समुद्र की ओर जाती हुई सावन की नदी को छाज से रोकना चाहता है, अर्थात् किसी की सच्ची लगन को बदलना वैसा ही असंभव है, जैसा कि सावन की नदी के रुख को छाज से रोकना।

पृष्ठ ११४ मनिबिनु फनि—मणि बिना सांप और पानी के बिना मछली शरीर त्याग देती है। जो जिस से प्रेम करता है वह उस के गुण दोषों को थोड़े ही देखता है ? ब्रह्मचारी के कानों को कड़वे लगने वाले वचन बाण के समान हृदय में चुभ गये। पार्वती की आंखें क्रोध से लाल हो गईं, भौंवे चढ़ गईं और ओंठ फड़कने लगे। उस का शरीर थर २ कांपने लगा और सखी को देखकर बोलीं कि, हे सखी इस ब्रह्मचारी को शीघ्र विदा करदो, यह बड़ा बकवादी है। कोई और चतुर स्त्री होगी जो तुम्हारे उपदेशों को

सुनेगी। मैं तो पागल के प्रेम में पागल हो गई हूं। व्यर्थ में वाद विवाद करके झगड़ा कौन बढावे ? कवि कहते हैं, जिसको जो अच्छा लगता है, उस के लिये वही मीठा है। सखी बहुत देर हो गई है, चलो अपने काम से चलें। यह फिर कुछ न कह उठे।

जिन कहहिं—यह कुछ उल्टी सीधी बात न कह उठे। यह प्रेम की रीति को नहीं जानता। शिव और साधु की निन्दा करने वाले तो पापी होते हैं, किन्तु सुनने वाला भी पापी होता है।

तुलसीदास जी कहते हैं—अविचल और पवित्र वचन सुन कर तथा स्नेह की परीक्षा लेकर, जिनके शीश पर चंद्रमा शोभित है, वे कृपा-सागर भगवान् शंकर प्रकट हो गए।

सुन्दर गौर शरीर......। भगवान् का सुन्दर गौर वर्ण का शरीर त्रिभूति से शोभित है। उनके लोचन विशाल, मस्तक और मुख मन को मोह रहे हैं। पार्वती जी उस मनोहर मूर्ति को देखकर, सजल आँखें, हर्षित हृदय और शरीर मे रोमांच अपनाने लगीं। वह बार-बार प्रणाम करती हैं, मुंह से कुछ बोलना कठिन हो रहा है—वह सोचती हैं, स्वप्न देख रही हूं कि सत्य रूप में शिवजी सम्मुख हैं ! जैसे जन्म का दरिद्र यदि महामणि पा जाय (तो उसे विश्वास नहीं होता) उसी तरह पार्वती जी भगवान् शिव का प्रभाव प्रकट देख रहीं हैं, किन्तु विश्वास नहीं होता।

सूक्ति सुधा

शब्दार्थ

पृष्ठ ११६—अच्युत = भगवान् विष्णु। सुर-सरी = देवताओं की नदी। निशवासर = रातदिन। हवाल = दशा। कमला = लक्ष्मी। पुरुष-पुरातन = विष्णु, वृद्ध मनुष्य। चंचला = कुलटा, इधर उधर दौड़ने वाली। गिरिधर = पहाड़ उठाने वाला। मधुकरी = भीख मांगना। दीरघ = दीर्घ, बड़े। आखर = अक्षर, शब्द।

नट-कुंडली = नटों की वह कला, जिसके द्वारा वे थोड़ी जगह में से अपने शरीर को बाहर निकाल लेते हैं। कढ़ि = निकलना।

पृष्ठ १२०—दीबो = देना, दान करना। रुचै = अच्छा लगता है। फरजी वजीर, मंत्री। क्रूर = दुष्ट। दिवान = मंत्री। भंवरिन = भांवर, विवाह समय की क्रिया। सिरावत = फेंक आते हैं। मौर = दूल्हे के शिर का आभूषण। कदली = केला। सीप = सीपी। भुजंग = सर्प। तम = अन्धकार। भुवन = संसार।

पृष्ठ १२१—आदि = प्रारम्भ, पहिला। परिणाम = फल। वमन = उगलना वित्त = संपत्ति, धन। अम्बु = जल। खेत = युद्ध का मैदान। काके = किस-किसके। अधम = पापी। गति = अवस्था। छीर = दूध। अंगवहि = सहन करता है। आंच = आग, ज्वाला। अनखाये = बिना खाये। अनखाई = क्रोध दिखावे। डीठि = दृष्टि, नजर। रीतहि = खाली। उरग = छाती के बल से चलने वाला सर्प। तुरग = घोड़ा। शशि = चन्द्रमा।

पृष्ठ १२२—करि = हाथी। मंडवेतर = विवाह के मंडवे के नीचे। भेषज = दवा। व्याधि = रोग। आरोग = रोग हीन। गुरायसि = बड़प्पन। सांकरी = संकीर्ण। भिनुसरा = रात का पिछला हिस्सा। सौर = सूर्य। शील = सान। विषाण = सींग।

पृष्ठ १२३—पानि = हाथ। हियो = हृदय। मुकताहार = रत्नों की माला। बावरी = पगली। गरीब निवाज = दीनों का पालक। क्वार = आश्विन का महीना। रहिमान = ईश्वर।

पृष्ठ १२४—पामारी = तुच्छ। हेत = संबन्ध, स्नेह।। ओछे वचन = अपशब्द। कूच = प्रस्थान, मौत। मधुकर = भौंरा। जलज = कमल। सीजे = कोमल होना। सूके = व्यवहार में लाना। हेरनहार = खोजने वाला। ताते = गर्म। सीरे = ठंडा।

पृष्ठ १२६—सदन = गृह। छदन = वस्त्र। साहिबी = बड़प्पन। करतार = परमात्मा। उद्यम = परिश्रम। हंकारे = बुलाए। परपच = खेल। दुंदुभी = नगाड़ा। विटप = वृक्ष। पुहुप = फूल। रावरी = आपकी।

पृष्ठ १२७—सीतहर = सर्दी को हरने वाला। कज-वन = कमल समूह।

तुषार=हिम, पाला। सुधाधर=चंद्रमा। पीत पिछौरी=पीताम्बर। विधुबाल =द्वितीया का चन्द्रमा। चितवनि=दृष्टि। सुमन=फूल। पुरइन=कमल। उनमानि=अनुहार, समान। दसनन द्युति=दांतों की आभा। वसुधा= पृथ्वी। सुधापगी=अमृत भरी।

कृष्ण विषयक मालिनी

कलित=सुन्दर। चखन=आंखों। मूंदरी=मुद्रिका। जरद=पीला। श्रुति-युग=दोनो कान। विलसवि=बस्ती हैं, शोभित हैं।

सूक्ति सुधा

सरलार्थ

अच्युत भाल......। विष्णु के चरणों में लहराने वाली, तथा शिवजी के शीश में मालती की माला बनकर शोभा पाने वाली गंगा को—हे भगवान् सुर-सरी देवताओं की नदी मत बनाओ, उसे तो पृथ्वी की शोभा ही रहने दो।

जिहि......ओर। रहीम कहते हैं—जिन्होंने अपने हृदय को चतुर चकोर बना लिया है, उनका ध्यान तो रात दिन कृष्ण चन्द्र की ओर ही लगा रहता है (चकोर का काम चन्द्र की आराधना है)।

सब——कास। यों तो सब से सभी जुहार बंदगी करते हैं, मगर मित्र और शत्रु उसी दिन ज्ञात होते हैं, जिस दिन कोई काम अटकता है या बाधाएं उपस्थित होती हैं।

जो रहीम——गोपाल। रहीम कहते हैं-यदि ब्रज की यही दुर्गत करनी थी, तो हे गोपाल, आपने व्यर्थ ही गोवर्धन उठाने का कष्ट हाथों को दिया। उसे उसी समय नष्ट हो जाने देते।

दीन ......होई। दरिद्र तो सबको देखता है, मगर दरिद्र को कोई नहीं देखता। रहीम कहते हैं, जो कोई दरिद्रों, को देखता है, वह दीनबन्धु भगवान् के समान हो जाता है।

कमला......होई। सब कोई जानते हैं—लक्ष्मी कहीं स्थिर नही होती। रहीम कहते हैं—ठीक है, पुरुष पुरातन की प्रिया हैं, क्यों नहीं चंचला होगी ?

पुरुष पुरातन का अर्थ भगवान् और वृद्ध मनुष्य भी होता है। कवि का लक्ष्य वृद्ध मनुष्य की पत्नी का स्वभाव दिखाना है। अधिकांश में वृद्धों की पत्नियां आचरण भ्रष्ट होकर रहती हैं।)

छोटे.. ...कोई। यदि छोटा मनुष्य कोई बड़ा काम भी करे, तो उसकी बड़ाई नहीं होती। रहीम कहते हैं, हनुमान को कोई भी गिरधर नहीं कहता है।

रहिमन......होई। रहीम कहते हैं-मन लगा कर कोई भी देखले, मनुष्य को वश में करना क्या है, भगवान् भी वश में हो जाते हैं।

ये रहीम......नांहि। आज के रहीम तो घर घर मारे २ फिरते हैं, मांग कर टुकड़े खाते हैं। दोस्तो, अपनी दोस्ती छोड़ दो, अब पहिले के रहीम नहीं रहे।

दीर घ——जाह। दोहे अर्थ के लिये तो विस्तृत हैं, मगर अक्षरों में थोड़े होते हैं। रहीम कहते हैं, ये वैसे ही हैं, जैसे नट कुण्डली मार कर, थोड़ी जगह में सिमट कर, फिर बाहर निकल आते हैं।

तबही.......रहीम। तभी तक संसार में जीना ठीक है, जबतक देने में कमी न पड़े। बिना दिये संसार में जीना, रहीम कहते हैं, हमें तो नहीं अच्छा लगता।

जो रहीम......जाई। रहीम कहते हैं, यदि नीच मनुष्य उन्नति कर लेता है, तो अत्यन्त घमण्ड में आजाता है। देखिये (शतरंज के खेल में), जब सिपाही मन्त्री बन जाता है, तो उसकी गति टेढी होने लगती है।

आपु......बबूर। स्वयं तो वह डाल, पत्ते, फल और जड़ समेत किसी काम का नहीं है, रहीम कहते हैं, फिर भी बबूल दूसरों की राह रोकता फिरता है।

रहिमन......देइ। रहीम कहते हैं, आंखों से आंसू बाहर निकल कर हृदय के दुख को प्रकट कर देते हैं! इसी तरह, आप जिसको घर से निकालेंगे वह आपका भेद क्यों नहीं औरों से कह देगा?

रहिमन... . बिकान। रहीम कहते हैं, मन रूपी महाराज के आंखों के समान कोई मंत्री नही। जिसको देखकर आंखें रीझ जाती हैं, मन उसके

हाथों बिक जाता है।

जाल......छोह। मछली के जाल में पड़ जाने पर, जल तो सारा मोह छोड़ कर बह जाता है, रहीम कहते हैं, मछली तब भी पानी के प्यार को नहीं छोड़ती (जन श्रुति है—मृतक अवस्था में मनुष्य द्वारा भक्षित होने पर भी केवल पूर्व स्नेह के कारण, वह भक्षक के हृदय में पानी की तृष्णा पैदा करती है)।

बढ़त......खाइ। रहीम कहते हैं—धनियों का ही धन बढ़ता है, धन तो धनियों के ही पास जाता है। उनका क्या घटे—बढ़ेगा, जो भीख मांग कर उदर-पूर्ति करते हैं।

काज .....मौर। आवश्यकता पड़ने पर कुछ और बात रहती है तथा आवश्यकता मिट जाने पर कुछ और ही बात हो जाती है। रहीम कहते हैं, भाँवर पड़ जाने के बाद, लोग मौर को—विवाह के शिरोभूषण को—नदी में डाल आते हैं।

कदली......दीन। स्वाति के जलके एक होने पर भी केले, सीप और सर्प के मुख में जाकर, उसके तीन गुण हो जाते हैं। इसलिए कहा जाता है कि—जिस तरह की संगति में बैठिएगा, वैसे ही गुण प्राप्त होंगे (कवि-समय ख्याति है, स्वाति बूंद, केले में कपूर, सीप में मोती और सर्प मुख में जाकर विष रूप ग्रहण करती है)।

ीता... ..उलूक। वह सीत हरण करता है, अंधकार को भी मिटाता है, संसार के पोषण-कार्य में कभी नहीं चूकता। यदि ऐसे सूर्य को भी उल्लू पूरी दृष्टि से न देखसके तो रहीम कहते हैं, सूर्यका क्या दोष है ?

यों रहीम .....रंग। रहीम कहते हैं, उपकार करने वालों को, इस तरह स्वयं भी सुख की प्राप्ति हो जाती है, जिस तरह, बांटने वाले को मेहंदी का रंग लग जाता है।

रहिमन......कराय। रहीम कहते हैं प्रारम्भ के बुरे कार्य का परिणाम, भी बुरा ही देखने में आता है। दीपक यदि अंधकार को खाता है, तो काजल ही वमन भी करता है।

जब लगि......होई। जब तक अपनी संपत्ति नहीं हो, तब तक कोई सहायक भी नहीं होता है। रहीम कहते हैं—कमल जब पानी से हीन होता है तो सूर्य भी उसका शत्रु ही बनता है।

मान . ...सीस। आदर सहित विष खाकर भी महादेव संसार के ईश बन गए और बिना आदर के, राहु अमृत पीकर भी शीश कटाने को विवश हुआ।

भलो भया......हेत। रण भूमि में शरीर से विलग होकर शीश ने हंसकर कहा—अच्छा हुआ जो शरीर से नाता छूट गया। पापी पेट के लिए हम किस-किस के समीप नवते फिरते ?

जो रहीम..... होई। रहीम कहते हैं, जो अवस्था दीपक की है, वही सपूत बेटे की है। रहने पर, घर में उजेला रहता है और चले जाने पर अंधियारा छा जाता है।

जलहि ..... भीर। दूध ने जैसे पानी को अपने में मिलाकर, स्वीय रूप दिया, रहीम कहते हैं, वैसे ही, आंच में जलते समय, दूध पर विपत्ति देख पानी भी अपने को जला रहा है।

रहिमन......अनखाइ। रहीम कहते हैं—मैंने इस पेट को बहुत बार समझा कर कहा कि यदि तू बिना खाये रहे, तो कोई कब मुझ पर क्रोध कर सके ? (अन खाना शब्द में श्लेष है—इसका अर्थ अन्न खाना और क्रोध करना दोनों प्रकार से ही हुआ है।)

रहिमन .... पीठि। रहीम कहते हैं—रहट की कुंडिया ऐसी हैं, जैसी कृपणों की दृष्टि होती है। खाली होने पर तो संमुख आती हैं, और भरी होने पर केवल पीठ दिखाती हैं।

खर्च बढ़्यो......मीन। खर्च बढ गया, परिश्रम घट गया और राजा भी निष्ठुर हृदय बन गया। रहीम कहते हैं, कहिए थोड़े पानी की मछली किस तरह जीवन धारण करे ?

उरग तुरग .....बार। सर्प घोड़ा, स्त्री, राजा, नीच जाति के लोग, तथा हथियार इन्हें संभाल कर रखिए। रहीम कहते हैं—इन्हें उलटते देर नहीं लगती।

पसरि······मीत। कमल के पत्र अपना विस्तार कर पिता को (जल को) ढक लेते हैं, और रात में संकुचित होकर, उसे चन्द्रिका के शीत में छोड़ देते हैं। रहीम कहते हैं, कमल के वंश का कौन वैरी है और कौन मित्र है! (वह तो अत्यन्त पितृ भक्त है।)

रहीमन······नाक। रहीम कहते हैं, हाथी के समान कोई बली नहीं, वह भी प्रभु की धाक मानता है। अत एव वह दीन होकर सबको दाँत दिखाता है और चलते समय नाक घिसता है (दांत दिखाना और नाक घिसना दीनता के लक्षण हैं।)।

जहां गाँठ······होइ। जहाँ गांठ है वहां रस नही होता, ऐसा सब कोई जानते हैं। मगर, मंडवे के नीचे भांवर के समय के एक-एक गठ-बधन में रस भरा रहता है।

रहिमन······नाथ! रहीम कहते हैं—अनेकों दवाएं करते हुए भी रोग संग नहीं छोड़ता है। मगर, वे पशु-पक्षी जङ्गल में नीरोग-तन वास करते हैं। भगवान् अनाथों के ही नाथ हैं।

अनुचित ·····बाढ़ि। गुरु की आज्ञा अत्यंत बड़ी है, तो भी अनुचित कथन नहीं मानना ही ठीक है। राम पिता के अनुचित वचन को भी पाकर जङ्गल गए और भरत ने राम की वाणी की अवहेलना की—राज्य काज अस्वीकार किया—दोनों में, रहीम कहते हैं, भरत का सुयश ही अधिक है।

चारा··· देई। भोजन संसार में प्यारा है, मृतक खाल भी उससे हित पालती है। रहीम कहते हैं, देखिए, मृदंग के मुख पर ज्योंही आटा लगाया जाता है, त्यों ही वह आवाज देने लगता है।

रहिमन······नाहि। रहीम कहते हैं–भक्ति की गली अत्यन्त संकरी है, इसमे दूसरा नहीं ठहर सकता। यदि 'आप' है (अहंभाव है) तो भगवान् नहीं हैं और भगवान् हैं, तो अहंभाव नहीं।

रहिमन·····बजाय। रहीम कहते हैं–ब्याह एक जंजाल है, यदि बचा सको, तो अपने को बचा लो। यहां तो ढोल बजा-बजा कर पैरों मे बेड़ी डालते हैं।

माह......ठौर। माघ महीने की पिछली पहर रात्रि के जाड़ों में भी मछली दुःख नहीं पाती। मगर, सूर्य की किरणें उसे दुःखद मालूम देती हैं। रहीम कहते हैं, अपनी मर्यादा (पद-स्थान) छोड़ कर किसी का जीना कठिन है।

रहिमन......बिसात। रहीम कहते हैं, आटे के लगाने पर तो मृदंग आवाज देने लगता है और जो घी शक्कर खाते हैं, उनका क्या कहना।

रहिमन......कूच। रहीम कहते हैं—तभी तक कहीं रहना ठीक है, जब तक पूर्ण संमान बना रहे। यदि सम्मान में कमी दिखाई दे, वहां से तुरत प्रस्थान कर दीजिए।

रहिमन......बिषाण। रहीम कहते हैं—विद्या-बुद्धि कुछ नहीं है, धर्म और दान का यश भी नहीं है, तो पृथ्वी पर व्यर्थ ही जन्म धारण किया। मनुष्य रूप में पूंछ और सींग से हीन पशु ही समझिए।

चरण......जानि। नश्वर संसार में, भले ही लाखो मिन्नतें करें, पैर पकड़ें, शिर धरें, मगर कराल काल प्राणी का हाथ नहीं छोड़ता। रहीम कहते हैं—यदि उसके हृदय को भगवान् ने छू लिया है, तो नहीं मालूम, क्या जान कर काल उसका पीछा छोड़ देता है।

टूटे......मुक्ता हार। यदि सज्जन पुरुष सौ बार भी टूट जांय, (आप से विलग हो जांय)। तो भी उन्हें प्रसन्न कर लीजिए। रहीम कहते हैं, मुक्ताओं की टूटी हुई माला को बार-बार पिरोकर ही अपनाना पड़ता है। (कोई उन्हें विलग नहीं कर देता।)

रहिमन......कपाल। रहीम कहते हैं—यह जीभ तो पगली है, क्या क्या स्वर्ग-पाताल की बातें कह गई (उलटी सीधी सुना गई)। स्वयं तो कह कर वह मुख में छिप बैठी और जूतियां शिर पर पड़ती हैं।

बड़े......मोल। श्रेष्ठ पुरुष अपनी बड़ाई नहीं करते और ना ही कोई

बड़ा बोल बोलते हैं। रहीम पूछते हैं कि, हीरा कब कहता है, कि मेरा मूल्य लाख रुपया है ?

मति......गरीब नेवाज। उसने (ईश्वर से) हीरे मोतियों को तो महँगा बना दिया और अन्न-जल तथा तृण को सस्ता कर दिया। रहीम कहते हैं—इसी लिए तो भगवान् को सब दीन पालक कहते हैं।

खैंचि—रीति। चढने में कठोर और उतरने में ढीला, कहो, भला यह कौनसी प्रीति है! आजकल भगवान् ने बांस और दीपक की रीति अपना ली है।

कह......हरि। रहीम कहते हैं, इस संसार से प्रीति तो पुकार देकर चली गई। अब तो केवल नीच मनुष्य में स्वार्थ ही स्वार्थ दीखता है

नीच......हाथ। रहीम कहते हैं—तू तो अपना दिया हुआ काम ही कर। तेरी सुधि की बात तो भविष्य के हाथ में है, कैसा फल मिलेगा, यह कौन जानता है? केवल पासा ही लोगों के हाथ में होता है, दांव उनके हाथ में नहीं होता।

थोथे......बात। रहीम कहते हैं, आश्विन महीने के बादल जिस तरह जल-हीन होकर निष्फल गरजते हैं, वैसे ही धनी पुरुष जब निर्धन हो जाता है, तो अपने पिछले दिनों की बातें करने लगता है।

घर......रहिमान। घर वालों का डर किया, गुरु का डर किया, वंश का डर किया, प्रतिष्ठा लज्जा का डर किया और मान का भी डर किया। रहीम कहते हैं, जिसके मन में डर समाप्त रहा, उसी ने भगवान् को पाया।

देन हार......नैन। देने वाला कोई दूसरा ही है, जो रात दिन भेजता रहता है। संसार के लोगों को भ्रम मुझ पर होता है (कि मैं देने वाला हूं) इसी से मेरी आँखें नीची हो रही हैं (लज्जा का अनुभव कर रही हैं)।

कहा......अनाज। तुच्छ कम्बल से क्या है, जाड़ा बिताने से अर्थ है—मतलब है। रहीम कहते हैं, कैसा भी अन्न मिले, भूख बुझा लेनी है।

रहिमन......तीन। रहीम कहते हैं, ऐसी प्रीति तो नहीं कीजिए, जैसी प्रीति खीरा ने की। ऊपर तो वह मिला रहा, मगर हृदय में तीन फांकें बनी रहीं।

वहै......रेत। रहीम कहते हैं, वह पिछली प्रीति, वह पिछला व्यवहार और वह पिछला संबन्ध एक समान कैसे रह सकता है? हाथ में बालू-रेत लेने पर आखिर वह घटते-घटते समाप्त ही हो जायगी।

समय .... भीम। रहीम कहते हैं, समय पड़ जाने पर, उसके दुर्वचन सहने ही होते हैं। सभा में दुःशासन द्रौपदी का वस्त्र खींचता रहा और भीम गदा लिये बैठे रहे।

सदा..... मुकाम। आठों पहर, सदा ही, प्रस्थान का नगाड़ा—मौत का बाजा—बजता ही रहता है। रहीम कहते हैं, इस संसार में कौन स्थायी रूप में बना रहा है?

रहिमन—भलो। रहीम कहते हैं, अपमान के साथ अमृत पिलाना भी हमें अच्छा नहीं लगता। सम्मान के साथ मरना अच्छा है—भले ही कोई बुलाकर विष ही दे दे।

रहिमन......धरैं। रहीम कहते हैं—आंखों की काली पुतली ऐसी लगती हैं, मानो कमल पर भौंरा बैठा हो, अथवा, चांदी के अरघे पर शालिग्राम—भगवान्—की मूर्ति शोभित हो।

रहिमन.. रसनहीं। रहीम कहते हैं—मैंने भी संसार की भाँति ही ऊख में रस देखा। मेरा विश्वास है, कि जहां गांठें है वहां रस नहीं है।

रहिमन ··· सूझै नहीं। रहीम कहते हैं, जल में पत्थर भीग तो जाता है, मगर वह कोमल नहीं हो पाता। इसी तरह मूर्ख का हृदय ज्ञान की बातें समझ तो लेता है, मगर उसे काम मे नहीं ला सकता।

बिन्दु····· आप मे। बिन्दु में समुद्र समा रहा है—कौन किससे यह आश्चर्य की बात कहे! रहीम कहते हैं, खोजने वाला खुद ही अपने हृदय में खो गया है (परमात्मा का रूप होते हुए भी मनुष्य अपने को पहिचान नहीं पाता)।

ओछो .. ..कारोकरे। रहीम कहते हैं, अंगार की तरह नीच मनुष्य की संगति छोड़ दो। अगार गर्म रहने पर शरीर जलाता है और बुझ जाने पर (कोयला बन कर) देह काली करता है।

विधना . के तान। ब्रम्हाजी ने यह सोचकर शेष को कान नहीं दिये कि तानसेन की तान सुनने पर कहीं सुमेरु और पृथ्वी न डोल जाय (शेष तान सुनकर अगर मस्त हो गया)।

भोंकि '' ''''भार में। जिसके शिर पर आशा का भार है, वह इस तरह भाड़ क्यों झोकेगा ? रहीम कहते हैं—हम तो अपना सारा भार भाड में झोंक कर—(जलने के लिए छोड़ कर) झंझटो से पार हो गए (हमें दुनिया के हानि लाभ से क्या प्रयोजन ?)।

पेट '''''लागि। पेट को अन्न चाहिए, शरीर को वस्त्र चाहिए। और मन भी जितनी श्रेष्ठ संपदाएं है, उनकी इच्छा रखता है। तुम्हारे ही सेवक कहला कर, रहीम कहता है, हे दीनो के भाई! हम अपनी विपत्ति किसके द्वार जाकर सुनावें ? हम तो पेट भर खाना चाहते हैं, परिश्रम सफल करना चाहते हैं, और कुटुम्बियों का पालन भी चाहते हैं और यह सब गुणों का प्रकाश करके। हे व्रज विहारी, यदि हमारी जीविका, आमदनी के साधन को आपने दूसरो पर डाल दिया, तो तुम्हारी क्या बड़ाई रह जायगी ?

दीने ''''द्वारे। भगवान् जिन्हें सुख देना चाहता है, रहीम कहते हैं, उसे सुखी होने से कौन रोक सकता है ? भले ही वह परिश्रम करे या न करे संपत्ति उसके द्वार पर विना बुलाए चली आती है। इस पर देवता सब परस्पर हंस रहे हैं कि ब्रम्हा का प्रपंच कोई नहीं देख सकता। पुत्र तो वसुदेव जीके पैदा हुआ है और नगाड़े नन्द जी के दरवाजे पर बज रहे हैं।

सुनिए ''''''' कहाई हैं। हे भगवान् आप हमारे लिए वृक्ष रूप हैं—हम तो आप के ही सुमन फूल हैं, हमे आप समीप रखेंगे तो हम आप की ही शोभा बढावेंगे। यदि आप हमे त्याग देंगे, तब भी हमें कुछ हर्ष-विषाद नहीं होगा, जहां-जहां जायंगे, दूनी शोभा पाते रहेंगे। देवताओं पर चढेंगे, मनुष्यों के शिर चढेंगे, रहीम कवि कहते हैं, लोग हमे हाथो हाथ खरीद लेंगे-विकनेमें देर नहीं लगेगी। यह निश्चित है, देश में रहें, चाहे परदेश में रहें, फिर किसी भी वेश में क्यों न रहें, हम तो सदा ही आप के कहलावेंगे।

सौं ....अंगार है। रहीम कहते हैं, बड़े-बड़ों से जान पहचान हुई, तो क्या हो गया, यदि परमात्मा ही सुख देना नहीं चाहता (तो कौन सुख दे सकता है)। सर्दी को हरण करने वाले सूर्य से कमल ने स्नेह बढ़ाया फिर भी कमलों के बन को हिम जलाता ही रहता है। (चंद्रमा ने कौन श्रम की कमी रहने दी) वह समुद्र में जाकर डूबा, फिर भगवान् महादेव के शीश पर निवास बनाया, फिर भी उसका कलंक—धब्बा दूर नहीं हुआ। वह तो चन्द्रमा में सदा बना रहा। सबसे बड़े प्रेमी चकोर के समूह को ही देखो, अमृत रखने वाले चन्द्रमा सा मित्र रखते हुए भी अंगार चुगा करता है।

छवि......हाल की। इस ओर आते हुए भगवान् कृष्ण की छवि कैसी है? लाल कछनी-धोती बांधे हैं, हाथों में मुरली है और पीताम्बर ओढ़ रहे हैं। केसर का टेढ़ा तिलक है—मानो बाल चन्द्र की आभा हो। सखी मेरे मन से विशाल-लोचन भगवान् का निहारना नहीं भूलता है। उनकी हंसी कितनी अच्छी लगती थी, मानो अधरों ने गुलाल की सुन्दरता छीन ली हो। हृदय की माला के मुक्ता ऐसे लगते हैं—जैसे वह कमल के पत्तों पर डाले गए जल के चमकदार दाने हों। कन्हाई की बोली और चलन पर मैं अपने आप बिना मोल बिक गई। वह रूप जिसने देखा है, वही रहीम की दशा जान सकती है।

कमल दल......बानि। उनके लोचन कमल दल की तरह हैं। हे सखी! मेरे मन से उनका धीरे-धीरे हंसना नहीं भूलता है। वह उनके दांतों की आभा-बिजली की आभा से भी अधिक ज्योति रखती थी। संसार को उस अमृत भरी बोली की मधुरता ने अपने वश में कर रखा है। हृदय सदा उस विशाल हृदय की मुक्ता मालाओं की थहरन—हिलने-डुलने की क्रिया की ओर खिचा रहता है। नाच के समय पीतांबर भी किस तरह फहरने लगता है? नित्य ही मुझे उनका वृन्दावन से ब्रज की ओर आना जाना अच्छा लगता है। रहीम कहते हैं—श्याम सुन्दर की सभी गतियों की सुन्दरता हृदय से दूर नहीं हटती है।

कृष्ण विषयक मालिनी

कलित……श्याम आँखें। जवाहरों से जड़ी हुई माला पहने हुए वह विशाल चंचल लोचन चांदनी में खड़ा था।। कमर से सुन्दर पीताम्बर बांधे हुए था। सखियों के बिना मेरा अलबेला कृष्ण अकेला-एकाकी था। उसकी टेढी और घोर काली अलकों को देखकर, भौंरे अपने हृदय में कसक पाने लगे कि मैं इस तरह काला नहीं हो सका। मैं चंद्रमा की किरणों को ज्योतिहीन देख रहा हूँ। मन करता है, आह, फिर से मोहन को कैसे देख सकूं। वह सुन्दरी सुन्दरी भी तो चकित दृगों से उसी कन्हैया की याद में खड़ी थी, उसका रूप मणियों से जटित और रस से युक्त था। कमलों की-सी मुख वाली कितनी ही सुन्दरियों को देखा, मगर जैसा श्याम का हाथ देखा वह कह नहीं सकता। वह पीतवस्त्रों वाला, व्रज की फुलवाड़ी को देख रहा था और झुक-झुक कर झूम-झूम कर मस्त मन खड़ा गा रहा था। उसके दोनों कर्ण, हिलते हुए कुंडलों से दामिनी के समान चमक रहे थे, और उसके लोचन तो मानो खेल करते हुए इधर-उधर घूम रहे थे—तिरछे देख रहे थे। उनकी आँखें नदी के समान चंचल, तीक्ष्ण, तीर सी नोकदार हैं, कटीली हैं। स्वच्छ कमल सी हैं, फिर बड़ी और हृदय को विदीर्ण करने वाली हैं। मेरा मन भौंरे की तरह उन्हें खोज रहा है, उन्माद में मान का कोई खयाल नहीं रह गया है। मेरे मन में वे सुन्दरी आँखें ही आँखें बस रही हैं काली काली।
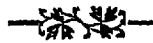
रसखान

सरस-सवैये

शब्दार्थ

पृष्ठ १३१—सुमार—गिनती। छारा—भस्म। पंचानल—योगी अपने चारों ओर चार अग्नि कुण्ड जलाते हैं और ऊपर सूर्य की किरणें पड़ती हैं,

यही पंचानल या पंचाग्नि है। लबार—झूठा। प्रतिहारन—द्वारपाल, सिपाही। भोरे—प्रभात। भव-नागर—संसारी जन।

पृष्ठ १३२—छाजत—शोभा देती। डामर—शृंगी। संजम—इन्द्रिय-निग्रह। गेहनी—पत्नी। रविनंद—सूर्य पुत्र यमराज। पुरंदर—इन्द्र। विलसे—सुखी हो।

पृष्ठ १३३—समृद्धि—धन संपत्ति। रेणुक—धूलि। निवास—रहने की जगह। शेस—शेषनाग। सुरेश—इन्द्र। दिनेस—सूर्य। प्रजेस—प्रजापति। धनेस—कुबेर। रमा—लक्ष्मी। तड़ाग—सरोवर, तालाब। कलधौत—श्वेत या स्वर्ण। भौनहिं—घर। छौनहिं—संतान को। वारत—न्योछावर करती। ढोटा—पुत्र। तरनि-तनूजा—यमुना।

पृष्ठ १३४—लोचन—आँख। ब्रह्म—परमात्मा। गुंजा—लाल रङ्ग का जङ्गली बीज। मन्दर—पहाड़। गोरज—गोधूलि, चन्दन। बंक—टेढ़ी।

पृष्ठ १३५—तटिनी—नदी। अटा—अटारी। नियरे—समीप। वनिता—स्त्रियाँ। कानि—लज्जा। भावतो—प्रेमी। अधरान—होठों पर। अधरान—नीचे जमीन पर। स्वाँग—तमाशा। दृगनि—आँखों से।

पृष्ठ १३६—ठगौरी—छल। भट्ट—वीर। सीरो—ठण्डा। तातो—गर्म। तरुनी—युवती। बारी—बच्ची। छोहरा—पुत्र। बगराइगो—बिखेर गया।

रस सवैये

सरलार्थ

कहा रस खानि……रस खान कहते हैं, सुख और वैभव की गिनती बढ़ाने से क्या होना है और बड़े योगी बनकर शरीर में विभूति मलने से भी क्या होना है? पँचाग्नि जला कर साधना साधने से क्या और जल के बीच तपस्या से क्या होना है तथा समुद्र के आर-पार का राज जीतने से भी क्या होना है? बार-बार का जप, इन्द्रिय दमन और अनेकों व्रत, हजारों तीर्थ की यात्रा, इन्हें अरे असत्यवादी! कौन महत्त्व देता है? यदि तुमने नन्द कुमार

कृष्ण से प्रेम नहीं बढ़ाया, उसके दरबार की सेवा नहीं की—(उसकी भक्ति नहीं की) उसे न हृदय से चाहा और न दर्शन ही किया तो कुछ नहीं किया।

कंचन के……। सोने के महल, जिन पर आँखें नहीं ठहरतीं, जिनमें मणि-मुक्ताओं की ज्योति से सदा ही दिवाली बनी रहती है। और बड़प्पन की कहाँ तक चर्चा करूँ, द्वारपालों की भीड़से भी राजागण टाले नहीं टलते। सवेरे, गङ्गा जी में स्नान कर रत्नों को लुटा कर, बीसों बार ध्यान लगाते और वेद को गाते हैं। मगर यह सब होने से क्या हुआ? रसखान कहते हैं, यदि पीताम्बर धारी से प्रीति नहीं हुई और उसका ध्यान नहीं किया, तो सभी व्यर्थ है।

सुनिये सबकी……रसखान कहते हैं, सबकी सुन लीजिए, अपनी ओर से कुछ नहीं कहिए और इस तरह संसार के लोगों में रहिए (निवास कीजिए)। सभी व्रत और नियम रुचाई के साथ कीजिए, जिससे संसार रूपी समुद्र को पार कर सकिए। [सभी से बिना हृदय में दुर्भाव लिए मिलिए और सत्संगति के प्रकाश में रहिए। भगवान् गोविन्द का भजन इस तरह ध्यान पूर्वक कीजिए, जिस तरह पनिहारिन स्त्री का ध्यान शिर पर के घड़े में लगा रहता है (वह बोलती और राह चलती हुई भी शिर के घड़े को गिरने नहीं देती)।

बैन वही……। बोली वही है, जो उनके गुण गान से भरी हो और कान वे ही हैं, जो उन बोलियों से सने हों—पूरित हों। हाथ वे ही हैं, जो उनकी सेवाओं में उनके शरीर का स्पर्श करें और पाँव वे ही हैं, जिनसे उनके पीछे-पीछे आना जाना हो। प्राण वे ही हैं जो उनसे मिले हों और मान भी वही है, जो उनकी मन मानी पर हो। रसखान कहते हैं, उसी तरह, रस-खान—रस का भंडार—वही है, जो उस रस के भंडार से रसखान बना हुआ है।

इक ओर किरीट……। एक ओर किरीट—कलङ्गी—शोभित है, तो दूसरी ओर सर्पों का समूह जमा है। इधर मुरली की मधुर ध्वनि ओठों पर है, तो उधर शृङ्गी की आवाज है। रसखान कहते हैं, एक कांधे पर पीताम्बर है,

तो एक पर व्याघ्रचर्म ही दर्शित है। अरी ! संगम स्थल में डुबकी खाकर देखो तो यह अद्भुत वेष में निकल रहा है।

यह देख......। देखो ये धतूरे के पत्ते चबाते हैं और शरीर में धूलि लगाते हैं। चारों ओर जटाएँ लटक रही हैं, पवित्र भाल पर सर्प फन फैला रहे हैं। रसखान कहते हैं, जो इन्हें हृदय से निहारते हैं (दर्शन करते हैं,) उनके दुःख कष्ट भाग जाते हैं। हाथी के चर्म और मुण्डों की माला धारण किए, वे गाल बजाते आ रहे हैं।

वैद की औषधि......वे वैद्य की दवा नहीं खाते और नहीं संयम परहेज ही रखते हैं, यह मुझ से सुन लो। तुम्हारा ही जल पीते हैं। रसखान कहते हैं, तुम्हें संजीवन प्राणदाता जानकर, तुमने सुख प्राप्त करते हैं। अरी अमृत धारिणी गंगे, सभी पथ्य और कुपथ्य तुम से ही प्राप्त होते हैं। इतना ही क्यों, शिव तो तुम्हारे भरोसे ही आक धतूरा चबाते तथा विष खाते फिरते हैं।

द्रौपदी औ गणिका......। द्रौपदी, गणिका, गजराज, गीध और अजामिल ने क्या किया, उसको न देखा। गौतम नारी अहल्या किस प्रकार मुक्त हुई, फिर प्रह्लाद का भारी दुःख किस तरह दूर हुआ? रसखान कहते हैं--तुम क्यों सोच कर रहे हो, यमराज बेचारे क्या कर लेंगे? तुम्हें कौन-सी शङ्का सता रही है, जबकि तुम्हारे रक्षक माखन खाने वाले श्रीकृष्ण हैं?

मानुष हौं तो......। रसखान कहते हैं,यदि मनुष्य बनूं,तो हे भगवान् ! मैं गोकुल गांव के गोप गणों में वास करूँ। यदि पशु बनना पड़े, तो मेरा वश ही क्या चल सकता है? मगर फिर भी प्रार्थना है कि मैं पशु होकर नित्य ही नन्द जी की गायों के झुण्ड में ही चरूँ। पत्थर बनूँ तो उस पहाड़ का पत्थर बनूँ, जो इन्द्र के कोप समय व्रज का छत्र बना था। यदि पंछी बनने का अवसर आए तो मेरा वास यमुना किनारे कदम्ब की डालों पर हो।

जो रसना......। जो जीभ, जीभ कहलावे उसे सदा आप अपने नाम की ध्वनि दीजिए। जो हाथ अच्छे कार्य करें, उन्हें कुंज—कुटीरों की सफाई का काम दीजिए। रसखान कहते हैं, सभी सिद्धियों और लक्ष्मी को मैं व्रज की धूलि अंगों से लगाकर पाऊँगा। मुझे अपना निवास स्थान देना चाहें, तो यमुना किनारे के कदम्ब की डाल का निवास दीजिए।

सेस सुरेश······। शेषनाग, इन्द्र, सूर्य, गनेश, ब्रह्मा, कुवेर तथा शिवजी की पूजा कर कोई मन चाहा धन प्राप्त करले, कोई भवानी को भजकर सभी भांति से अपने मन की आशा पूरी कर ले। कोई लक्ष्मी की अर्चना कर इच्छानुसार अटूट संपत्ति प्राप्त करले और चाहे कोई अन्यत्र अपनी इष्ट प्राप्ति कर ले। मगर, रसखान कहते हैं, भले ही तीनों लोक रहें या नाश हो जायँ, (मेरा कहीं ठौर रहे या न रहे) मेरे साधन तो कृष्ण ही हैं।

या लकुटी······। इस लकुटी—लाठी और कम्बल पर मैं तीनों लोक का राज्य छोड़ दूंगा। आठ प्रकार की सिद्धियों और नव प्रकार की निधि-सम्पत्तियों को भी मैं नन्द जी की गाएं चराकर भुला दूंगा। रसखान कहते हैं, यदि इन आँखों से कभी ब्रज भूमि के वनों, कुंजों और तालाबों को देख सकूं, तो करोड़ों ही स्वर्गीय महल करील की झाड़ियों पर न्योछावर कर दूंगा।

आज गई हुती······। आज मैं सवेरे ही मथानी लेने नन्दजी के घर गई थी। उसके पुत्र लाख-करोड़ वर्ष जिएँ, यशोदा का सुख कहा नहीं जा सकता। वह तेल लगाकर, आंजन देकर, भौंहे बनाकर और दिठौना देकर अपने बच्चे को झूले पर डाले निहार रही थी—पुत्र को प्यार कर रही थी पुचकार रही थी।

धूरि भरे अति···। धूल से भरे हुए श्याम सुन्दर अत्यन्त शोभा पाते हैं—वैसी ही शिर की चोटी भी सुन्दर बनी है। आंगन मे वे पैरों में पैंजनी और कमर में पीली कछौटी पहने खेलते खाते फिरते हैं। रसखान कहते हैं—इस रूप पर कामदेव के सौंदर्य की करोड़ो विभूतियां देखते हुए न्योछावर हैं। अरी सजनी! कौए का भी बड़ा ही भाग है, जो भगवान् के हाथ से माखन रोटी ले भागा।

अपनो सो ढोटा······। अपने जैसा पुत्र ही हम सबों के पुत्रों को मानते रहे, हम दोनों ही प्राणी निरन्तर हो सब के काम आए तो भी, रसखान कहते हैं, अब वे दूर से तमाशा देखते हैं, यमुना के समीप कोई नहीं जाता? आज वैरियों की बात क्या कहें, जो हितैषी हैं, वे भी आँख-बचा रहे हैं। सखी, क्या कहें—सभी व्यर्थ का भरोसा देते हैं, हाय, मेरे पुत्र कृष्ण को लोग कालिया नाग से क्यों नहीं छुड़ा लेते?

(यह उक्ति कालीय दमन के समय श्री कृष्ण को नाग से उलझे देखकर माता यशोदा की किसी सखी के प्रति है ।)

सेस गनेस……। जिनका निरन्तर गान शेषनाग, गणेश, शिवजी, सूर्यभगवान् तथा इन्द्र किया करते हैं, जिन्हें वेद अनादि अनंत, अखंड, अछेद्य और अभेद बताते हैं । नारद शुकदेव और व्यास सरीखे ऋषि जिन्हें रटते हुए हार गए, मगर पार नहीं पा सके । उन्हें ही ग्वालों की लड़कियां छछिया भरकर दही देती और नाच नचा रही हैं ।

ब्रह्म मैं ढूंढ्यो…। परमात्मा को मैंने पुराणों के वर्णनों में ढूंढा, वेदों की ऋचाएं चौगुने चाव से सुनीं । कहीं भी कभी वह दिखाई नहीं पड़ा, उसका कैसा स्वरुप है और किस स्वभाव का है (इसका पता नहीं चला) । पुकारते और खोजते हुए हार गया, रसखान कहते हैं, किसी पुरुष या स्त्री ने उसका पता नहीं बताया । देखने में आया तो देखा वह कुंज कुटीर में छिपा बैठा राधा रानी के पैरों को पलोट रहा है—उन्हें मना रहा है ।

ग्वालन संग जैबो……। ग्वालों के संग जाना है और उन्हीं के संग गाएँ चराना फिर तानों में गाना आदि बातें जब याद आती हैं तो आखें बरस उठती हैं । यहाँ के गज मोतियों की मालाएं गुंजा की मालाओं पर न्योछावर कर दूं । जब कुँजों की याद आती है, प्राण घबड़ा उठते हैं, धड़कन पैदा हो जाती है । गोबर के गारे ही मुझे आज भी रुचिकर लगते हैं, मरकत मणियों से जड़े हुए ये महल नहीं भाते । पहाड़ों से भी ऊँचे महल द्वारिका में हैं, मगर ब्रज के घरौंदे ही मेरे हृदय को झकोर रहे हैं ।

गोरज बिराजे……। शिर पर चंदन या गायों के द्वारा उड़ाई गई धूल शोभा देती है, जंगली मालाएँ लहलहा रही हैं, आगे-आगे गाएँ हैं और पीछे-पीछे ग्वाले मधुर तान गाते हैं । बाँसुरी की तान जैसी मीठी है, वैसी ही उनकी चितवन भी टेढी हैं और वैसी ही मंद-मंद मुस्कान भी है । कदम्ब के वृक्ष के नीचे, यमुना के किनारे, तनिक ऊँचे चढकर देखो, पीताम्बर फहर रहा है । रसखान कहते हैं—रस की वर्षा करता हुआ, शरीर के तापों को मिटाता हुआ, तथा आंखों और प्राण को मुग्ध करता हुआ, वह रसखान-मोहन आ रहा है ।

आयो हुतो ·····। रसखान कहते हैं (कोई ब्रज युवती अपनी सखी से कह रही है) अरी, वह तो समीप आया था, कैसे कहूं, तू उस स्थान पर नहीं पहुंची ? वह वही था, जिसे देख कर ब्रज की स्त्रियाँ प्राण न्योछावर करती हैं, बलैयाँ लेती हैं। कोई किसी की लज्जा नहीं करती, यदुराज ने कुछ ऐसा ही जादू कर दिया है। वह फिर तानों में गावेगा, प्रेम की स्थापना करेगा, गाएँ चरावेगा और प्राणों को मोह लेगा।

कानन दै अँगुरी··· ·। सखी, मैं तो कानों में अंगुली दे लूंगी, वह जब मन्दर वंशी बजावेंगे(अपने कान बन्द कर लूंगी)। सोहनी के स्वर में, ऊँचे पर चढ़ कर, मोहन अपनी बांसुरी बजावें तो बजाया करें। कल लोग मुझे कितना भी समझावें, मैं ब्रज वासियों से पुकार कर कहती हूं कि अरी माई ! मुझ से तो उस मुँह की मुस्कान संभाली नहीं जायगी, किसी तरह संभाली नहीं जायगी।

मोर पखा······मैं भी मोर के पंख शिर पर धारण करूंगी, गले में गुंजाओं की माला पहनूँगी, पीताम्बर ओढ़ कर लकुटी लूंगी और गाएँ लिए गाती हुई जंगल में साथ २ घूमूँगी। रसखान कहते हैं—मुझे उस रस के भंडार से ऐसा ही प्रेम है, तुझसे कह रही हूँ, सभी स्वाँग पूरा कर लूंगी, फिर कृष्ण की होठों से लगाई वंशी अपने होठों से लगा लूंगी।

आजु अली··· ··। सखी, आज एक गोप कुमारी पागल सी हो गई है, तनिक भी शरीर की संभाल नहीं रही। न तो वह माता आदि की सुनती है, न देवताओं की पूजा करती है, फिर भी चतुरा सास उसे सयानी कह कर समझाती है। रसखान कहते हैं—इसी तरह सारा ब्रज घिरा हुआ है, दूसरे २ उपाय सोचे जाते हैं, मगर कोई भी उस कन्हैया के हाथ से उस वैरन बांसुरी को छीन कर जला नहीं देता (सारा झंझट ही मिट जाय)।

जल की न घट·········। घड़े में जल नहीं भरतीं, राह चलने में पैर नहीं उठातीं, न घर का कुछ काम करती हैं, केवल बैठी हुई निःश्वास भरती हैं—ऊँची साँसें छोड़ती हैं। एक तो सुनते ही जमीन पर गिरी, एक तड़पने लगी और एक की आंखों से आंसू निकल आए। रसखान से सभी ब्रज युवतियां कहती हैं—विधाता कैसा विवेक है, हाय वंश की हँसी हो गई

(हम लोगों ने कुछ नहीं विचारा)। अब तो यही उपाय किया जाय—बांसों को ही कटवा दें, न बांस पैदा होंगे और न फिर बांसुरी बजेगी।

कौन ठगौरी……। जाने आज भगवान् ने रसभरी बांसुरी बजाकर कौन-सी ठग की माया कर दी ? जिसने भी बांसुरी की तान सुनी, उसी ने उसी समय लज्जा को बिदाई दे दी। पल-पल सभी नंद के दरवाजे की ओर चक्कर भरती हैं, क्या नई दुलहन क्या बड़ी बूढ़ी और क्या बच्ची (सभी की एक दशा है)। रसखान कहते हैं, इस ब्रज मंडल में, वह कौन बीर है, जिसे बांसुरी ने लट्टू की तरह नाचने वाली नहीं बनाया (मोहित नहीं कर लिया) ?

दूध दुह्यो………। दुहा हुआ दूध ठंडा पड़ गया, जो गर्म किया हुआ था, वह भी जमाया नहीं जा सका। जो जमा दिया था, वह भी रखा-रखा खट्टा पड़ गया (उसकी संभाल नहीं हो सकी)। रसखान कहते हैं—ये हाथ ये पैर सभी ऐसे हो रहे हैं, मानो वे दूसरे के हों। और, ऐसा तभी से हुआ जब से वह रस का भंडार अपनी तान सुना गया है। जैसे पुरुष हैं, वैसी ही हालत स्त्रियों की है, इतना ही क्यों वही दशा युवतियों और बच्चियों की है। क्या कहा जाय सारा ब्रज ही व्याकुल हो गया है। सखी, यह समझ में नहीं आता कि यह यशोदा का पुत्र बांसुरी बजा गया या विष फैला गया है।

नरोत्तम दास

सुदामा चरित्र

शब्दार्थ

पृष्ठ १३९—दुःख मोचन—कष्ट हरने वाले। श्रवननि—कानों में। पद्म—कमल। तपकै—तपस्या कर। पंकज-कमल। हितू-मित्र। पेलि-जबर्दस्ती जोर से। बक—बकवाद। जाम—घड़ी। लदा—गाड़ी।

पृष्ठ १४०—अटारी—अटा ऊँचे महल। बिधि—ब्रह्मा। छानी—छप्पर कुटिया। ललाट—भाग्य, कपोल। अगंत्रई—आगे। सरसाइए—बढ़ाए। भूप—राजा। कनावड़ी—कनौड़ा। ठाकुर—मालिक। प्रसंग—विषय।

पृष्ठ १४१—जक—हठ। गति—अवस्था। छरिया—द्वारपाल। हुलास—आनन्द। बूट—दाने। दीठी—दृष्टि। भौन—मकान। गौन—गमन,

यात्रा। बलवीर—कृष्ण। पगा—पाग। झगा—अंगरखा। कोआहि—कौन है।
उपानह—जूता। वसुधा—पृथ्वी। अभिरामा—सुन्दर। सुरनायक—इन्द्र।
कल्पद्रुम—कल्प वृक्ष।

पृष्ठ १४२—परसे—छुए। रंक—दरिद्र। राउ—राजा। बिवाइन—पैर का फटना। कंटक जाल—काँटों का समूह। कितै—किधर। तन्दुल—चावल। अन्तरजामी—हृदय की बात जानने वाले। सुहृद—सखा। भगत—भक्त। चांपि—छिपा कर। बानि—लत, आदत। जीरन पट—पुराने वस्त्र। चबाउ—हंसी। चतुरानन—ब्रह्मा। त्रिपुरारि—महादेव। औंको—रुष्ट हुआ। घौंको—कौन है।

पृष्ठ १४३—बकसें—क्षमा करदें। अघात—संतुष्ट होते। थरहरे—कांपती है। रमा—लक्ष्मी। अनचाह—बैर। सिता—शर्करा। शरद्—शरद ऋतु। सुरभि—गाय। व्यंजन—षड्रस। बिलोकि—देखकर।

पृष्ठ १४४—आछै के—अच्छीतरह। पछ्यावरि—अन्तिम भोजन। हुतौ—था। गाथ—कहानी। पुलकन—हर्ष। ओड़त—मांगते। सकेली—संभाल कर। आरसी—दर्पन। मोरचा—जंग, काई। धाम—घर। नौगुनधारी—ब्राह्मण, यज्ञोपवीत धारण करने वाला। छगुन—षट् विकार। त्रिगुन—सत, रज, तम। चापल—चोट। कंचन—सोना। निपट—निरा।

पृष्ठ १४५ रोष=क्रोध। दोष=कलंक। पुरतीर=गाँव के समीप। हयगयन्द=घोड़े हाथी। हुती=थी। कंथारी=गुदड़। टाट=बोरी। माटकी—घड़ा। चामीकर=सोना। लूमवारी=पूंछवाली। दलनहारी=नष्ट करने वाली।

पृष्ठ १४६—कनक दण्ड=सोने की छड़ी। प्रवीन=बुद्धिमान्। चतुरंग=चार प्रकार की सेनाएं। कन्त=स्वामी।

सुदामा चरित्र

सरलार्थ

सुदामा की स्त्री कहती है—

जिनके नयन कमल के समान हैं, मस्तक पर जिनके तिलक है, जो दुःख-

मोचन हैं (कष्टों को दूर करने वाले हैं), जिनके कानों में कुण्डल हैं, जो शिर पर मुकट धारण किए हैं, जो पीताम्बर ओढते हैं, जिनके गले में पारिजात पुष्प की माला है, और शंख, चक्र, गदा, पद्म से जिनके हाथ शोभित हैं, (नरोत्तम कहते हैं कि) उन भगवान् कृष्ण के लिए तुमने (सुदामा ने) ही कहा है कि हम और वे दोनों संदीपन गुरु के पास साथ ही पढ़ते थे। अतः स्वामी, द्वारिका जाने से भगवान् हमारी दरिद्रता अवश्य दूर करेंगे, वे द्वारिका के अधीश्वर हैं और अनाथों के नाथ हैं।

सुदामा कहते हैं—

हे नारी, मैं सम्पूर्ण जगत् को शिक्षा देने वाला हूं, अब मुझे तू क्या शिक्षा देती है ? जो तपस्या करते हुए परलोक सुधारना चाहते हैं, उन्हें धन की अभिलाषा नहीं होती। मेरे हृदय में भगवान् के चरण कमल का ध्यान है, तू हजारों बार परीक्षा कर देख ले। पगली, धन तो दूसरे लोगों को चाहिए, ब्राह्मण के लिए तो भिक्षा ही धन है।

स्त्री कहती है—

यदि कोदों और सवाँ का अन्न भी भरपेट मिल जाय तो मैं दही-दूध और मिष्टान्नों की इच्छा नहीं रखती हूं। सारी सर्दी वस्त्र-हीन रह कर सी-सी करती व्यतीत हुई—मैं भले दुख पाती हूं मगर, तुम्हें कष्टित नहीं होने देती। और यदि यह नहीं जानती कि तुम्हारे मित्र भगवान् कृष्ण जैसे हैं, तो तुम्हें जोर देकर द्वारिका क्यों भेजती ? हे स्वामी, इस घर से कभी भी टूटे तवे और फूटी कठौती का संग नहीं छूटा।

सुदामा कहते हैं—

सभी तर्कों को छोड़ कर तुझे यही कहना रहा है, आठों प्रहर तूने यही ज़िद ठान ली है। तूने मन में जान लिया है कि जाते ही वे गाड़ी भर सम्पत्ति लदवा देंगे और मैं ले आऊँगा। जिसे विधाता ने टूटा चौपाल दिया है, उसे महल कहां से मिलेंगे ? अरी मूर्खा, यदि भाग्य में दरिद्र रहना लिखा है, तो वह किसी से मेटा नहीं जा सकता।

स्त्री कहती है—

वस्त्र फटे हैं, छप्पर भी टूट रहा है, भीख मांगकर लाना और खाना यही

अपना भाग्य है। बिना यज्ञ के देव पितर भी उल्टे हो रहे हैं। वे द्वारकाधीश भगवान् दीनबन्धु हैं, इस दुःख को देखकर अवश्य दया दिखावेंगे। मैं आगे से जानती हूं कि वह कुछ अच्छा ही देंगे। हे स्वामी, द्वारिका तक जाते हुए क्यों आलस्य करते हो? उनके साथ तुम्हारी क्या विचित्र बात हो चुकी है, जिससे तुम संकोच करते हो? यदि जन्म भर हमें दरिद्रता ही दु:ख देती रही तो कृपा-सागर की मित्रता किस दिन काम आवेगी?

सुदामा कहते हैं—

तूने बात तो अच्छी कही और भलाई की कही, किन्तु मेरे हृदय में यह है कि मित्रता को बराबर बढ़ाना चाहिए। मित्र से कुछ मिले तो कुछ अपना भी खर्च करना चाहिए, यदि मित्र का खाइए तो स्वयं भी खिलाना चाहिए। वे महाराज हैं, राजाओं का समाज जोड़कर बैठते हैं। वहां इस रूप में जाकर क्यों लाज उठायें? सुख-दुख से चाहे जैसे हो दिन तो काटने ही पड़ेंगे, परन्तु भूलकर भी विपत्ति पड़ने पर मित्र के यहां नहीं जाना चाहिए।

स्त्री कहती है—

यदि दीनदयाल भगवान् जैसे मित्र हों तो हजारों बार कनौड़े (छोटे) होने में संकोच उठाने में भी कोई हर्ज़ नहीं। वे तीनों लोकों के स्वामी हैं, उनके दरबार में जाते हुए आप लज्जा नहीं कीजिये। हे स्वामी, मेरा कहना हृदय में रख कर भूल से भी दूसरा विषय और प्रसंग न निकालिए। अन्य लोगों के द्वार जाने से हे स्वामी, कोई काम नहीं है, आप तो द्वारिकानाथ के द्वार की ओर यात्रा कीजिए।

सुदामा कहते हैं—

द्वारिका जाओ, द्वारिका जाओ, तेरी तो यही जिद आठों पहर की हो रही है। यदि नहीं करता हूं तो बड़ा ही दुःख है, फिर अपनी हालत देखते हुए जाता हूँ तो कहां जाऊं? वहां दरवाजे पर ही भगवान् के पहरेदार खड़े रहते हैं, राजा भी समीप नहीं जाने पाते। मैं उनकी भेंट के लिए पान-सुपारी कहां से लेजा सकता हूं—चावल के चार दाने भी नहीं हैं।

यह सुनकर ब्राह्मणी पड़ौसिन के पास गई और हर्ष सहित पाव सेर चावल उधार ले आई। सुदामा जी ने सिद्धिदाता गणेश का स्मरण कर उन

चावलों को अंगोछे की खूंट—कोने में बांध लिया और द्वारिका की ओर आंगते खाते राह के दाने बीनते चल पड़े।

सोने से निर्मित भवनों को देखकर आंखों में चकाचौंध छा गई। द्वारिका के भवन एक से बढ़कर एक उन्हें सुन्दर दिखाई पड़े। बिना पूछे कोई किसी से वहां बात नहीं करता है। सभी देवता की तरह चुप साधे बैठे हैं। सुदामा जी को देखते ही सभी नगरवासी दौड़ पड़े, पैरों को जा पकड़ा—पूछने लगे, हे ब्राह्मण, कृपा कर बताइए, आप कहां जा रहे हैं?" यह सुनकर सुदामा जी बोले—'अधीर हृदय के धीरज और दूसरों की पीड़ा हरने वाले श्री कृष्ण भगवान् का महल कौन-सा है, मुझे बता दीजिए।'

द्वारपाल श्रीकृष्ण जी को कहता है—

हे स्वामी, जिस के शिर पर पगड़ी नहीं है और न शरीर में अंगरखा है, जी, कौन है और किस गाँव में रहता है, यहभी नहीं बताता, फटी-सी धोती बाँधे है, दुपट्टा-चादर भी समाप्त प्राय है और पैरों में जूते का कोई ठिकाना नहीं, ऐसा एक दुर्बल ब्राह्मण दरवाजे पर खड़ा है और भौंचक्का-सा सुन्दर पृथ्वी की ओर देखता है। वह दीन दयाल का निवास स्थान पूछता है और अपना नाम सुदामा बताता है।

भगवान् के नयन आँसू से भर आए······दूर से देखते ही उन्होंने दुःख मिटा दिया। इन्द्र के मन में सोच होने लगा, कल्प वृक्ष के हृदय में खलबली मच गई। जब स्पर्श किया तो कुबेर के हृदय में कँपकपी फैल चली और सुमेरु ने भी फैले हुए पैरों को समेट लिया। (सबों को भय हुआ कि सुदामा की दरिद्रता का क्या उपाय होगा?) किन्तु वह तो उसी क्षण रंक से राजा बन गया, जिस समय भगवान् उससे हृदय भर कर मिले।

भगवान् व्यथित होकर सुदामा जी के फटे पैरों में घुसे कांटों के समूह को चुन रहे हैं। कहते हैं हे मित्र! 'तुम ने महान् दुःख उठाया, यहां नहीं आए, कहां छिपे रहे?" सुदामाजी की दरिद्रता की अवस्था देख-करुणा सागर भगवान् बिलख-बिलख कर रोने लगे। परात में पैर धोने के लिए लाए हुए पानी को उन्होंने हाथ से छुआ तक नहीं, आँखोंके आंसू से पैरों को धो दिया।

स्त्री ने चावल इन्हें लिए दिए थे कि उन्हें जाकर भगवान्के संमुख भेंट रखना

किन्तु, सुदामाजी राज-संपत्ति और अपार वैभव को देखकर उन्हें देते हुए विवश हो रहे हैं। (उन्हें लज्जा होती है कि चावलों की भेंट किस तरह दें)

अन्तर्यामी भगवान्—भक्त की रीति जानकर, स्वयं ही अपने सखा सुदामा ब्राह्मण से प्रेम की बात प्रकट करने लगे।

श्री कृष्ण कहते हैं—

भौजाई ने हम को जो कुछ दिया है, उसे तुम क्यों नहीं दे रहे हो ? पोटली किस लिए कांख में छिपा रहे हो ? पहले भी गुरु पत्नी ने चने दिये थे सो भी तुम स्वयं चबा गए थे,हमें नहीं दिये थे। श्रीकृष्णजीने हंसकर सुदामाजीसे कहा कि तुम चोरी की आदत में निपुण हो। पोटली कांख में छिपा रहे हो, खोलते क्यों नहीं ? वह उपहार मेरे लिए अमृतमें भीगा हुआ है। तुमने अपनी पिछली आदत आज तक नहीं छोड़ी ? भौजाई के दिए चावल भी वैसे ही कर रहे हो।

खोलत...गठरी खोलते हुए सुदामा जी लज्जा का अनुभव करते हैं, भगवान् की ओर देखने लगते हैं। पुराना वस्त्र फट गया और चावल छूट कर उसी जगह फैल गए। भगवान् ने मुट्ठी भर कर मुंह में रख लिये। चबाते ही ब्रह्मा और शिव उनकी चुगली करने लगे।

कांप उठी...। लक्ष्मी मनमें सोचती हुई कांप उठी कि नहीं मालूम मुझ से भगवान् का हृदय क्यों रुष्ट हो गया है। रिद्धि कांप उठीं, सभी सिद्धियाँ कांप उठीं और नव निधियां भी काँप उठीं कि यह ब्राह्मण कौन है ? जब भगवान् ने दूसरी बार मुट्ठी भरली तो इन्द्र को डर लगा (कि कहीं भगवान् मेरा स्वर्ग ही न दे डालें), मेरु डर गया कि कहीं उसे ही न दे दें और कुबेर तो चावल के चबाने से चौंक ही गया।

हूल हियरा में—। सुदामा की भेंट चबाकर श्याम संतुष्ट नहीं हो रहे हैं, इस की पुकार सब के कानों में पहुँच गई और सब के हृदय में हल चल मच गई। नरोत्तम दास कहते हैं—रिद्धिसिद्धियों में शोर मच गया है और लक्ष्मी तो वहीं खड़ी कांप रही हैं और सोच में पड़ी हैं। स्वर्ग लोक, नाग लोक—वासी झुण्ड के झुण्ड सभी घरों में भर रहे हैं, वे खड़े-खड़े कांपते हैं—सबों का मुख और शरीर सूख रहे हैं। समूहों में हलचल मची है, सभी लोकों में

अचाव के लिए लाले पड़ रहे हैं और सुदामा जी के चावलों के चबाते ही दिशाओं में व्याकुलता आ गई है।

थौन भरे......। लोग कहते हैं, भगवान् के घर तो पकवान्न और मिठाइयों की शोभा से भर रहे हैं। संध्या प्रभात पिता की इच्छा और आग्रह पर भी दया सागर दाख जैसी मेवा वस्तु भी मुंह में नहीं डालते। किन्तु कोई दुखिया ब्राह्मण पाव सेर सांवा के चावल ले आया है कहीं से सो प्रीति की रीति को क्या कहा जाय, लक्ष्मी के नाथ भगवान् वही चावल चबा रहे हैं।

मुठी तीसरी......। भगवान् ने जब तीसरी मुट्ठी भी भरली, तो रुक्मिणी ने बांह पकड़ ली। बोली, तुमको संपत्ति से ऐसा क्या बैर हो गया है? रुक्मिणी ने कान में कहा—आखिर यह कौन-सा मिलाप है? सुदामा जी को तो आप अपने जैसा बना रहे हैं और स्वयं सुदामा जी बनना चाहते हैं?

रूपे के रुचिर......। चांदी के सुन्दर थाल में शर्करा मिली हुई खीर है, जिसने अपनी स्वच्छता से शरत्काल के चन्द्रमा को भी जीत लिया है फिर गाय के घृत के साथ कोमल भात परोसा है, फूले-फूले फुलके प्रफुल्लता की आभा को कम कर रहे हैं। (मुझसे बढ़ कर कौन विकास अपना सकेगा।) अनेकों प्रकार के व्यंजन, पापर, मुंगौरी एवं बड़े आदि सामने रखे हैं; देवता सब देवकी पुत्र श्रीकृष्ण भगवान् की प्रीति की ओर देख रहे हैं। इस तरह सुदामाजी को भली भांति भोजन करा कर भगवान् ने पीछे से अन्तिम ग्रास के लिए कन्द आदि वस्तु परोसीं।

सात दिवस......। सुदामा जी सात दिनों तक इस प्रकार वहां रहे—नित्य प्रति आदर-सम्मान में वृद्धि ही हुई। फिर मन घर चलने को हुआ, अब उसकी तैयारी सुनिए। जो देना था, भगवान् ने सब दे दिया, किन्तु ब्राह्मण को यह हाल नहीं मालूम हुआ। चलने के समय गोपाल उनके हाथों पर कुछ न रख सके (कुछ बिदाई नहीं दी)।

सुदामा कहते हैं—

वह हर्ष, वह उठ कर मिलना और वह सम्मान और यह बिदाई! गोपाल

की बात, कुछ भी समझ में नहीं आता। आखिर गोपाल तो वेही हैं, जो तनिक दही के लिए घर-घर हाथ फैलाते फिरते थे। आज यदि उन्हें राज मिल गया है तो क्या हो गया? मैं यहाँ कब आता था, उसी ने (स्त्री ने) जोर देकर भेजा था। जाकर उससे कहूँगा, यह लो सारी संपत्ति, संभाल कर रख लो। भगवान् बचपन के मित्र हैं, क्या शाप दूं? इतना अवश्य कहूँगा कि जैसा मेरे साथ किया, वैसा ही आप पावें। प्रेम तो दर्पण जैसा निर्मल है, सब कोई पहचान कर ही काम में लावे। यदि उसमें कपट-छल का जंग लग गया है, तो दर्शन की भी हानि होगी—मुख नहीं दिखाई पड़ेगा। "मेरा इतना आदर किया, किंतु श्याम ने कुछ दिया नहीं", इस तरह सोचते हुए ब्राह्मण देवता अपने घर को चले।

नौ गुण······। नौ गुण—यज्ञोपवीत के सूत्रों को धारण करने वाला कुगुण जैसा (षड् विकारी जैसा) तीन गुण, सत्व रज और तम में जा कर अपने आठों गुणों को (तपस्या के फल) गवां कर चार गुणी चपलता ही लाया हूँ।

और कहा कहिए······। और क्या कहा जाय, वहां सोने के मकान ही बने हुए थे (वे तो परम ऐश्वर्यवान् थे)। किन्तु भगवान् का कलेजा अत्यन्त कठोर हुआ, जो उन्होंने मुझे दमड़ी भी न दी।

बहु भंडार······। उनके अनेकों ही भण्डार रत्नों से भर रहे थे। पर अब व्यर्थ ही कौन क्रोध अपनावे? यह अपने भाग्य का फल है। किसको दोष दिया जाय?

इमि सोचत······। इस प्रकार सोचते-सोचते, धीरे-धीरे वह अपने गांव के समीप आया। अचानक ही घोड़े और हाथियों के समूह पर दृष्टि पड़ गई।

हरि दर्शन······। भगवान् के दर्शनों से दुख दूर हो गया, अपने देश आ गए। गौतम ऋषि का नाम लेकर सुदामा जी ने नगर में प्रवेश किया। (घर की याद प्रबल हो गई, सभी चीजें देखने को व्यग्र हो उठे)

टूटी एक थारी...... ..। टूटी हुई एक थाली थी, बिना टोंटी को झारी थी, बाँस की पिटारी और टाट की गूदड़ी थी, बिना मूठ की छुरी थी, कमण्डल सौ टुकड़े होकर बिखरा पड़ा था, खाट के पावे भी टूटे थे, पाटी भी फटी पड़ी थी, पत्थर का पथरौटा नहीं दीखता है, वैसे ही काठ का कठौता भी कहीं नहीं है, पीतल का लोटा, कटोरा और बटली भी नहीं है। एक फटी कमली भी तो थी, डोरों की माला भी ताक पर हां थी, और गोमती की मिट्टी के शुद्ध घड़े का भी पता नहीं।

चौतरा उजारि.........। चौपाल को उजाड़ कर, किसी ने सोने का महल बना लिया है, छप्पर समाप्त हो गए, अब चित्र सारी-रंग भवन बन गया है। यदि मैं घर होता तो इस तरह महल बनने थोड़े ही देता? हमारा भाग्य ही वक्र है, नहीं तो ऐसी दशा हमारी क्यों है? हो न हो, स्त्री को लोभ दिखाकर किसी ने मेरा घर नष्ट कर दिया और अपने सुख के लिये महल बना लिया। हाय लम्बी पूंछ वाली, मेरी भूख को मिटाने वाली जो धनवाली गैया थी, उस को क्या किसी ने मार दिया?

कनक दण्ड...... । वहां सोने की लाठी आसा हाथ में लिए हुए द्वार पाल दरवाजे पर खड़े हैं—सबों ने सुदामा जी को लाकर वह मकान दिखाया और कहा—"यही आपका महल है।" सुदामा जी ने कहा—बुद्धिमान् होकर भी आप मेरी हँसी क्यों कर रहे हैं? मुझे तो अपनी कुटी दिखा दीजिये, जहाँ मेरी दुखिया ब्राह्मणी है।

आखिर उन्होंने द्वारपाल से कहा—"जाओ और यह समाचार कहते हुए उन्हें (सुदामा जी की पत्नी को) भेज दो कि दरवाजे पर महाबली तेजस्वी ब्राह्मण आगए हैं, देखो और आनंद उठाओ।"

यह सुनते ही (सुदामा जी की पत्नी) आनंद के साथ सखियों को संग लेकर चली। पैरों में नूपुर और किंकिणी बजने लगीं, मानों काम देव की चतुरंगिनी सेना चल रही हो (निशान दुंदुभी बज रहे हों)।

ब्राह्मणी ने आकर कहा—हे स्वामी, यही अपना घर है। श्री यदुपति ने तीनों लोकों में अपना स्नेह दिखा दिया है।

केशव

रामचन्द्रिका सत्रहवाँ प्रकाश

शब्दार्थ

पृष्ठ १४६—भूषित—शृंगारपूर्ण। मध्य—बीच में। निशि वासर—रातदिन विरोध—रुकावट। पौरि—द्वार। दुवार—दरवाजा। चहुंधा—चारों ओर। चारु—सुन्दर। तम—अन्धकार। योधा—वीर। अहिनायक—शेषनाग, लक्ष्मण। सोदर—भाई। यूथप—सेनापति। यूथ—सेना।

पृष्ठ १५०—इन्द्रजीत—मेघनाद। अधिरूढ़ित—चढ़ाकर। भूमिसुतै—सीता। पन्नगारि—गरुड़। काल-चाल—समय की गति। नान्ही—छोटे। गो—गया। तत्क्षण—उसी समय। प्रहारी—मारने वाले। मंत्रवादी—बात सुनने वाले। सुधो—विद्वान्। मौन—चुप्पी। हित—भलाई। नृपाल—राजा।

पृष्ठ १५१—यहै लोक—इसी लोक की, पृथ्वी की। परलोक—स्वर्ग। सयाने—बुद्धिमान्। विदेहीन—जनक ने। नठै—नष्ट हो। हठी—आग्रही। रुचे—पसंद आवे। अमित्र—वैरी। सोधि—जांच कर। प्रमान—माने हुए। तत्व—सार। अरि—दुश्मन। गहियो—ग्रहण करो। अरुझिए—ठानिए। हन्यो—मारा। असुहीन—प्राणहीन।

पृष्ठ १५२—हस्त—हाथ। गयंद—हाथी। क्षोभहीं—दुखित होते हैं। कोदंड—धनुष। समर—लड़ाई। वृंद—समूह। कराल—भयानक। केतु—पताका। आरक्त लोचन—लाल आंख। सुर सूल—देवताओं के लिए कंटक। रथाग्र—रथ का अगला भाग। वपु—शरीर। तन-त्राण—कवच। देवांतक—देवताओं का नाश करने वाला। निषंग—तूनीर। अवगाह कारी—थाह लेने वाला। आत्मज—पुत्र। स्यंदन—रथ। पौन—हवा। शार्दूल—सिंह। सोमभा—चांदनी।

पृष्ठ १५३—पुरद्वार—नगर का दरवाजा। द्वादशादित्य—बारह सूर्य। गिरीग्राम—पहाड़ों के समूह। हरिग्राम—बंदरों के समूह। पद्म—कमल। अमोघ—व्यर्थ नहीं जाने वाला। मुष्टि—मुक्का—घूंसा। आसु—शीघ्र

दंड—घड़ी । वारक—एक बार । हेरो—देखो । हौं—मैं । गारो—दूर्णकरो । नातरु—नहीं तो ।

पृष्ठ १५४—विनउँ—विनती करता हूँ । परिवेदन—दुःख । सूर—सूर्य । आदित्य—सूर्य । अदृष्ट—ओझल । उवत—उगते । अनिल—हवा दिति—दैत्यों की माता । अदिति—देवताओं की माता । विशल्यौषधि—घाव पूरा करने वाली दवा, संजीवनी । व्योमचारी—आकाश में चलने वाला । भौम मंगल । महा मंगलार्थी—महा शुभ चाहने वाला । रामानुजै—रामके छोटे भाई लक्ष्मण । गिरेहेम हाथों—हाथ से सोना गिर गया । ज्वाल माली—प्रचण्ड अग्नि । कीर्ति मालों—यश की माला । अंशुमाली—सूर्य । होम—हवन । अत्र—पत्ता । यत्र—जहाँ । कोदंड—धनुष ।

रामचन्द्रिका सत्रहवाँ प्रकाश

शब्दार्थ

अंगद लै...। अंगद जी उस मुकुट को लेकर, श्री रामचन्द्रजी के चरणों में पहुंचे और श्री रामचंद्र ने उस को लेकर विभीषण के मस्तक को अच्छी तरह भूषित किया—शोभायमान बनाया ।

दिशि...। दक्षिण दिशा की ओर अंगद, पूर्व दिशा में नील फिर शत्रु से अरी पश्चिम दिशा में हनुमान्, वैसे ही उत्तर दिशा में लक्ष्मण सहित श्री रामचन्द्र और बीच में सुग्रीव ने विराम किया, (अपनी सेना को ठहराया) ।

संग लेकर युत्थप...। साथ में बलशाली वीरों को लेकर विभीषण लंका पुरी के आस पास फिरने लगे । रात दिन सब की जाँच लेते रहते थे (बिना जाँच किए, बिना पता पाए किसी को आगे नहीं बढ़ने देते थे) इस तरह लंका को घेर लिया गया ।

जब राव ने सुनि...जब रावण ने सुना कि लंका को घेर लिया गया है, तब उसके शरीर और मन में बड़ा क्रोध पैदा हुआ । उसने प्रहस्त को पूर्व के दरवाजे पर रखा । दक्षिण की ओर महोदर दौड़ कर पहुंचा ।

श्री इन्द्रजीत... । मेघनाद पश्चिम दरवाजे पर और रावण की शक्ति

उत्तरके दरवाजे पर आ डटी। विरूपाक्ष को लंका के मध्यस्थल में रहने को कहा गया और नारान्तक को चारों ओर की देख भाल और घूमने की आज्ञा दी गई।

प्रति द्वार......। सभी दरवाजों पर भारी लड़ाई हुई, बहुत से ऋच्छ-भालू महलों के कंगूरों पर चढ़ गए। तब उस सोने की लंका की शोभा ऐसी हो गई, मानों जलती हुई आग की ज्वाला धुंए वाली हो गई हो।

मरकत मणि......। नीलम मणियों (काले बन्दर भालू) से लङ्का के सभी कंगूरे शोभित थे, जिनसे अब ऐसा दीखने लगा था कि उन्हें नष्ट करने के लिए मानों पाप का परिवार जुट गया हो।

तव निकलो......। तब रावण का बलवान् पुत्र निकला, जिसने बल से वानर सेना को जीत लिया। उसने तपस्या के जोर से माया का अंधकार पैदा कर दिया, वानरों की सेना के मन में सन्देह छा गया।

काहु न देखि......। किसी को वह वीर दिखाई नहीं देता था, यद्यपि वे सभी बुद्धिमान् और चतुर योद्धा थे। उसने सर्प बाण चला कर, लक्ष्मण जी के साथ रामचन्द्र को बांध लिया।

रामहि बांधि......। जब वह रामचन्द्र को बंधन में बाँध कर, लङ्का गया, तो रावण के हृदय की सारी शंका मिट गई (उसने जाना कि लड़ाई में जीत उसकी निश्चित है) वहां दोनों भाइयों को बंधन में देखकर, सारी सेना और सेनापति इधर-उधर भाग गए (सभी भागने लगे)।

इन्द्र जीत तेइ......। हृदय से इन्द्र जीत-मेघनाद को—लगाकर रावण कहने लगा—आज मन के लायक काम हुआ। वह विमान पर चढ़ कर श्री जानकी जी को युद्ध क्षेत्र में ले गया और उन्हें बंधन में पड़े रामचन्द्र का दर्शन कराया।

राज पुत्र युत......। श्री जानकी ने जब दोनों भाइयों को नागपाश में बंधा देखा तो उन्हें ऐसा लगा मे चंदन के वृक्ष बने हुए हैं। भगवान् तो सांपों को खाने वाले गरुड़ के भी स्वामी हैं और सर्प की शय्या पर ही सोते हैं फिर भी बन्धन में पड़ गए—समय की गति कभी जानने मे नहीं आती।

काल सर्प के......। मृत्यु रूपी कठिन सर्पके बंधन से भी, केवल जिनका नाम प्राणियों को छुड़ा देता है, वे भगवान् राम, ब्राह्मण के वचन को अक्षुण्ण

बनाए रखने के निमित्त, माया के सर्पों के बंधन में आ गए।

पन्नगारि······। तभी वहां गरुड आ पहुँचे और उन्होंने सर्पों के समूह को मार भगाया। फिर श्री जानकी लङ्का गईं। इस दृश्य को देखकर वे निर्मल-काया हो गईं और भगवान् के यश गाने लगीं।

गरुड़—श्रीराम······। भगवान् की स्तुति करते हुए गरुड़ ने कहा—हे श्री रामचन्द्रजी! आप संसार के रचयिता नारायण हैं ब्रह्मा और रुद्र आदि देवों के दुःख दूर करने वाले हैं, हे सीतापति! मुझे कुछ शिक्षा उपदेश दीजिए। बड़ा या कि छोटा आप की जैसी इच्छा हो वैसा आप हमें (उपदेश) सुनाएँ।

राम-कीवोहुतो······। जो काम करने थे, वे सभी तुमने किए। यहां आए और मुझे सुख पहुंचाया। भगवान् के मुँह से ऐसा सुन, विष्णु-वाहन गरुड़ तुरन्त ही उन्हें प्रणाम कर स्वर्ग लोक पहुँच गया।

धूम्राक्ष आयो······। फिर धूम्राक्ष काल स्वरूप बना हुआ आया। किन्तु हनुमान जी उसको मारने वाले बने। और, अकंपन आदि जितने बलिष्ठ राक्षस थे, उन्हें लड़ाई में अंगद ने मार गिराया।

अकंप धूम्राक्षहि······। अकंपन और धूम्राक्ष को लड़ाई में काम आया सुनकर रावण ने महोदर से सलाह पूछी। तुम सदा ही हमें सलाह देने वाले रहे हो, आज कैसे अत्यन्त विषाद दुःख अपना रहे हो?

कहै जो कोऊ······। महोदर ने कहा—यदि कोई आपको भलाई की बात कहता है, तो उसे आप दुःख देने वाला बताने लगते हैं। आप बहुधा दाव कुदाँव चलाकर ही काम लेना चाहते हैं। अतः विद्वान् लोग मौन साध जाते हैं।

कह्यो शुक्राचार्य······। शुक्राचार्य ने जो कहा है हे रावण! उसे मैं कहता हूँ और सदा ही मैं आपकी भलाई सोचने वाला रहा हूं। सुनो, दुनिया में चार प्रकार के राजा होते हैं। आप के समीप मैं उन सभी का वर्णन करता हूं।

यहै लोक एकै······। एक तो केवल इस लोक की ही सिद्धि अपनाना चाहता है (उन्हें पर लोक का ध्यान भी नहीं होता) ऐसे राजा राजाबलि वेणु आदि के समान स्वयं को ईश्वर मान लेते हैं। और दूसरे ऐसे होते है,

जो केवल परलोक का ध्यान रहते हैं (इस लोक की वस्तुओं से मोह नहीं अपनाते) हरिश्चन्द्र महाराज अपना राज्य तक दान कर चले गए।

दुहुँ लोक को……। एक ज्ञानी ऐसे होते हैं, जो दोनों लोकों की साधना साथ-साथ करते हैं, वे जनक राजा के समान दुनिया को वेद वाणी ज्ञान भी देते हैं। और एक ऐसे होते हैं,जो हठ से दोनों लोक बिगाड़ लेते हैं। त्रिशंकु जैसे हंसी के पात्र होते हैं।

चहुँ राज की……। हे राजा, मैंने आप से चारों तरह के राजाओं का चरित्र कह दिया है। जैसा अच्छा लगे, वैसा कीजिए—मित्र और शत्रु को विचार लीजिए।

चारि भांति……। रावण बोला (आपने जैसा राजाओं के लिए कहा है वैसे ही) चार तरह के मंत्री भी होते हैं, चार प्रकार की ही सलाहें भी होती हैं जैसा कि शुक्रके शास्त्रों से मुझे सुनाया गया है सोध-सोध कर।

एक राज के काज हते……। एक तो अपने काम के लिए, राजा का काम नष्ट कर देते हैं—जैसे, सुरथ को राज्य से बाहर करके मंत्री सब आनन्द मनाने लगे।

एक राज के काज……। और, एक राजा के कामों के लिए, अपना काम बिगाड़ लेते हैं—जैसे वलि को दान से रोकते हुए (वामन भगवान् के छल से बचाते हुए) कवि (शुक्र) ने नेत्र की हानि सह ली (अपनी आँख फोड़वा ली)।

इस प्रभु समेत……। एक मंत्री ऐसे होते हैं, जो राजा के साथ अपनी भलाई भी सोचते है—प्रमाण में, श्री रामचन्द्र के दूत हनुमान हैं। और एक ऐसे होते हैं, जो अपने साथ राजा को भी ले डूबते हैं, आपके पुत्र ऐसा ही करते हैं।

मंत्र जु चारि……। जो चार प्रकार के मन्त्री होते हैं, (उनके चार प्रकार के ही मंत्री भी होते हैं। प्रमाण भी सुन लीजिए। उनमें कोई विष के समान, तो कोई दाड़िम के दानों के जैसे, कोई गुड़ के समान, तो कोई नीम सरीखे होते हैं।

राजनीति······। राजनीति का मत है कि किसी बात के तत्त्व पर, मूल पर विचार करना चाहिये—देशकाल को विचार कर ही लड़ाई ठाननी चाहिए। (यथा समय जो उचित हो) मन्त्री, मित्र और शत्रु के गुण को भी अपनाइये। केवल संसार की बातों पर मत दौड़ते चलिये।

चार भांति······। चार तरह के राजाओं का वर्णन जो तुमने किया है, उसी प्रकार चार प्रकार के मन्त्रो की बात भी मैंने मन में रखली है। रामचन्द्र को मैं मारूँगा, एक भी देवता नहीं बच रहेगा और इन्द्रलोक पर राक्षसों का आधिपत्य होगा।

उठि कै प्रहस्त······। प्रहस्त उठा और सेना सजा कर चल पड़ा। उसने बहुत तरह से बानरों की सेना का नाश किया। तब दौड़ कर नील आए और उसे घूँसा मारा। वह प्राण-हीन होकर पृथ्वी पर गिर गया—शिर धरती से जा लगा।

महाबली जूझत ही······। बलशाली प्रहस्त को मरा सुनकर, रावण हाथों को मलता हुआ चल पड़ा। अनेकों तरह की रणभेरी तथा बहुत प्रकार की दुंदुभी बजने लगीं, इधर उधर क्रोध में मत्त हाथी चिघाड़ने लगे।

सनीर जामूत—······। सनीर जीमूत निकास शोभा पाते हैं उन्हें देख कर देवता और सिद्ध सभी क्षुब्ध होते हैं। प्रचण्ड नैऋत्य के साथ राक्षस इस तरह दीखते हैं, मानों यमराज प्रेतों के साथ खड़ा हो।

कोदण्ड मंडित······। हाथ में धनुष सँवारे हुए, जो महान् रथ पर आसीन है, जिसकी ध्वजा पर सिंह का चिह्न बना है, जो युद्ध का पण्डित है, जो महावीर काल के समान भयानक है, वह इन्द्र को भी युद्ध में जीतने वाला मेघनाद है।

जो व्याघ्र वेश रथ······। जो बाघ के मुख ऐसे रथ पर सवार है, जिसकी ध्वजा में बाघ का ही चिन्ह अङ्कित है जिसकी आँखें लाल हैं, जो कुबेर को भी विपत्ति देने वाला है, जो अपने हाथों में देवताओं को शूल दीखने वाला त्रिशूल लिये हुए है, (विभीषण ने बताया है) भगवान्! वह अतिकाय नाम का राक्षस है।

जो कांचनीय……। जो सोने के रथ पर सवार है, जिसकी ध्वजा पर मयूर की छवि है, जिसका हृदय देव सेनापति कार्तिकेय के समान शक्तिशाली है, जिसने देवलोक और भगवान् शिव का यश भी नहीं जाना, वह महोदर का भाई अभिमानी वृकोदर है।

जाके रथाग्र पर……। जिसके रथ के अग्र भाग पर, सर्पों की छवि वाली ध्वजा लगी है, जिसकी प्रभा सूर्य मण्डल की प्रभा को पराजय देने वाली है, जो महा विशाल शरीर वाला है और कवच धारण कर रहा है, वह देवताओं को दुःख देने वाला देवान्तक नाम का राक्षस है।

जो हंस केतु……। जिसकी ध्वजा पर हंस का चिन्ह है, हाथों में बाण हैं, जो युद्ध रूपी समुद्र की बहुत बार थाह लेने वाला है, जिसने देवता अदेवता गणों उनकी पत्नियों को छीन लिया है, वह खर राक्षस का बलवान् पुत्र मकराक्ष है।

लगी स्यन्दनै……। जिसके रथ में ऐसे सुन्दर घोड़े जुते हैं, जिनको देख कर हवा की चाल भी लज्जित होती है, जिसके घोड़ों के पगों में बंधे सोने के घूंघरु सुन पड़ते हैं, जो मेघमाला में बिजली से चमकते हैं, जिसकी पताका में सफेद सिंह की मूर्ति शोभित है, जो इन्द्र और रुद्रादिक देवताओं को भी क्षुब्ध करता है, जिसके शिर पर लगे छत्र चन्द्रमा की किरणों की हँसी उड़ाते हैं, लक्ष्मीनाथ ! वह रावण है।

पुर द्वार छाड़्यो……। और सब को नगर के द्वार पर छोड़कर क्रोध में भर कर आप आया, मानो बारह सूर्यों को ग्रसने के लिये राहु दौड़ रहा हो। बानर समूह पहाड़ों के समूह उठा कर मारते हैं पर ऐसा लगता है मानो कमल वन में हाथी विहार कर रहा हो।

देखि विभीषण को……। विभीषण के युद्ध को देख कर, रावण अत्यन्त क्रुद्ध हुआ—उसने मारने की शक्ति चलाई। किन्तु हनुमान जी ने उस शक्ति को बीच में ही पूँछ से लपेट कर तोड़ दिया।

दूसरी ब्रह्म की शक्ति……। जब उसने दूसरा ब्रह्मशक्ति, जो कभी खाली न जाती है, चलाई तो हा हा कार फैल गया। शरणागत विभीषण की

रक्षा के लिये, श्री लक्ष्मण जी आगे बढ़े और फूल के समान उस शक्ति को फूलकर उन्होंने अपने ऊपर ले लिया।

जोरही लक्ष्मणै……। जब वह जोर से लक्ष्मण को पकड़ने लगा तो हनुमान जी ने रावण की छाती में जोर से घूंसा। मारा शीघ्र ही, उसके प्राण का जैसे नाश हो गया हो (बेहोश हो गया), दो तीन घड़ी में उसे चेत आई।

आयो डर प्राणन……। उसे जीवन का डर हो आया, उसने धनुष बाण लेकर वानरों की सेना को भगा दिया। फिर वह हनुमान जी पर क्रोध कर दौड़ा। यह देख कर, श्री रामचन्द्र जी ने रावण को रोक लिया।

धरि एक बान……। एक बाण धनुष पर रख कर, भगवान् ने तब रावण के सारथी, ध्वजा, छत्र तीनों ही को काट दिया। दूसरा बाण लगा तो सारे शरीर का बल जाता रहा और वह आकुल होकर लंका भाग गया।

यद्यपि हैं अति……। भगवान् यद्यपि निर्गुण हैं (माया मोह से दूर हैं, फिर भी रघुराई रामचन्द्र मनुष्य शरीर धारी हैं। अतः जब रामचन्द्र ने लक्ष्मण जी को जमीन पर देखा, तो आंसू की धार आंखों से नहीं रुकी।

बारक लक्ष्मण……। भगवान् बोले—हे लक्ष्मण, एक क्षण मुझे देखो, इस व्यथा में मेरे प्राण निकल रहे हैं, उन्हें रोक लो। मैं तुम्हारे कितने कहूँ? तुम मेरे भाई, पुत्र और साथी के रूप में हो।

लोचन बाण तुम्ही……। तुम्हीं मेरी आँखें हो, तुम्हीं मेरे बाण हो, तुम्हीं मेरे धनुष और मेरे बल विक्रम भी तुम्हीं हो, मुझे क्षण भर देखो तो। तुम्हारे बिना मैं एक पल भी प्राण नहीं रख सकता, यह मैं झूठ नहीं बोलता, सत्य कह रहा हूं।

मोहि रही इतनी……। मुझे तो मन मे केवल इतनी शंका बनी है कि विभीषण को लंका का राज तिलक नहीं दे सका। बोल उठो, प्रतिज्ञा पूरी कराओ। अन्यथा मेरा मुंह काला होगा।

मैं विनऊँ रघुनायक………। (सुषेण बोला) हे रघुनायक! मैं विनय करता हूं हे देव, आप सारी वेदना त्याग दीजिए। कोई वीर रात-रात में औषधि लेकर लौट आवे, तो हे भगवान! वह सबको एक साथ ही प्राण

दान दे दे। आप के भाई, सूर्योदय होते ही, रावण की सभी इच्छाओं को पूर्ण कर देंगे अर्थात् किसी तरह फिर जीवित नहीं हो सकेंगे। उसका ऐसा कहना सुनकर, रामचन्द्र जी ने हनुमान को आगे किया वह तुरत ही जहाँ औषधि का वन है, चल पड़ा।

करि आदित्य.........। (हनुमान अपने हृदय में निश्चय करते जाते हैं) सूर्य को छिपाकर छोड़ दूं—यमराज का नाश कर अष्टावसुओं का भी नाश कर दूं। कहिए तो रुद्रों को समुद्र में डुबा दूं—गन्धर्वों को पशु के समान कर दूं। बिना विलम्ब किए पाताल से बलि को खींचकर, इन्द्र को और कुबेर को पकड़ लूं। विद्याधरों की विद्या विहीन तथा सिद्धि को सिद्धिहीन कर दूँ? दैत्यों की माता दिति को मैं देवताओं की माता अदिति की दासी बना सकता हूं—अग्नि, जल, हवा सब को मिटा सकता हूं। हे सूरज; सुन तेरे उगते ही राक्षसों के संसार को खाक कर दूंगा।

हन्यो विघ्नकारी.........। विघ्न पैदा करने वाले शत्रुओं को मारते हुए, शीघ्र चलने वाले हनुमान जी एक घड़ी में वहाँ—औषधि स्थल में—पहुँच गए। जब उन्होंने यह नहीं पहचाना कि उनमें संजीवनी बूटी कौन है तब उन्होंने सपूर्ण पहाड़ को ही उठा लिया और प्रणाम करके चल पड़े।

लसैं औषधि चारु.........। वह पवि औषधि लेकर जब हनुमान जी आकाशगामी हुए, तो उन्हें देखकर देवता और देवराज इस तरह कहने लगे—शिर पर मंगलग्रह की नगरी-सी उठाए महामंगल के इच्छुक हनुमान जी गर्ज रहे हैं।

लगी शक्ति रामानुजै.........। श्रीरामचन्द्र जी के अनुज लक्ष्मण जी को शक्तिबाण लगा है, वे रामचन्द्र के सहायक थे; वे मूर्छित होकर ऐसे निश्चल हो गये हैं जैसे सोने का हाथी गिर पड़ा तो उन्हें ही प्राणदान देने को, प्रेम में पगे हनुमान कीर्ति की माला पहने, पिण्ड को ही लिये जा रहे हैं।

किधौं प्रात ही...... वे ऐसे ही लगते हैं, मानों प्रातकाल होने के पहले उन्होंने सूर्य का संहार कर दिया हो और अब उसकी किरणों को लिये जा रहे

हो। वे ऐसे लगते हैं मानो ज्वाला मुखी को शक्ति के साथ लिए जा रहे हैं, जिसमें आहुति देते ही मृत्यु का भय मिट जायगा।

बिना पत्र है……। जहाँ बिना पत्तों का पलाश फूल रहा है, जहाँ कोयल और भौंरे विचरते गुंजते हैं, वहां सदानंद भगवान् राम के लिए हनुमान जी मानो महाआनन्द वाले बसन्त को लेकर पहुँच गए।

ठाढ़े भये लछमण……। लछमण जी संजीवनी बूटी छुआते ही, शरीर पर दूनी शोभा लिए, उठकर खड़े हो गए। हाथ में धनुष लेकर कहने लगे—"रावण जीवित घर नहीं जाने पावेगा।"

देव सुधा

शब्दार्थ

पृष्ठ १५७. पायन—पैरों में। मंजु—मनोहर। नदीश—सागर। ब्रज-बीथी—ब्रज की गली। बिथुरै—बिखरी। पारावार—सागर। मति मूढ़ै—मूर्ख। पारथ—अर्जुन। परब्रह्म—परमात्मा। कौंर—गोद। हरनाकुश—प्रह्लाद का पिता हिरण्यास।

पृष्ठ १५८. भाजी—शाक। दुरै—छिपे। औघट—कुघाट, बुरे स्थान। बाछो—बच्चा। चित् चीतौ—मन चाहा। जामिनि जोन्ह—रात की चाँदनी। विहंगम—पक्षी। प्राची—पूर्व। जावन—दही जमाने का जामन। भुगुति, भुक्ति—भोग-विलास। खेह—क्षार, भस्म।

पृष्ठ १५९. सिरावन—ठंडक। सलिल—जल। नर नाहन-मनुष्यों में श्रेष्ठ, राजा। विरुद्-बड़ाई। वारिधि—समुद्र। निराधार-अवलंब हीन। चेरी—दासी। रजनी—रात्रि। बयारि—हवा। फनि—सर्प। उकस्यौ—ऊपर उठा।

पृष्ठ १६०. कोए—आंख के पपोटे। फटिक—स्फटिक, बिल्लौर। ध्यावें—स्मरण करते हैं। घरीक—घड़ी भर में। कुलटा—व्यभिचारिणी।

इंकिनि—दरिद्रिणी। अलीक—बेराह, मनमानी। टेक—प्रण। बारी=वाली वारी—न्योछावर।

सरलार्थ

पायन नूपुर·· ······। पैरों में मनोहर पैंजनीं बजती हैं, कमर की किंकिनी आवाज़ में मधुरता भरी है। श्याम शरीर पर पीताम्बर शोभित है, हृदय पर भी बन पुष्पों की माला है। शिर पर कलगी है, बड़े २ चंचल नयन हैं। जिनकी मंद हँसी है और मुख चन्द्रमा की चांदनी फैल रही है, ऐसे हे ब्रज नाथ, हे संसार रूपी मंदिर के सुन्दर दीपक! आपकी जय हो!! आप कविदेव के सहायक बनिए।

सूनो कै परमपद·········। स्वर्ग सूना हो गया, अनंत शक्ति घट गई; सागर और नदियों का जल दूना हो गया और लक्ष्मी भी छूट गई। मुनियों की महिमा, दिक्पालों की संपत्ति और देवताओं की सिद्धि, ब्रज की गलियों में बिखर पड़ी। भादों की अन्धेरी रात्रि में मथुरा की राह में वसुदेव और देवकी के मनोरथ आकर दुबक गये। पूर्णता के सागर, परमात्मा, अपार महिमावान् एकाएक श्री यशोदा की गोद में आ छुपे। (भगवान् उनकी गोद में आ पहुँचे)

धाये फिरौ ब्रज में······। ब्रज में दौड़ते फिरे, नंद जी के यहां नित्य मंगल गान होते रहे, ग्वालिनों के इशारे पर ग्वालों के झुण्ड में नाचते रहे। मति हीन कविदेव, तुमको कहां ढूँढे, कहां पावे? तुम कभी अर्जुन के रथ पर बैठे हो, तो कभी यमुना के जल में बैठे हो। कहीं अंकुश होकर दौड़े और कंस की छाती को फाड़ दिया, साथियों को पुकारा भी नहीं और एक ही तीर में साथी को मार गिराया। विदुर जी के घर शाक और भीलिनी के बेर खाए, सुदामा के चावल चबाए और द्रौपदी के वस्त्र में जा छिपे।

साहेब अंध······। मालिक अंधा है, मंत्री गूंगा है, सभा के लोग बहरे हैं, राग रंग की भीड़ मची है। ऐसे कुघाट में राह भूल कर भट भटक गया, डूब मरने का कोई काम बाकी नहीं रहा। बाना और रूप नहीं दिखाई पड़ा, कहा हुआ समझ में नहीं आया, बताए इशारों को भी विचार नहीं

सका— जो रुचा वही किया। कवि देव कहते हैं, वहाँ भ्रष्ट बुद्धि होकर, नट की पुतली की तरह सारी रात व्यर्थ नाचता रहा।

(कविता का तात्पर्य मानव जीवन में मोह भ्रम और इच्छा अभिलाषा को लेकर कष्ट उठाने और फिर निष्फलता पर पश्चात्ताप करने से है। ज्ञान विवेक के अभाव में मनुष्य की जो अवस्था होती है, उसका सुन्दर चित्रण है।)

वा चकई को भयो······। उस चकवी की मनोकामना पूरी हुई, चारों ओर देखती हुई उमंग से नाच रही है। चन्द्रमा की सुन्दरता नष्ट हो गई—रात्रि की चांदनी भी मानों यम के पल्ले पड़ गई, (मलीन हो गई)। कवि देव कहते हैं, पक्षीगण वैरी बनकर बोलने लगे, उन वैरियों के घर सभी संपत्ति आ गई। बात तो यह है कि पूर्व दिशा ने जो वियोगिनी नारियों का रक्त पिया है, उसी से उसका मुँह पिशाचिनी-सा लाल हो गया।

गुरुजन जावन मिल्यो न······। सत्पुरुषों की संगति का जामन नहीं मिला, न जमकर दृढ़ दही बन सका। देवकवि कहते हैं न ज्ञान की रई से मथा ही गया। माखन रूपी मुक्ति कहां मिल सकती थी, जहां भुक्ति—भोग विलास-छोड़ नहीं सका? स्नेह के बिना सारा स्वाद ही चार हो गया रीता च, पूंजी नष्ट हो गई, लोभ के मांड में—चक्कर में पड़ा रहा, क्रोध की ।नि में तपता रहा, काम ने समाप्त कर दिया। क्षमा रूपी जल की छींटें नहीं मिली— शांति नहीं मिल सकी) दूध के समान सारा जन्म यों ही उफन कर बर्बाद हो गया।

ऐसो जो हौं जानतौ······ऐ मन, यदि मैं यह जानता कि तू विषयों के संग दौड़ेगा तो तेरे हाथ-पांव तोड़ देता। आज तक, न जाने कितने श्रेष्ठ राजाओं की नकार सुनकर भी हार कर प्रेम से उनका मुख न निहारता? देव कवि कहते हैं, तुझे मैं चंचल से अचल बना देता, चलने ही नहीं देता, चेतावनी के चाबुक से मार-मारकर लौटा देता। डंका बजाकर भगवान् के प्रेम का भारी पत्थर तेरे गले से बांधकर (कृष्ण की रूप) तुझे श्री कृष्ण की यश गाथा के समुद्र में डुबा देता।

धारा में धाय धंसी……आंखें निराधार होकर दौड़ीं और नदी में कूद पड़ीं। उसी में फंस गईं ऊपर नहीं आ सकीं। अरी सखी, अंगराकर गहिरे गढ़े में गिर गईं, न लौटाने से लौटीं, न रोकने से रुकीं। देव कवि कहते हैं, इसमें अपना वश ही क्या था? रस के लोभ में श्रीकृष्ण को देखते ही वे उनकी दासी हो गईं (तुरन्त ही उनके प्रेम में डूब गई, जल्दी ही उनकी पलकें (पंख) भीज गईं और मेरी ये आंखें मधु में फँसी मक्खियां हो गईं।

कालिय काल महा……। काल के समान कालिया नाग की महान् विष ज्वाल में यमुना का जल रात दिन जलता रहता था। न ऊपर के न नीचे के ही प्राणी का उबार था। उसकी हवा वृक्षों को भी सुखा देती थी। उस सर्प के फणों की फांसी में जाकर उलझ जाने पर अब तक ऊपर नहीं आया कोई। हा ब्रजनाथ कृष्ण, हम सबों को सनाथ कीजिए, हम सभी गोपिकाएँ आपके बिना अनाथ हो रही हैं।

बरुनी बघम्बर में……! पिपनियों के बाघम्बर में पलकों की गुदड़ी है कोए-पपोटों के रँगे वस्त्र हैं—(गैरिक भेष है)। जल में डूबी रहती हैं, दिन-रात जागती रहती हैं, भौंहों का धूम्र रूप शिर पर फैला है, विरह की आग में बिलखती रहती हैं। आंसुओं को बूंदें स्फटिक माला बन रही हैं, लाल डोरियों की सली बँध रही है, और सखियों को छोड़ कर अकेली हो गयी ही हैं। कवि देव कहते हैं, नाथ! दर्शन दीजिए, इन्हें संयोगिनी, (प्रेमी युक्त) बना दीजिए। ये वियोगिनी नारियों की आंखें योगिनी-संन्यासिनी बन रही हैं।

(कवि ने वियोगिनी की आंखों को योगिनी रूप में चित्रण करते हुए, अपने तर्कों के सहारे, अच्छी समानता दिखाई है—रँग रूप से लेकर स्वभाव और गुण तक का मेल मिला दिया है।)

राधिका कान्ह को ध्यान……। राधा यदि कृष्ण जी का स्मरण करती है तो कृष्ण जी भी राधा के गुणों का गान करते हैं। एक समान ही दोनों आँसू बरसाते हैं, बरसाने को पत्र लिखते हैं और राधा के चिंतन में डूब जाते है। देव कवि कहते हैं—राधा भी क्षण में ही कृष्ण जी के

समान व्यथित हो जाती हैं और पत्र को छाती से लगा लेती हैं। अपने आप में ही दोनों उलझते हैं—सुलझते हैं—समझते और समझाते हैं।

कौऊ कहौ कुलटा कुलीन........। कोई हमें कुलटा (व्यभिचारिणी) कहलो, नीच या अच्छे वंश की बता लो, कोई दरिद्रिणी, कलंकिनी और बुरे स्वभाव वाली भी बता लो। किस तरह दुनिया में, बे-राह चल कर, मैं लोक-परलोक से न्यारी हो रही हूं—प्रचार करलो। (हमें किसी का भय नहीं। सोच चुकी हूँ) शरीर से जाऊँ, मन से जाऊँ, गुरुजनों से चली जाऊँ, (भले ही वे सभी हमें त्याग दें) प्राण तक चले जायँ, हम अपनी टेक से टारे नहीं टर सकतीं। हम तो वृन्दावन बनवारी की उस मुकट वाली और पीताम्बर वाली छवि पर न्योछावर हो गई हैं।

भूषण

शिवा-प्रताप

शब्दार्थ पृष्ठ १६३

द्यौस=दिन । निकेत=घर । कुहू=अमावस्या । भनत=कहते हैं। जामिनि (यामिनि)=रात। दामिनि=बिजली । पूषण=सूर्य। दारुण=कठिन । पैज=प्रतिज्ञा। अकिल=बुद्धि । गाजी=वीर । पातसाहन=बादशाहों।

पृष्ठ १६४

नेक=तनिक । निदरत=उपेक्षा करते हैं। करवाल=तलवार। झंझा=आंधी । गगन=आकाश । गरद=धूलि । अंदेशा=शंका। आपुस=परस्पर । चतुरङ्ग=चार प्रकार की सेना । साजि=सजाकर। जङ्ग=लड़ाई ।

पृष्ठ १६५

नाद=आवाज । विहद=बहुत । रलत=बहाना । खलक=संसार । तरनि=सूर्य । थारा=थाली । मंदर=महल । मंदर=पहाड़ । भूषण=गहना । भूखन=भूख से । विजन=पङ्खा । विजन=जङ्गल । नगन=रत्नों के नगीने । नगन=वस्त्र हीन ।

धरा=पृथ्वी । सोहाती=अच्छी लगती । अनखाती=क्रोध करती । अरिनारो=शत्रुओं की स्त्री । जोन्ह=चांदनी । पंज-जारिन=पांव पोस ।

पृष्ठ १६६

सियरे=नग्न होकर । स्याह=काला । पियरे=पीला । ठौर-ठौर=जगह-जगह । भृङ्ग=भौंरा । वारिवाह=बादल । रतिनाह=काम देव। राम-द्विजराज=परशुराम। दवा=जंगल की आग, जो स्वयं घर्षण से पैदा हो जाती है। वितुण्ड=हाथी। तम=अन्धकार। जलधि=समुद्र । अपार=विस्तृत । उर्मिमय=लहरों से युक्त । लच्छनिलच्छ=लाखों-लाख । मगरचय=मगरों का समूह ।

पृष्ठ १६७

वृन्द=समूह । भुम्मि=धरती । किन्निय=किया । सुअप्प=अपने। साहिसुव=साह जी के पुत्र। तासु निवाहक=उसको निभाने वाले। जस, यश=कीर्ति। भभरि=भय खाकर । काहुने=किसी ने। हिए=हृदय । समत्थ, (समर्थ)=शक्तिशाली । मदगज=मत्त हाथी। धाम=घर। धरेश=राजा। धराधर सेस=पृथ्वी को सिर पर उठाने वाले शेष नाग । अहमेव=घमण्ड । कमान=तीर । मुरचानहू=युद्धक्षेत्र। हल्ला=शोर। ताव=शान।

पृष्ठ १६८

दरकत=फटते हैं । कुंभि=हाथी । शोणित=रक्त । छिति=पृथ्वी । दुरग, (दुर्ग)=किला । फुवकार=फुंकार । विदलि गयो=कुचल गया । कूरम, (कूर्म)=कच्छप । दिग्गज=दिशाओं को दबाए रहने वाले हाथी (कवि समय ख्याति है, कि चारों दिशाओं को चार विशाल हाथी दबाए हुए हैं।)

पृष्ठ १६९

जहान=संसार । खग्ग-खगराज=तलवार रूपी गरुड़। अखिल=सम्पूर्ण। शुड=शुण्ड। पच्छिन=पक्षी । रसना=जीभ । गर=गदा। कर=हाथ। हद=सीमा। तेग-बल=तलवार के बल से। वनचारी=जङ्गल में फिरने वाला, योगी।

पृष्ठ १७०

बखाने=कहते हैं । डांडि=दण्डित । पैठिगो=धंस गया । बज्रधर=इन्द्र । इरषा, (ईर्ष्या)=द्वेष । हिरनाच्छ=हिरण्याक्ष राक्षस (जो पुराणों की कथा के अनुसार पृथ्वी को चुराकर पाताल ले गया था ।) अधम=नीच । विचरते=फिरते । महेशचाप=शिवजी का धनुष ।

छत्रशाल का शौर्य

पृष्ठ १७१

भुजगेश=सर्पों के राजा । संगिनी=साथिन, स्त्री । बखतर=कवच । पाखरनि=पसलियों में । पैरि=तैर । परवाह=पङ्खों वाली । पर छीने=पङ्ख काटे । पर छीने=हाथों से हीन किया । बरछी ने=भाले ने । बर छीने=आयु हीन किया ।

पृष्ठ १७२

चमू=सेना । जेर=नीचा । दाम देवा=कर देने वाला । छितिपाल=सम्राट । बिहाल=दुर्दशा-ग्रह मण्डल=क्षेत्र । नाह=नायक । महाबाहु=बड़ी भुजाओं वाला, वीर । प्रवाह=धारा । रेवा=बुन्देलखण्ड की एक नदी । आफताब=सूर्य । तुरी=अश्व, घोड़ा । सराहौं=प्रशंसा करूँ ।

शिवा-प्रताप

सरलार्थ

देखत···लेत है—जिसकी ऊँचाई देखकर, शिर की पगड़ी गिर जाती है, दिन में भी सीधी राह से जिस पर वे ही चढ़ सकते हैं, जो बड़े साहसी हैं, शिवाजी, तुम्हारी आज्ञा पाकर; उस दुर्ग पर पैदल सैनिक लड़ाई जीत रहे हैं । सावन-भादों महीने की अमावस रात में, भावली वीरों का दल सावधान होकर दुर्ग पर चढ़ रहा है । भूषण कहते हैं, मैंने इसके लिए यही बात सोची है कि तुम्हारे प्रताप का सूर्य दुर्ग जीतने में उन्हें प्रकाश दे रहा है ।

कामिनी…सौं—पति को पाकर सुन्दरियां, चन्द्रमा को पाकर रात्रि, वर्षा काल की घटा को पाकर बिजली शोभती है। दान से यश, ज्ञान से रूप तथा अत्यन्त आदर से प्रीति को बड़ाई मिलती है। 'भूषण' कहते हैं, युवती का सौन्दर्य आभूषणों से है, कमलिनी सूर्य की किरणों से शोभा पाती है, और यह बात चारों ओर संसार में व्याप्त है कि हिन्दुत्व केवल शिवाजी के सहारे से शोभित है।

दारुण…काढ़ि कै—कठिन छली दुर्योधन से दुगने निर्दय औरङ्गजेब ने संसार को अपने छल से ढक रखा है। युधिष्ठिर की धर्म भावना, भीम का बल, अर्जुन की प्रतिज्ञा, नकुल की बुद्धि, और सहदेव का तेज अपने समय में बढकर था किन्तु भूषण कहते हैं, कि साहूपुत्र शिवाजी वीर ने दिल्ली में पांडवों से भी बढकर वीरता दिखाई। वे पांचों भाई रात में लाक्षा-गृह से सूना पाकर निकले थे और ये दिन में ही लाखों चौकी पहरों से अकेले निकल आए।

पूरव…करते—पूर्व दिशा के, उत्तर की ओर के, वैसे ही पश्चिम दिशा के बलवान् राजाओं के गढ़ को भी हम छीन लें। भूषण कहते हैं, इस तरह औरङ्गजेब से उसके मन्त्री कहते हैं कि हम पुर्तगाल जीतने को सागर भी पार कर जा सकते हैं, किन्तु शिवाजी के पास जो हमें भेज रहे हैं, वह कठिन काम है। बादशाह, हम आपके सेवक हैं, तनिक भी आनाकानी नहीं की जा सकती और हम मरने से भय तो खाते नहीं हैं, फिर भी इतना कहते हैं कि, यदि कुछ दिन और जी लेते तो बहुत काम करते (मुग़ल सम्राट् के मन्त्री को शिवाजी के पास भेजा जाना साक्षात् मृत्यु के पास भेजा जाना मालूम पड़ रहा था।)

कसत…करत है—भूषण कहते हैं—महाराज जैसा आप का सुन्दर रूप है, वैसा ही तलवार धारण कर ओजस्वी भी हो जाता है। आपकी तलवार से सदा ही यश के फूल झड़ते हैं। आपकी तलवार ने कितने गोले, बाणों, गोलियों, तलवारों और बरछों का निरादर किया है। आपकी तलवार संसार की रक्षा के लिए ढाल के समान है, फिर भी वह मलेच्छों का नाश काल की तरह करती है।

आंका''आय है—दिन में भी संध्या की तरह अन्धकार छा गया है, आकाश तक धूलि उड़ रही है। कौवे, चील, गृद्धों का समूह अचानक शब्द करता है, जगह-जगह चारों ओर अंधकार मन्डरा रहा है। भूषण कहते हैं, देश-देश के राजा, सब अंदेशा में पड़े हैं और आपस में गर्व छोड़ कर कहते हैं, जानते हैं कठिन वीर और चारों ओर की सेनाओं को जीतने वाला बली शिवाजी का दल यहां आ रहा है।

साजि''हलत है—चतुरंगिनी सेना सजा कर, वीरता के रंग में, घोड़े पर चढ़ कर, वीर शिवाजी लड़ाई जीतने को चल रहे हैं। भूषण कहते हैं—कि नगाड़ों-धौंसों का शोर होता है और हस्ति मद के नदी नाले तथा निर्झर बह रहे हैं। संसार में खलबली मची है—हाथियों की भीड़ से पहाड़ हिल रहे हैं। सूर्य आकाश में तारा-सा दिखाई पड़ता है, कारण, आकाश मण्डल धूलि से भर गया है। समुद्र इस तरह कांप रहा है, जैसे थाली में पारा डोल रहा हो।

ऊँचे''जड़ाती हैं—अत्यन्त ऊँचे महलों की रहने वाली अत्यन्त ऊँचे पहाड़ों के भीतर रह रही हैं। जो उत्तम भोजन करती थीं, वे कन्द-मूल पर दिन काटती हैं। जो तीन-तीन बार खाती थीं, वे बेरों को चुनती और खाती हैं। जो आभूषणों से शिथिल रहती थीं, वे भूख से शिथिल हो रही हैं। जो पंखे से हवा करती थीं, वे जंगलों में घूम रही हैं। भूषण कहते हैं—हे वीर शिवाजी, जो अपने शरीर में रत्न नग जड़वाती थीं, वे अब तुम्हारे भय से आज नग्न शरीर शीत से त्रस्त हैं।

उतर...छाती है—कभी पलंग से उतर कर, जिसने पृथ्वी पर पैर नहीं दिया था वही रात दिन राह में चलती हैं। अत्यन्त आकुल होकर खिन्न हो रही हैं, शरीर भी छिपा नहीं सकतीं, किसी की बात उन्हें अच्छी नहीं लगती, सुनकर बहुत ही खीझती हैं। भूषण कहते हैं—साह के सुपुत्र हे बली शिवाजी! तुम्हारी धाक को सुनकर शत्रु की स्त्रियां रोती हैं। जो चांदनी में न जाती थीं, वे धूप में चल रही हैं। कोई आत्म-घात करती है, तो कोई छाती पीट कर रोती है।

सवन......पियरे—जो सबके ऊपर खड़ा होने के योग्य था, (प्रधान बनकर श्रेष्ठता दिखाने के योग्य था) उसे पंचहजारियों के नजदीक खड़ा किया। (ऐसी हालत में) भला उसके हृदय में क्रोध क्यों नहीं आता? वह भी क्रोध में भर गया। न तो उसने सलाम किया, न नम्रता की बात ह कही। भूषण कहते हैं—वह महावीर क्रोध से जलने लगा, सारे बादशाहों के हृदय सूख गये (सभी भयत्रस्त हो उठे)। क्रोध से शिवाजी का लाल मुख देखकर औरंगजेब का मुख काला पड़ गया, और सिपाहियों के मुख भी पीले पड़ गए।

केतकी······शिवराज है—राणा भी केतकी का फूल बन गया, सभी राजा बेला हुए। अतः वह जगह-जगह रस लेता है (उसका यह प्रति-दिन का काम है)। सारे अमीर पराग भरे कुन्द के पुष्प सरीखे हैं, वह भौंरा बनकर फूलों के समाज में घूमता है। भूषण कहते हैं—दक्षिण में एक शिवाजी ने ही सभी देशों की लाज बटोर कर रखी है। जैसे चम्पा को छोड़-कर भौंरा भग जाता है, वैसे ही औरंगज़ेब के लिए शिवाजी हैं।

इंद्र ···· शिवराज है—इन्द्र जैसे जम्भ के ऊपर सशक्त है, वड़-वाग्नि समुद्र को कँपाता है, छली रावण के लिए जैसे रघुकुल श्रेष्ठ राम हैं, जैसे मेघ पर वायु की धाक है, कामदेव पर महादेव का प्रभाव है, सहस्रबाहु पर परशुराम का आतंक है, जङ्गल के वृक्ष की शाखाओं पर दावानल जिस तरह अपनी तेजी दिखाता है, पशुओं के समूह पर जिस तरह चीता की धाक है, भूषण कहते हैं—जिस तरह हाथियों पर सिंह का भय छाया होता है, जिस तरह सूर्य की किरणें अन्धकार को मिटाती हैं, जिस तरह कंस पर कृष्ण का जोर है, उसी तरह मुसलमानों के वंश पर वीर शिवाजी का शौर्य छावी है।

कलियुग ···· तुत्र—कलियुग के विशाल सागर में अधर्म की लहरें जोर दिखा रही हैं। लाखों लाख म्लेच्छरुपी कछुए मत्स्य और मगर के समूह घूम रहे हैं। उससे मिलकर राजा रुपी बहने वाले नदी नाले नीरस धर्महीन हो रहे हैं। भूषण कहते हैं—उसने सारी दुनियां को घेरकर

अपने वश में कर रखा है। पुण्य के ग्राहक रूप में जो हिन्दुत्व के प्रेमी व्यापारी हैं, उनका निवाह करने वाले हे शाह के सुपुत्र, तुम्हीं हो। तुम्हार यश जहाज है और तुम्हारी तलवार ही उसके लिए पतवार है।

सिंह······खटकयो—सुल्तान ने सिंह के स्थान को जाने बिना जावली के जङ्गल में हाथी रूप ऐदिल भेजकर भटका दिया। भूषण कहते हैं—देखते ही सभी वीर भय खाकर भाग चले, हृदय मे साहस लेकर कोई उसे रोकने में समर्थ न हुआ। शाह के सुपुत्र शिवाजी ने जो वीर हैं और महान् समर्थ हैं, उन्मत्त अफजाल खां को अपने पंजे (बाघ नख) के बल से पटक दिया। फिर तो उसके बिना असफल होकर अपने घर वह महावत केवल अंकुश लिये लौट गया।

कवि······देव है—कवि तुम्हें कर्ण बताते हैं और वीर तुम्हें कर्रों को जीतने वाला कहते हैं। तुमने शत्रुओं के हृदय को इसी प्रकार छेदा है। तुम्हें सभी राजा गण पृथ्वी को धारण करने वाला शेष नाग बताते हैं। तुमने ऊँचे राजाओं की अहंमन्यता मिटा दी है। भूषण कहते हैं—राज काज़ देखकर, हे शिवराज नृपति, तुम्हारा कोई भेद नहीं पाता है। सुल्तान (आदिल) तुम्हें सिंह कहता है। पुस्तकों में तुम्हारी वीरता की कहानी है। निजाम तुम्हें शिकारी बाज बताता है और विजेता वीर तुम्हें देवता कहते हैं।

छूटत······कोट में—चारों ओर तीर गोली आदि छूट रहे हैं और ओट में लड़ाई लड़ने में भी कठिनाई होती है। ऐसे समय में वीर शिवाजी ने गर्जना कर आक्रमण किया। भूषण कहते हैं—तुम्हारे साहस की क्या कहूँ तुम्हारे साहस का मूल्य महावीर ही लगा सकते हैं तुम वही हो जो मूछों पर ताव देकर दुर्ग के कंगूरों पर पैर और दुश्मनों के मुंह पर घाव देकर किले में कूद पड़े थे।

कोप······फरकत है—क्रोधकर महाराज शिवाजी वीर चढ़ आया है, उसीके धौंसे की आवाज़ से पहाड़ फट रहे हैं। उन्मत्त हाथी जमीन पर गिर रहे हैं और रक्त के फव्वारे छूट रहे हैं। पृथ्वी कड़क रही है उसमें दरार हो रही है। चुन-चुन कर उसने खुराशान के जवान मारे हैं, उन्हें काट-काट कर

बिछा दिया है, छाती विदीर्ण करदी है। रणभूमि के चपेटे में पड़े हुए, वे पठान पड़े हैं और रक्त में लिपटे मुगल तड़प रहे हैं।

दुग्ग......दरके—वीर शिवाजी दुर्ग पर दुर्ग जीत रहे हैं। समर के मैदान में काल नाच रहा है। रुण्ड-मुण्ड फड़कते हैं। भूषण कहते हैं कि जीत के नगाड़े बज रहे हैं और सारे कर्नाटक के राजा लङ्का भग गये हैं। यह सुनकर कि पनाले दुर्ग वाले वीर मारे गये, सितारा के गढ़ाधीश की पुतलियां फिर गईं, (वह बेहोश हो गया)। बीजापुर के वीरों के और गोलकुण्डा के साहसियों के तथा दिल्ली के मीरों के हृदय दाड़िम के समान फट गये।

जिन......निगलिगो—जिनकी फुंकार से बड़े-बड़े पहाड़ उड़ गए, कठोर कच्छप की पीठ कमल के समान कुचली गई, जिनके विष की ज्वाला मुखी में चिंघार मार कर दिग्गज भी अपना मद छोड़ चुके, जिन्होंने सारे संसार को दूध पीने की तरह पी लिया, भूषण कहते हैं, जिसके भय से समुद्र और पृथ्वी कांप गई है, उस मुगल दल रूपी सर्प को हे महाराज शिवाजी, आपकी तलवार खगराज (गरुड़) के समान निगल गई है।

गरुड़......सिवराज को—पक्षिराज गरुड़ का अधिकार सर्पों के समूह पर होता है, श्रेष्ठ सिंह का अधिकार हाथियों के झुण्ड पर होता है, इन्द्र का अधिकार पहाड़ों के वंश पर माना गया है और पक्षियों के गोल पर (दल) पर सदा ही बाज का अधिकार रहा है। भूषण कहते हैं—अखंड नव खंड पृथ्वी में अंधकार पर सूर्य की किरणावलियों का अधिकार है, और पूरब से पश्चिम तक, दक्षिण से उत्तर तक, जहां-जहां बादशाही है, वहां-वहां शिवाजी का अधिकार है।

वेद......घर में—वेद को प्रकट रखा, पुराणों को निःसार नहीं होने दिया, राम के नाम को भी मुंह में सुरक्षित रखा। हिन्दुओं की चोटी तथा सैनिकों की रोटी बचा रखी, कन्धे में जनेऊ और गले में माला की रक्षा की। मुगलों को कुचल कर रखा, बादशाह को मरोड़ कर रखा, दुश्मनों को पीस कर रखा, वरदान को हाथों में रखा। वीर शिवाजी ने तलवार के बल से राजाओं की मर्यादा की रक्षा की, देवताओं को मंदिर में रखा और

अपने धर्म को अपने घर में रखा (तात्पर्य यह है कि औरंगजेब की अनीति और अत्याचारों से सभी की रक्षा की)।

गढ़न ·····पटवारी से—गढ़ों पर अधिकार करके, गढ़-पतियों को दण्ड देकर, फिर उनमें से कितनों को धर्म की राह पर भिखारी के समान प्राणों की भिक्षा दी। साहू के सपूत वीर शिवाजी ने कितने गढ़-पतियों को जंगल निवास को बाध्य किया (वन में छिपने को विवश किया)। भूषण कहते हैं, कितने ही शेखों को बन्दी खाने कारागाह में पहुंचा दिया और अमीर हजारों सैयदों को साधारण बाजारू मनुष्य-सा पकड़ लिया। सरदार बनकर मुगलों को, महाराज बनकर महाजनों—बनियों को और पटवारी के समान पठानों को भी पकड़ कर डांड लिया—दण्डित किया।

आपस······लरते—आपस की फूट से ही हिन्दुओं का विनाश हुआ, अत्यन्त अनीति करता हुआ रावण नष्ट हुआ। राजा बलि भी इन्द्र की डाह से पाताल गया और हिरण्याक्ष का नाश भी हृदय में अभिमान रखने से हुआ। शिशुपाल का विनाश भगवान् श्री कृष्ण से वैर कर हुआ, अधर्मी महिष राक्षस भी घूमता हुआ मूर्खता के कारण मारा गया। राम के हाथों के छूने से ही जैसे महादेव जी का धनुष टूट गया वैसे ही मुगलों की बादशाही शिवाजी के साथ लड़ते ही टूट गई।

छत्रसाल का शौर्य

भुज······खलन के—वह सर्पों के अधीश शेष की संगिनी सी भयानक है और हठ पूर्वक विशाल शत्रु दल को खाती है। कवचों को छेद कर, पसलियों के बीच मछली सी इस तरह धंसती है, मानों वह जल को तैर कर पार कर रही हो। राजा चम्प के सुवन छत्रसाल महाराज, आपके बल का वर्णन—भूषण कहते हैं, कौन कर सकता है? जैसे पक्षी के पंर कट जाते हैं, वैसे ही वीर इससे निहत्थे हो रहे हैं। तुम्हारी बरछी ने दुष्टों के प्राण छीन लिए हैं।

हैवर······तोपखाने की—हाथी-घोड़ों और पैदल सेनाओं की विशाल वाहिनी के रूप में तुरकों का जमाव हुआ। भूषण कहते हैं—महाराज

चम्पतके पुत्र छत्रसालने हिन्दुत्वकी रक्षाके लिए ढाल बनकर युद्ध छेड़ दिया। एक बार में ही कितने ही हज़ार शत्रु मार डाले, तोपों की मार इस तरह पड़ने लगी मानों आग कुपित हो उठी हो। सैयद और अफ़गानों की सेना को तोपखाने की मार ऐसे लगी, जैसे सगर के पुत्रों को कपिल का श्राप लगा था।

चाकचक·····महिपाल की—अपार सेना के चारों ओर, जिसे देख कर विस्मय हो उठता है, चम्पत के पुत्र की धाक चक्र सी घूम रही है। भूषण कहते हैं—मुग़लों की बादशाही को मार मार कर नीचा दिखाया, किसी उमराव ने उसकी तलवार को झेलने का साहस नहीं किया। वीरों की बड़ाई सुन-सुन कर और भी वीरता दिखाने की टेव छत्रसाल में पड़ी हुई है। (वह तो लड़ाके वीरों से ही रार ठानता है) जितने भी जंग जीतने वाले राजा गए थे, वे कर देने वाले बन गए और महोवाधिपति की सेवा करने लगे।

देश·····रेवा को—सारा देश दबोचता हुआ आगरा और दिल्ली की मेंड से आ लगा जैसे देवताओं का दल उमड़ पड़ा हो। भूषण कहते हैं—राजाओं में मणि रूप छत्रशाल ने जंग-जीत राजाओं को भी बेहाल कर दिया। अखण्ड पृथ्वी मण्डल में जगह-जगह यही शोर है कि बुन्देलखंड का महोवा मण्डल ही यश से मण्डित है। दक्षिण के नरेश की सेना को महावीर ने इस तरह रोक लिया, जैसे सहस्त्रबाहु ने रेवा के प्रवाह को रोक लिया था।

राजत·····छत्रसाल को—उसका अखण्ड तेज शोभित हो रहा है, शुभ कीर्ति भी फैल रही है। वह मस्त हाथी के समान ऐसा गर्जता है, जैसे दिग्गज—दिशा-रक्षक हाथियों को चुनौती दे रहा हो। उसके प्रताप के सामने सूर्य मलिन हो जाता है और अपनी गति भूलकर दुष्ट लोग भय करने लगते हैं। भूषण कहते हैं—उसने कवियों को साज सामानों के साथ हाथी घोड़े दिये, सेवकों के समूह दिये। ऐसा दीन पालक, दुखियों को सहारा देने वाला और कौन है? दूसरे राजा-महाराजाओं को अब मैं मनमें भी नहीं लाऊँगा। शिवाजी की सराहना करूंगा या छत्रसाल की बड़ाई करूंगा।

मतिराम

मिश्रित पद्य

पृष्ठ १७५

मिश्रित—मिले हुए। वनमाल—जंगली फूलों की माला। लोचनलोल—चंचल आँखें। मधुराई—मीठापान। लुनाई—सुन्दरता, नमकीनपन। श्रौन—कान। किरीट—मुकुट की कलँगी। चारु—सुन्दर। कुलकानि—कुल की मर्यादा। द्रुम—पेड़। पुंज—समूह। सीख—सिखावन। लोग—लुगाई—स्त्री—पुरुष। कोकन—कमल। कारिका—कलिका॥

पृष्ठ १७६

नीरज=कमल। जुटे=मिले। मारू=रणभेरी। वासव=इन्द्र। शंभु-शिष्य—परशुराम। शंभु-सुत=कार्तिकेय। शमसेर=तलवार। बदन=मुख। सदन=गेह। चारिमुख=ब्रह्मा।

पृष्ठ १७७

रैनपति=चन्द्रमा। बगराय=अलग, पृथक् करके। निशिचर=रात में घूमने वाला राक्षस। असरालय=स्वर्ग। दोषाकर=दोषों का घर चन्द्रमा। कपाली=महादेव। वारुणी=मदिरा। बापुरो=दरिद्र। पियूष=अमृत। सौध=ऊपर का कमरा। कामतरु=कल्पवृक्ष। उपवन=वाटिका। सुरभि=सुगन्ध। लुब्ध=लोभित। भव=संसार। भूरि=बहुत।

पृष्ठ १७८

कह्यो=कहा हुआ। दाह=ताप। सियराई=शिथिल पड़ना। कृशानु=अग्नि। ससी (शशि)=चन्द्रमा। अनादि=जिसका प्रारम्भ ज्ञात नहीं हो। तृण=घास-पात।

मतिराम······लुनाई—

मतिराम कहते हैं—मोर का पंख किरीट की जगह शोभित है, गले में वनफूलों की माला है। भगवान् कृष्ण की मनोहर मुस्कान है कुंडलों की

डुलते रहने से और भी शोभा बढ़ रही है। सुन्दर और विशाल लोचनों की चितवन को देख कौन नहीं मुग्ध हो गया ? उनके मुख की मधुरता क्या बताऊँ ? उनकी नमकीनी (लुनाई) भी आंखों को मीठी लगती है।

मोरपंखा…दासी। मोर पंखों का किरीट बना है, मुक्ताओं के कुंडल कानों में शोभित हैं। मतिराम कहते हैं, उनकी मोहक चितवन ही हृदय में चुभ गई है। वह अमृत सी मुस्कराहट कैसे भूली जाय ? सखी, आज वंश की मर्यादा—कुल की लज्जा-से क्या काम ? सभी व्रजवासी भले ही मेरे ऊपर हंस लें। मैं तो मनमोहन कृष्ण का सुन्दर चन्द्रमुख देख कर, बिना मोल के ही उनकी दासी हो गई हूँ।

दूसरे…जाति—है। जहां दूसरे की बात भी नहीं सुनाई पड़ती ऐसी, जहां कोयल और कबूतरों की बोली गूंजती है; जहां लताओं से वृत्त ढक रहे हैं, जहां भौरों के झुंड और भी अंधकार बढ़ाते हैं, नक्षत्रों के समान जहां फूल खिल रहे हैं (उन्हीं की सफेदी दीख पड़ती है), जहां कुंजों में झाड़ियों मे दिन में ही-रात होती है, उस जंगल की राह में बिना किसी सहेली को साथ लिये, तुम अकेली ही कैसे दही बेचने चली जाती हो ?

जाके…लाई। जिनके लिए घर के सारे काम छोड़ दिए, सखियों की सिखावन भी नहीं सीखी, सारे व्रजगांव मे शत्रुता करली, जिनके लिए कुल की लाज छोड़ दी, मतिराम कहते है, जिनके लिये घर-बाहर सभी स्त्री पुरुष मुझ पर हंस रहे हैं, उन भगवान् कृष्ण से, एक बार ही, प्रेम तोड़ते हुए, मैं मूर्खा कुछ भी देर न कर सकी।

कवि–कुमारिका। मतिराम कवि कहते हैं—कामदेव की स्त्री से बढ़कर जिनकी बोली है, जिनका रूप ऐसा है मानों कमल की कली हो, जिनकी आंखों में धाक सुनते ही बार-बार नीर भर आता है, जिनकी आंखों की पुतली कमलिनी सी है, हे छत्रसाल ! जब आगरा और दिल्ली में तुम्हारी धाक से त्रस्त हो शुक सारिकाएं तुम्हारे 'आगमन' का शोर करती हैं, तो ऐसी मुगल सुकमारियां भी चौंक उठती हैं—वे अपने पुष्प रँग रँजित कोमल चरणों को लेकर भग नहीं पातीं।

दोउ'''राखी—दोनों शहजादे अपना २ दल लेकर मैदान में आए, इसकी साक्षी सम्पूर्ण संसार देता है। युद्ध के बाजे बजने लगे, योद्धा सब वीर रस से अघा गए, उनके हृदयों में कीर्ति की बड़ी अभिलाषा है। मतिराम कहते हैं—नाथ के पुत्र ने वहां जो काम किए, उनसे कीर्ति का प्रकाश फैल गया। शत्रुओं का रक्त बरसा कर, राव छत्ता ने रण में राजपूती रख ली।

बान'''शिवराज की—मतिराम कवि कहते हैं, अर्जुन के बाण की कहानी प्रकट है, भीमसेन की गदा ने कीर्ति कमाई है और इन्द्र का बज्र, वासुदेव श्रीकृष्ण का चक्र तथा बलदेव का मूसल सदा यश का केन्द्र रहा है। नरसिंह भगवान् के नख महान् बलियों के लिए दण्ड देने वाले रहे हैं। शिव का त्रिशूल, परशुराम का कुठार, कार्तिकेय की शक्ति और शिवाजी की तलवार भी (इसी के लिये) वर्णनीय रही है।

सुन्दरि'''''लगाय के—हे राधिके, आपका मुख सकल शोभाओं का गेह है, इसे ब्रह्मा ने रच-रच कर बनाया है। एक बार चन्द्रमा ने अपनी किरणें फैलाकर गुपचुप इसकी कान्ति चुराने की चेष्टा की। मतिराम कहते हैं, उसे रात्रिकाल का चोर समझकर भगवान् ब्रह्मा ने क्रुद्ध होकर दण्ड दिया। अब वह रात दिन स्वर्ग के आस-पास अपने मुंह में, कलंक के बहाने कालिख लगाकर चक्कर काटता है।

अरे'''''पापते—रे मूर्खचन्द्र, तुम्हारे आनन्द को धिक्कार है, जो तुम्हारी गर्मी से विरहिन नारियां जल जाती हैं। तुम तो दोषों के घर हो, दूसरे तुम्हारे हृदय पर कलङ्क लगा है, तीसरे मुण्ड-माली शिव से तुम्हारा साथ है। मतिराम कहते हैं—तुम्हारी करतूतें संसार में फैली हैं, तुम वारुणी (पूर्व दिशा मद्य) में रहने वाले हो और सूर्य के प्रकाश से चमकने वाले हो। अरे कपूत, तुम्हारे ही पाप से निर्बल समुद्र बांधा गया, मथा गया, पिया गया, और खारा भी हुआ।

पियुष''''''''भवन में—अमृत-समुद्र के बीच, मणियों से सज्जित भूमि में, महलों जैसा मोहक रम्य स्थान है। इसके सम्मुख कल्पतरु का उपवन

व्यर्थ है, कदंब वन भी फीका है। यहाँ धीरे-धीरे मंद पवन डोल रहा है, चिंतामणि से जड़ित मंडप में सदा जगन्माता लक्ष्मी निवास करती है। मतिराम कहते हैं—तू अपनी सेवा में सावधान रहना। लोभी और पापी मन, तू संसार में कहाँ भटक रहा है? भक्ति के साथ माता के मंदिर में अर्चना पूजा कर।

तेरो……साँई—रे मन, मैंने तुम्हारा कहा हुआ सब किया—रात दिन त्रिताप—दैहिक दैविक और भौतिक तापों—में जलता रहा। परन्तु अब मेरा कहा यदि तुम करो, तो यह दाह मिट जाय और शीतलता आवे। तुम भगवान् शंकर के चरणों में लग जाओ। तनिक देर में, बातों-बातों में ही, तुम्हें सुन्दर सफलता मिल जायगी। धतूरे और अकवन के फूलों पर ही तीनों लोकों के स्वामी रीझ जाते हैं।

छिति……परें—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा और सूर्य उसी का रूप ग्रहण करते हैं। मतिराम कहते हैं—वह अपना प्रकाश दिन-रात, सोते-जागते फैलाता रहता है। वह अनादि है, अनन्त है, अपार है, वही सभी स्थानों में विचर रहा है। सभी शरीर-धारी मोह में (भ्रम में) भ्रमित हो रहे हैं। इसीलिए, तृण की ओट पहाड़ नहीं दिखाई देता (परमात्मा घट-घट व्यापी, हर स्थान में दर्शित है—देखने के लिए भ्रम छोड़ना आवश्यक है)।

विहारी

विहारी-विहार

शब्दार्थ पृष्ठ १८१

भव-बाधा = सांसारिक दुःख। नागरि = सयानी। झांईं = परछाहीं। गुहारि = पुकार। तारन-विरदु = पार उतारने का यश। अजौं = आज भी। तर्यो ना = कर्ण-भूषण, मुक्त नहीं हुआ। स्रुति = कान, वेद। नाक = नासिका, स्वर्ग। वेसरि = नाक में पहिनने का आभूषण,। मुकुतनु = मुक्ता रत्न, महात्मा। जम = यम। तृष्णा = प्यास। नरहरि = भगवान् नरसिंह।

वारौं=न्यौछावर कर दूँ। उरवशी=उर्वशी अप्सरा, हृदय में बसी हुई। खाँचे=अटके। रीधे=प्रसन्न हुए। दई दई-दैव दैव। अनुरागी=प्रेमी।

पृष्ठ १८२

जाचत=माँगने जाना। चखनु=आंखों में। पूस-दिन-मानु=पूस महीने के दिन की सीमा। निरधार=निश्चित रूप से। कनक=धतूरा। कनक=सोना। बौराई=पागल होता है। तन-द्युति=शरीर की शोभा। निकुंज=झाड़ी। जात=जाते समय। वितु=धन। मोषु=मुक्ति। स्वार्थ=अपना लाभ। सुकृत=यश। वृथा=निष्फल।

पृष्ठ १८३

विहग=पक्षी। पानि=हाथ। बिससिबहि=विश्वास करें। आँदे=कुसमय में। वेंदी=बिन्दी। अरक=आक का वृक्ष। अरक=सूर्य। दुराज=दो के राज में। मन-सदन=हृदय-मन्दिर। बाट=राह। आघु=मंहगा। सनमानु=आदर, सम्मान। पतवारी=पतवार।

पृष्ठ १८४

चटक=प्रकाश, चमक। रज=धूलि। पाहन=पत्थर। पयोधि=समुद्र। अक्स=प्रतिबिंब। ओठ=होंठ। दीठि=आंख। पट=वस्त्र। त्रिभंगी=तीन स्थान से टेढा। निगुंण=गुण हीन। सयाने=बुद्धिमान्। अलि=भ्रमर। डारनु=डालों में। पाइल=पाजेब, पैर का आभूषण।

पृष्ठ १८५

सबी=चित्र। कूर=मूर्ख। नवै=नयी उम्र। निदाघ=ग्रीष्म ऋतु। बतरस=बातों का रस। सौंह=शपथ। नटि=मुकर जाना। सरद सूर=शरत्काल का सूर्य। कहलाने=किसलिए। एकत=एक जगह। तपोवन=तपस्या का क्षेत्र, द्वेष से दूर स्थान। दीरघ-दाघ=भयानक गर्मी। वादि=व्यर्थ। सेइयौ=अपनाना, सेवा करना।

पृष्ठ १८६

चितु=हृदय। मयंक=चंद्रमा। उतपातु=उपद्रव। पटु पाँखै=पंख ही वस्त्र है। भखु=खाता है। परेई=मादा, कबूतरी। परेवा=नर

कबूतर । विहंग=पक्षी । कुरंग=मृग । सुरझि=सुलझ कर । वृष भानुजा=राधा, बैल की छोटी बहिन । हलधर=बलराम, बैल । आतपु= धूप । जोन्ह=चाँदनी । कटि=कमर । कर-हाथ । उर=हृदय । बानक=वेष ।

मेरी········होई । मेरी सांसारिक बाधाओं को वही सुजान राधा रानी दूर करें, जिनके गौर शरीर की छाया पड़ने से कृष्ण का श्याम शरीर भी हरित आभा धारण कर लेता है ।

नीकी········तारि । यह आपकी टाल अच्छी रही—मेरी पुकार भी फीकी पड़ गई । लगता है, हाथी का एक बार उद्धार कर, अब आपने उद्धारक होने की बड़ाई छोड़ दी ?

अजौं······संग—आज भी कर्ण-फूल (तरौना) एक मात्र कानों की सेवा करता हुआ कर्णफूल ही रहा, मगर बेसर ने मुक्ताओं के संग रहकर नाक का वास पा लिया ।

इस पद्य में श्लेषालङ्कार है । इसका दूसरा अर्थ इस प्रकार होगा—

एक मात्र वेद वाणी ज्ञान का सेवन करते हुए, आज भी वह तरा नहीं—उद्धार नहीं पा सका, मगर जिसने मुक्ताओं—महात्माओं—का संग किया, उसने नाक—स्वर्ग का स्थान पा लिया ।

जमकरि······गाउ—यमराज के मुँह में पड़ा हूँ, यह सोचकर भगवान् का भजन करलो । अरे मूर्ख, आज भी वासना की प्यास छोड़ कर ईश्वर भजन कर ले ।

तोपर······समातु—हे सुजान राधिके, तुम्हारे रूप पर मैं उर्वशी को न्योछावर करता हूँ । तुम कृष्ण के हृदय की, उर—बसी (हृदय पर पहिनने का एक आभूषण) बनकर व्याप्त हो रही हो ।

कौन·····तारि—हे मुरारि कृष्ण, हमें अब यही देखना है कि कैसे आपकी बड़ाई रहती है । आज हमारे साथ अटकी है, गीध का उद्धार कर प्रसन्न हो रहे थे ।

जगतु········जाहि—जिसने सारे संसार का ज्ञान कराया, उस भगवान् को किसीने नहीं जाना। ठीक ही है, आंख से लोग सब कुछ देखते हैं, किंतु आंखें नहीं देखी जाती हैं।

दीरघ·····कबूलि—दुःख में आहें न भरो और सुख में परमात्मा को न भूलो। दैव दैव क्यों कर रहे हो? दैव ने जो कुछ दिया है, उसे कबूल करो—स्वीकार करो।

बैठि·····छांह—वह घने जङ्गलों के भीतर जाकर बैठ रही, घरों में घुस गई। ऐसा ज्ञात होता है कि जेठ की दुपहरी में छाया भी छाया खोज रही है।

या·····होई—इस प्रेमी हृदय की गति कोई नहीं समझ सकता। वह ज्यों-ज्यों श्याम रङ्ग—श्रीकृष्ण के प्रेम में डूबता है, त्यों-त्यों निर्मल होता जाता है।

घरु·····लखाई—घर घर आर्त होकर फिर रहा है, एक एक व्यक्ति के आगे हाथ फैला रहा है। अरे लोभ का चश्मा जब आंखों पर चढ़ जाता है तो छोटा भी महान् दीखने लगता है।

आवत·····भानु—आते हुए भी मालूम नहीं होता और नहीं जाते समय ज्ञात होता है। अपना तेज गंवा कर, वह निस्तेज पड़ गया है। घर-जंवाई की तरह पूस महीने के दिनों का मान घट गया है।

मैं·····जहां—मैंने यह निश्चय-पूर्वक समझ लिया है कि यह संसार निरा कांच के समान है। एक ही अपार रूप जहां-तहां भासित हो रहा है।

कनक········बौराई—सोने में धतूरे से सौ गुना बढ़कर नशा है। धतूरे के खाने से मनुष्य पागल होता है, मगर इसको तो पाकर ही वह पागल हो जाता है।

बड़े·····जाइ—बिना गुण के कोई नाम का यश पाकर ही बड़ा नहीं हो सकता। सोना धतूरे को कह दिया जाता है, मगर उससे आभूषण नहीं बनाया जा सकता।

तजि······प्रयागु—तीर्थों को छोड़कर, तुम केवल राधाकृष्ण की रूप आभा से ही प्रेम दिखाओ। अरे, ब्रज के क्रीड़ास्थल तथा कुंजों की ओर चलते हुए पग-पग में प्रयाग मिलेंगे। तुम्हें पग-पग पर प्रयाग के पुण्य की प्राप्ति होगी।

जात······मोषु—सम्पत्ति के जाते-जाते में जो सन्तोष हृदय में उत्पन्न होता है, वह सन्तोष यदि उसके होते समय पैदा हो, तो पल में मोच हो जाय।

नित······अनेक—वे नित्य ही एक वयस, एक रङ्ग और एक मन होकर एकत्र ही रहते हैं। हमें तो युगलकिशोर को देखने के लिए अनेक आंखें चाहियें।

गिरि······पगारु—पहाड़ से भी ऊंचे हजारों प्रेमियों के मन जिसमें डूब गए हैं, वही प्रेम-समुद्र मूर्ख मनुष्यों के लिए एक जोहड़ है।

मोहू······गुननि—जिस प्रकार अनेक पापियों को आपने मुक्ति दी है, मुझे भी दीजिए। यदि आपको मुझे बाँधने में ही सन्तोष है, तो अपने गुणों की डोर में बांधिए।

स्वारथ·· मारि—नहीं अपना स्वार्थ है और न ही यश ही। तुम्हारा परिश्रम व्यर्थ है, हे बाज! अपने मन में विचार कर देखो। तुम दूसरे के हाथों में पड़ कर पक्षियों को मत मारो।

नए··पाइ—नए देखकर ही इनका विश्वास मत कीजिये, दुर्जन लोग कठिन स्वभाव के होते हैं! ये कांटे के समान पैर में गड़कर समय आने पर प्राण हर लेते हैं।

नर···होइ—मनुष्य की और पानी के नल की एक ही अवस्था होती है, ये जितने नीचे होकर चलते हैं, उतने ही ऊँचे चढ़ते हैं।

कहत···उदोतु—सभी कहते हैं कि बिन्दी लगाने से अंकों का मान दश गुना हो जाता है, मगर स्त्रियों के भाल पर बिन्दी लगाने से उनका प्रकाश करोड़ों गुना बढ़ जाता है।

बढ़त…कुम्हलाइ—संपत्ति रूपी जल के बढ़ जाने से, मन रूपी कमल भी विकसित हो जाता है। मगर जल की घटती के दिनों में, वह बढ़ा हुआ मन घटता नहीं है, भले ही सूख जाय।

गुनी…उदोतु—सब कोई गुनी कहें, इससे कोई गुनहीन व्यक्ति गुनी नहीं हो जाता। भला किसी के अंकवन के पेड़ से सूर्य के समान प्रकाश होते सुना है? (नाम से तो दोनों ही अर्क कहलाते हैं)

दुसह…रविचन्दु—दो राजाओं के राज्य में प्रजा की दुःख-विपत्ति क्यों नहीं बढ़ जावे? अमावस्या को सूर्य और चन्द्रमा दोनों ही एक राशि पर मिलकर और भी अन्धेरा बढ़ा देते हैं।

तौलगु…कपाट—तब तक इस मंदिर में भगवान् किस राह से आ सकते हैं, जब तक कठोर होकर लगा हुआ, छल का कपाट नहीं खुल जाता?

भजन…गंवार—जिसे भजने को कहा गया, उससे भगता रहा, एक बार भी उसका भजन नहीं कर सका, और, जिससे दूर भागने को कहा, मूर्ख, तुमने उसी का भजन किया।

जमनु…हारु—तुम्हारा जन्म समुद्र में हुआ, निर्मल काया पाई, संसार में महंगे बने और फिर गुनी बन कर भी किसी गले में ही पड़े रहे—हे माला के मोती, तुम अच्छे न निकले (तुम्हें तो सर्व-सुलभ और बंधन-हीन होकर, अपना मुक्ता नाम सार्थक करना चाहिये था)।

बसै…दानु—जिसके शरीर में बुराई बसती है, उसी का आदर होता है। अच्छों को तो लोग अच्छा समझ कर छोड़ देते हैं, मगर खोटे ग्रहों के लिए जप और दान क्रिया होती है।

पतवारी…नाऊ—हे मल्लाह, तू तो अब पतवार की जगह माला हाथ में ले, ईश्वर का भजन कर, दूसरी कोई युक्ति नहीं, संसार समुद्र से भगवान् के नाम की ही नाव बना कर पार होजा।

जो…चित्त—यदि यह चाहते हो कि मित्र का हृदय मैला न हो और उसकी चमक न घटे तो उस स्नेह से चमकते हुए चित्त को संपत्ति की धूलि से मत छूने दो (लेन देन का व्यवहार मत करो)।

यह···पयोधि—यह अवसर और की सहायता का नहीं है। तू पापी है, और वह तारने वाला है, जिसने पत्थर की नाव से पार लगा दिया। अतः उसी को खोज।

मोर···चंद—मोर मुकुट की चांदनी-में-प्रकाश में-नन्द-नन्दन यों शोभित हो रहे हैं, जैसे महादेव की ईर्षा में कृष्ण ने भी अपने सिर पर सौ चन्द्रमा बनाये हों।

अधर···होति—भगवान् के हाथों से अधर-होठ पर रखते ही, होठ, आँखों और वस्त्र की ज्योतिः अपनाकर हरे बांस की बंसी इन्द्र धनुष के रंग धारण कर लेती है (रंग-बिरंगी हो जाती है)।

करौ···लाल—तुम कुछ भी करो, संसार की कुटिलताओं को हे दीन-दयाल ! मैं नहीं छोड़ सकता। क्योंकि तुम मेरे सरल हृदय में अपने त्रिभंगी रूप से रह कर दुखी होगे।

दूर···गोपाल—भगवान् उस समय दूर भग जाते हैं, जब गुन को लोग विस्तार देने लगते हैं, और गुनहीन के समीप रह कर प्रकट होते हैं—गोपाल कृष्ण सदा पतंग का स्वभाव दिखाते हैं। (पतंग का स्वभाव है कि डोर को बढ़ाते ही वह उड़ाने वाले से दूर जा पड़ता है।)।

कहैं···रोग—शास्त्र-पुराण और बुद्धिमान लोग यही कहते हैं कि पाप, राजा और रोग ये तीनों ही शक्ति हीन—निर्बल-को दबाते हैं (निर्बल और अशक्त मन पाप में फंसता है, निर्बल तथा अशक्त जनों को ही राजा दण्ड देता है; फिर निर्बल और अशक्त शरीर ही रोग का शिकार बनता है)।

यही···फूल—इसी आशा में भ्रमर गुलाब की जड़ में अटका रहता है कि फिर बसन्त ऋतु आवेगी और इन डालों में फूल लगेंगे।

पाइल···माल। पायल अमूल्य लालों से जड़ी होने पर भी पैरों से ही लगी रहेगी और निपट भोंडर की होने पर भी बिंदी, सुन्दरियों के मस्तक पर ही शोभित होगी।

पहिरु···हेतु। इसीलिये कहता हूँ कि हे कामिनी, तुम सोने के आभूषण नहीं पहिनो। (तुम्हारा शरीर भी स्वर्णाभ है) सोने के आभूषण शरीर में शीशे के ढंग से नजर आयेंगे।

मानहु...पायन्दाज। मानों ब्रह्मा ने स्वच्छ शरीर की निर्मल कान्ति को निर्मल रखने के लिये ही, आँखों के पांव पोंछने को भूषणों का पांवों का झाड़न बनाया है।

लिखन...कूर। उसकी छवि लिखने को गर्व और अभिमान लेकर कितने ही बैठे। किसी से उसका अंकन-पूरा नहीं पड़ा। संसार के अनेकों चतुर चित्र-कार इस प्रयास में मूर्ख बन गए।

इक...बार। एक भीगता है, मस्त होता है, हजारों डूबते और बह जाते हैं। नवीन वयस और नदी चढ़ने के समय क्या-क्या अवगुण नहीं करते?

बतरस...जाय। बातों के लालच से सुन्दरी ने श्री कृष्ण की वंशी छिपा कर रख दी। माँगने पर, शपथ खाती है, इशारों से हंसती है और देने के लिए कहने पर मुकर जाती है। (इसी तरह गोकुल की गोपियां भगवान् को तंग करती हैं।

नहिं...फूल। यह वर्षा नहीं है, यह वसन्त है, हे वृक्ष, मन की इस भूल को छोड़ दो। बिना पत्र हीन हुए पत्ते, नवीन फूल और नये फल कैसे मिलेंगे?

सीत...करोरि। हे मित्र, यदि केवल धन को जोड़ कर-संग्रह कर-रखते हो तो नीति को बिगाड़ रहे हो। नीति तो यह है कि खाने और खर्च करने के बाद बच रहे तो करोड़ों जोड़ लो।

घन...नरनाह—। बादलों का घेरा हट गया, लोग हर्षित हो कर चारों ओर अपनी राह से लग गये। लगता है, संसार में शरद् काल रूपी राजा ने आकर शांति लादी।

कहलाने...निदाघ। किसलिये सांप मयूर मृग और बाघ सभी एक साथ समय काट रहे हैं? जान पड़ता है, ग्रीष्म काल की कठिन गर्मी ने सारे जगत् को तपोवन बना दिया है (गर्मी के त्रास से सभी परस्पर का बैर भूल गये हैं)।

लटुवा...जाइ। लट्टुवा के समान जब परमात्मा किसी को हाथ में पकड़ते हैं, तो वह गुनहीन होकर भी गुनवान हो जाता है और वही जब उनके हाथों से छूट जाता है, तो फिर गुनहीन हो जाता है।

बृजबासिनु···होइ। बृजवासियों का उचित मन तो ऐसा है, जो किसी को नहीं रुचता है। अच्छा हृदय लेकर तो आए नहीं, फिर शुचिता :पवित्रता कहाँ से प्राप्त हो सकती है ?

अपने···नंदकिसोरु। अपने-अपने विचारों के अनुसार व्यर्थ ही सब कोलाहल मचा रहे हैं। अरे, जिस किसी प्रकार भी सभी को उन्हीं नन्दकिशोर भगवान् की सेवा करनी है।

बुरो···उतपातु। यदि बुरे व्यक्ति अपनी बुराई त्याग देते हैं तो साफ ही हृदय भय खाने लगता है। कलंकहीन चन्द्रमा को देख कर लोग उपद्रव की अशंका करने लगते हैं (कहते हैं चन्द्रमा का धब्बा मिटा हुआ दृष्टि में आने पर भयँकर ओलों की वृष्टि होती है)।

पटु पांखे··विहंग—पंख ही तुम्हारे वस्त्र हैं, कंकड़ियां खा लेते हो, परेई सदा तुम्हारे साथ रहती है। हे परेवा, पृथ्वी पर तुम्हीं एकसुखी प्राणी हो।

अरे··पारि। कौन परीक्षा करे, अरे तुम स्वयं विचार कर देखें लो कि मनुष्य को रखा जाय या खर पशु को ? इतना जरूर है कि खर पशु के बढ़ने पर लड़ाई पैदा होगी।

को छूट्यो···जात। इस जाल में पड़ कर कौन छूटा? हे मृग, तुम्हीं क्यों आकुल—व्यग्र होते हो ? ज्यों ज्यों सुलझ कर भागना चाहते हो, त्यों त्यों और भी उलझते जाते हो।

चिरजीवौ···वीर—यह जुड़ी हुई जोड़ी दीर्घजीवी हो। इनमें गंभीर स्नेह क्यों नही बढ़े ? दोनों में से कौन घट कर है ? ये वृषभानु की बेटी हैं, तो वे बलराम के छोटे भाई हैं।

श्लेषात्मक—बदला हुआ अर्थ यों होगा :—

यह गोधन की जोड़ी चिरंजीवी हो कर जुड़ी रहे। इनमें गम्भीर स्नेह क्यों नहीं बढ़े ? कोई घट कर नहीं हैं। ये वृषभ अनुजा, सांढ की छोटी बहिन, हैं तो वे हलधर-बैल के लघु भाई हैं।

सोहत··प्रभात—पीताम्बर ओढ़े सुन्दर शरीर वाले श्याम इसें

अत्यंत शोभायमान लगते हैं, मानों नील मणि पर्वत पर प्रभात काल की धूप की किरणें पड़ रही हों।

मिलि‥जात। दोनों के शरीर परस्पर छाया और चांदनी में समान होने से मिल रहे हैं। श्री कृष्ण और राधा एक साथ गली में चले जा रहे हैं।

सीस‥बिहारीलाल। सिर पर मुकुट, कमर में काछनी (ऊँची धोती), हाथों में बांसुरी और हृदय में माला हो। इस तरह का वेष बना कर हे कृष्ण, आप सदा मेरे मन में वास कीजिए।

ज्यों‥गोपाल। जैसा होगा वैसा ही हो लूंगा। हे भगवान्! मैं अपनी चाल छोड़ने का नहीं। तुम हठ न करो। मुझे उद्धार करना है गोपाल, अत्यंत कठिन हैं।

गुमानी मिश्र

धेनुक-वध

शब्दार्थ-पृष्ठ १८६ सेतु = पुल। कुमार अवस्था = बचपन। पौगंड = नवयुवक। धेनु = गाय। कूल = किनारा। अग्रज = बड़ा भाई। रम्य = रमणीक। नवेली = नई। भ्रमे = घूमे। परिभृत = कोयल। कालिंदी = यमुना। अरविंद = कमल। भृंग = भौंरे। पुलिन = सैकत। विपुल = बहुत।

पृष्ठ १९० — बिथरत = बिखेरते हैं। परिमल = पराग। नर्तत = नाचते हैं। द्विजकुल, (द्विजकुल) = पक्षी। श्रवत = चूते हैं। गोधन = गाएँ आदि। जलद-धुनि = बादल की आवाज। बानि (वाणी) = बोली। संजीवन मूरि — जीवदान देने वाली बूटी। कलरव = मधुरशोर। श्रवननि = कानों में। विपिन विहारी = जंगल में घूमने वाले। ताल विपिन = ताड़ों का जंगल। धेनुक = एक राक्षस, जो गधे का रूप धारण कर फिरता था।

पृष्ठ १९१ — जुग बंधु = दोनों भाई। प्रमोद = हर्ष। अरण्य = वन। अग्र = आगे। पक्व = पके। प्रसून = फूल। राम = बल राम। छिति = पृथ्वी। हरबर = जल्दी में। रासभ = गधा। उमंडि = उमड़कर, दौड़कर। रण = युद्ध। बढ़िव = बढ़ा। भूधर पहाड़। घ्रान = नाक। बल-भद्र = बलराम। उछारत = उछालते हुए। हहरति = कांपती।

बसुधा=पृथ्वी । भभरि=भय खाकर । प्रचंड=कठोर । ढोरत=हटाते हैं। धरनी=पृथ्वी । अनुहार=समान । पराक्रम=शौर्य ।.

पृष्ठ १६२—रजकन=धूलि । खल=दुष्ट । बापुरो=गरीब । अवनीस=महाराज । विहरत=घूमते हैं । वेनुसुर=वंशी ध्वनि । गोरज=गोधूलि । ब्रजजीवन=श्री कृष्ण । धावहिं=दौड़ते हैं । उरकि-उरकि=उमंगकर । तातनीर=गर्म जल । अन्हवाई=नहलाकर । विगत=हीन । सैन-(शयन)=निद्रा । रविकर=सूर्य की किरणें । खगकुल=पक्षियों का समूह । मधुव्रत=भौंरा । रिखि=ऋषि । निगम=वेद । आगम=पुराण ।

कालिय-नद मर्दन

शब्दार्थ—पृष्ठ १६३—कंजन=कमल । गहवर=सघन । शिशु=बच्चे । त्रसावन्त (तृषावन्त)=प्यासे । अहीर=ग्वाले । ऐस्वर्ज (ऐश्वर्य)=प्रभाव । त्रप=रक्षक । अमोघ=अव्यर्थ ।

पृष्ठ १६४—प्रवास=डेरा,निवास । दुर्मद=अभिमानी । अनिल=वायु । तपतु=जलता है, तप्त होता है । जहरभार=विषकी ज्वाला । जगत्-तात=जगत् बन्धु भगवान् श्री कृष्ण । अहि=सर्प ।. आरक्तता=लाली । तकिकै=तककर । वक्त्र=मुँह । मीचु=मृत्यु । कृपानी=छोटी तलवार । सूर=सूर्य ।

पृष्ठ १६५ ब्रच्छ,(वृक्ष)=पेड़ । रन्ध्र=छेद । तंत्रावली=वीणा । पाली=दाँव । कुचाली=नीच । डस्यो=काटा । ह्वै भंग=टूटकर । ख्याल=विचार । रोसु=क्रोध । तिर्जजोनी (तिर्यक् योनि)=रेंगने वाला जीव । विसै (विषय)=वासना । अम्बु=जल ।

पृष्ठ १६६—कल्लोलिनी=नदी । संक (शंका)=सन्देह । रविजा=यमुना । कच=बाल ।

पृष्ठ १६७—हृदय-ताडन=छाती पीटना । हहाई=जोर से । लसि रहे=अटक रहे । रम्हती डकारती । व्योम=आकाश ।

पृष्ठ १६८—प्रबोध=ज्ञान । फनिन्द=सर्पराज । गंध्रव, (गंधर्व)=स्वर्ग-

के गायक। सुरवधू=देवताओं की स्त्रियां। अपछरा=अप्सरा। वमतु=वमन करता है।

पृष्ठ १६६—व्यालाली=सर्प की पंक्ति। कृतघ्नी=नमक हराम।

पृष्ठ १६८—विहग-पति=गरुड़। सुहृदता=प्रेमभाव। रंक=दरिद्र। निधि=खजाना। उदक=जल। चक्षुश्रवाहि=सर्प को।

धेनुक-वध

आंखि······जोई—आंख मिचौनी खेलना, इधर-उधर किलकना और खेलों में पुल बनाना आदि जो लरकाई के चिन्ह हैं, वे सब अब दया-सिन्धु श्रीकृष्ण जी ने छोड़ दिए हैं।

पौगंड······भाई—नवयुवक अवस्था उन्हें प्राप्त हो गई, यह जानकर श्री नन्द जी ने उन्हें पशुओं का पालक बना दिया। श्रीकृष्ण जी बांसुरी बजाते हुए जंगल-जंगल में गाएँ चराते फिरते हैं।

जमुना······पाई—यमुना के किनारे कदम्ब वृक्ष के नीचे, अपने साथियों सहित दोनों भाई श्रीकृष्ण और बलराम बैठे हैं। गाएँ हरे-हरे घासों को चरती हैं और जल पीकर सुख पाती हैं।

बोले······तहां—श्याम सुन्दर श्रीकृष्ण ने कहा—हे बड़े भाई, तनिक वन को तो देखो, अत्यन्त सुख देने वाले स्थान से मिलकर परम शोभाशाली वसंत वहां फैल रहा है।

प्यार······नवेली—कोमल वृक्ष और उन पर फैली लताएं किस तरह सुन्दर और नवीन दर्शित हैं। देखो नवीन पुष्पों के गुच्छे भी परस्पर मिलकर झूम रहे हैं।

फूले······धारें—नवीन वृक्ष सब, जो फूल रहे हैं, पुष्प भार से इस तरह झुक रहे हैं, जैसे वे चाहते हैं कि तुम्हारे चरणों तक पृथ्वी पर शीश झुका लें।

लखो······बरसें—उन विकसित पुष्पों को देखो, जिन पर भौंरे आनन्द मना रहे हैं, मुग्ध मन इधर-उधर उड़ते फिरते हैं और स्नेह का रंग बरसाते हैं।

महाते······भरती—मदमत्त कोयलें मोहक स्वर में कूकती हैं। क्या वे तुम्हारी महान् कीर्ति के भेद को पुलकित होकर खोल रही हैं—प्रकट कर रही हैं ?

कालिन्दी······सनी—यमुना बढ़ रही है, उसकी घनी तरंगें देखो किस तरह आनन्द मनाती हैं। और वैसी ही हवा भी मीठी सुगन्धियों से भरी, सुहानी बनी बह रही है।

राजैं······महां—खिले हुए कमलों के समूहों पर मत्त भौंरे दर्शित हैं। तट पर नयी मल्लिका भी अपनी महान् सुगन्ध फैलाती खिल रही है।

तहँ······भरैं—वहाँ अत्यन्त सुन्दर पुष्पों से भरा एक सघन बन है। गोवर्द्धन पर्वत पर ऐसे सघन वृक्ष हैं, जो मन को बहुत आकर्षित करते हैं। परागपूरित पुष्पमधु ढालते हुए सुगंधि फैला रहे हैं। हवा से मिल कर वे अपनी सुगंधि सभी दिशाओं में बिखराते हुए, उनकी शोभा और भी बढ़ा रहे हैं। झोंकों में तरह तरह से सुन्दरतया नाँचते हैं और हृदय हरते हैं। जहां-तहां पक्षियों का समूह मधुर ध्वनि करता है। उससे ऐसा ज्ञात होता है, हृदय में आनन्द लिए हुए वे सब तुम्हारे चरणों की वंदना कर रहे हैं।

झुलत······अनुराग—पुष्पों के हिलने से मधु चू रहे हैं, परिमल उड़ रहा है। बंधन अपना कर भी भौंरे स्नेह सहित उनकी सुगंध ले रहे हैं।

राम···बिसेखत—बलराम और कृष्ण जंगल की शोभा देखते हुए आगे बढ़े। साथ में सब सखा सुख पाते हैं और अपना विशेष सौभाग्य मान रहे हैं।

आगे······वारी—श्री कृष्ण ने जब देखा कि सभी गाएँ बछड़े आगे के जंगलों में पहुँच गए, तब उन्होंने अपनी हृदय को शीतल करने वाली, वर्षा काल की ध्वनि के समान गंभीर वाणी में टेर दी (उनको बुलाया)।

जग-जीवन······पियारी—जग-जीवन भगवान् कृष्ण की बोली सुनकर संसार के जीवधारी सुखी हो गए। आपकी प्राणों से प्यारी ध्वनि उन्हें संजीवन बूटी-सी ज्ञात होती है।

खग······भारे—फिर वहाँ नंद-दुलारे कृष्ण पक्षियोंकी बोली बोलने लगे, जिसको सुनकर पक्षी भी बोल पड़े, चारों ओर भारी कलरव फैल गया।

मुख······धारे—रूप के उजागर श्री कृष्ण ने अपने मुख में फिर बाँसुरी लगा ली। फिर तो जितने जंगल के प्राणी कानों वाले थे, सभी सुन कर मोहित हो गए।

मगन····· निहारी—व्रज के जंगलों में विहार करने वाले भगवान् अपने हृदय के आनन्द में डूबे हैं और वहाँ के सभी पक्षी पशु मृग आदि उनकी सुन्दरता को देख कर मोहित हैं।

श्री दामा······प्रभो—इतने में श्री दामा नाम के साथी ने विनय पूर्वक अपने सबल हाथ जोड़ कर भगवान् कृष्ण और बलराम से प्रार्थना की कि हे प्रभु! ताड़ों के वन में चलिए।

धेनुक······जात—धेनुक राक्षस के डर से, उस जंगल के वृक्षों के पत्तों को भी कोइ नहीं छूता। फले हुए वृक्ष वहाँ भरे हैं, हवा के झकोरों से वे झरते रहते हैं।

सो······हंस—यह सुन कर, दोनों भाई अपने सखाओं के साथ आनन्द में मत्त आगे चले। सुन्दर रमनीक वन को देखा। वन में पैठते समय बड़े भाई बलराम हंस कर आगे हुए।

मंजुल······जहं—वहाँ मधुर पके फलों के ढेर लगे थे, फूलों पर भौंरे गूंज रहे थे। बलराम जी वृक्षों को हिलाने लगे। फिर तो फल और फूल सभी पृथ्वी पर आ गिरे।

झरत······असुर—फूल झड़ने लगे, फल गिरने लगे, असंख्य आम्रफल आ बिखरे। कोलाहल करते हुए गोप बालक उन्हें जल्दी-जल्दी गोदों में भरने लगे। शोर सुन कर अत्यन्त शक्ति शाली धेनुक राक्षस दौड़ा, गधे का रूप धारण किए हुए युद्ध के लिए सामने आया। फलों को देख कर, उसे रोष चढ़ आया। वह बादल की तरह गर्जना करने लगा। उसके गर्जन से धरती और पर्वत सभी डोल उठे। कान और पूंछ ऊपर उठा कर वह नथुने से फुंकार भरता हुआ, श्री बलराम जी को महाबलशाली समझ

पिछले पैरों से मारने लगा ।

बल······झकझोर—बल से प्रमत्त वीर बलराम जी ने उस भयानक राक्षस को झपट कर झुक कर जा पकड़ा। उसे हाथों पर जल्दी-जल्दी फिराते तथा उछालते हुए झकझोरने लगे।

तरवर······बेरि—उसे वृक्ष की जड़ों पर पकड़ पटका, झटका दिया और फिर जल्दी-जल्दी में पटका। भगवान् हंसने, पृथ्वी कांपने और पशुओं के झुंड भय खाकर भागने लगे।

सो······बलबंड—श्री बलराम ने उसके शरीर को चूर कर धूल में मिला दिया। मरते समय उसने भयानक चिंघाड़ की। फिर तो दशों दिशाओं से बलवान् राक्षसों का झुंड दौड़ पड़ा।

राम······भार—बलराम और श्याम ने अपनी लीला बढ़ाते हुए सबों की भुजा उखाड़ कर मार डाला। शीश से शीश फोड़ते हुए उन्होंने पृथ्वी का भार दूर कर दिया।

इक······अनुहार—एक का पैर पकड़ कर ऊँचे से पटकते हैं, तो कितने स्वयं मूर्छित हो जाते हैं। दोनों भाई इस तरह युद्ध भूमि में फिरते हैं, मानों आकाश में शेष नाग फण फैलाये घूमता हो।

हरखत······निहार—देवता वृन्द हृदय में हर्षित होते हैं और पारिजात के पुष्प बरसाते हैं। भगवान् का अनुपम शौर्य देख कर, सभी आनन्द मग्न जय-जयकार की ध्वनि करते हैं।

रजकण······अवनीश—जिनके शीश पर चौदह लोक धूलि के समान रखे हैं, उनके लिए हे कुरुराज! सुनिए, बेचारा धेनुक क्या अस्तित्व रखता था?

धेनुक······अधिकारी—दुष्ट धेनुक को मरते देख कर मृग आदि बन के पशु सभी सुखी हो गए। निर्भय-शरीर वे जहां-तहां घूमने लगे और बन के फलों के अधिकारी हो गए।

सुन्दर······भारे—सुन्दर शरीर श्री बलराम तथा कृष्ण बन में,

अपने प्रिय सखाओं के साथ विचर रहे हैं और गोप बालक इधर-उधर पके फलों को आनन्द से खा रहे हैं।

सांझहि····· घेरि्यो—संध्या जान कर श्री बलराम और कृष्ण सहित गोप बालकों ने अपने पशुओं को घेरा। घर लौटकर वंशी के स्वर में मानों वे नर-नारियों के मन को भी घेरने लगे।

गोरज······माने—आकाश में गो धूलि की धुंध देखकर, सबोंने व्रज जीवन को आते हुए जाना। बच्चे सब दौड़ पड़े और उनकी श्याम छवि देख कर अपने सौभाग्य की सराहना करने लगे।

हेरत······घेरि—एक उन्हें खोजता है, एक घेरता है और एक गायों को पुकार कर लौटता है। एक श्री बलराम और श्याम को बीच में रख कर गाता है।

आये····· लागे—प्यारे घर लौट आए, यह जान कर व्रजवासी सभी मगन हो कर सुख में डूब रहे हैं। माता आगे आकर पुत्र को उमंग कर हृदय से लगाने लगी।

बाढ़ा······मोहैं—गहरे प्रेम से जल्दी-जल्दी में, प्यार कर मुँह देखती हैं। शोभा को देख लो। वर्णन कौन करे? वे जनक जननी और सबों को मुग्ध कर रहे हैं।

तप्त······करत—गर्म जल से स्नान कर वन के परिश्रम से दोनों भाई मुक्त हुए और तरह-तरह के पकवान—जो माता ले आई थी—भोजन करने लगे।

भोजन······पाई—भोजन के पश्चात्, सरस और सुगन्धित पान उन्होंने ग्रहण किया। फिर त्रिभुवनधनी भगवान् प्रसन्न चित्त, सुख से शयन करने गए।

जब······भरें—जब सूर्य की किरणें जगत में जगमगाती हुई फूटती हैं और जब पक्षीगण जग कर मधुर शोर करने लगते हैं, जब खिले हुए कमलों मत्त डोलने लगते हैं, जब ऋषिमुनियों के समूह उठकर

वेद् ध्वनि के साथ भगवान् के गुनगान करने लगते हैं, तब संसार के अधीश्वर जगत् पिता भगवान् भी जगकर लोगों के हृदय को हर्षित करते हैं।

कालिय-मद-मर्दन

जगजीवन······राम—संसार के जीवन-घन और सुखों के दाता भगवान् कृष्ण जागकर सखाओं को साथ लेकर, घर छोड़, बन की ओर चले।

जाइ······करैं—माधव कृष्ण सखाओं के साथ कुंजों-कुंजों में घूमने लगे। वहां भौरों का मधुर गुंजार हो रहा है वे कमलों पर विचर रहे हैं। हृदय को आनन्द से भरती हुईं। पुष्पित लताएँ झूम रही हैं। कोकिलाएँ सुरीली मस्त आवाज़ भर रही हैं।

सुमन······तहां—विशाल और सघन वन पुष्पों के रंग से रँजित है और सुगंध से परिपूर्ण हो रहा है और वहां सखाओं के साथ गायों को लिए नन्दकुमार श्री कृष्ण घूम रहे हैं। उसी समय बालक और गाएँ सब जल के लिए प्यासे हो उठे और कालीदह को देख कर शीघ्र ही वहां तक पहुँच गये।

सो······भरपीर—वह जल पीते ही सभी विष के प्रभाव से अधीर चित्त बेहोश हो पृथ्वी पर गिर पड़े। जैसे, उन्हें मृत्यु ने पकड़ लिया हो, ऐसे दिखाई पड़ते हैं, मूर्छित गिरे हैं, हृदय में पीड़ा भर रही है।

देखि······अधीर—संसार के प्राणियों की पीड़ा जानने वाले दया-सागर, उन्हें देखते ही, सारी बात जान गये। कृपा की दृष्टि से उन्हें निहारा। तुरत ही दुःख से मुक्त होकर ग्वाले जग पड़े।

चेतन······विषधरहिं—सचेत होकर जब उन्होंने भगवान् की महान् प्रभुता जानी, तो सभी गोपबालक आपस में 'धन्य नन्दकुमार' कहने लगे (भगवान् की बड़ाई करने लगे)। राजा ने कहा—हे मुनीश्वर, अब सारी कथा कहिये। अत्यन्त अगाध जल में से भगवान् ने किस तरह विषधर को निकाला? (यह जिज्ञासा शुकदेव मुनि से राजा परीक्षित ने की है।)

जमुन......मत—जहां यमुना की धारा सौ धनुष दूर उस अगम सरोवर को छोड़कर हटती है, वहां दुष्ट बुद्धि क्रोधी कालिया सर्प निवास करता है।

लहरि......बिहँगगन—जब काली दह की ऊँची लहरों से मिल कर हवा चलती है तो सारा वन तप्त हो उठता है। उठती हुई कठिन विष की ज्वाला में जलकर आकाश में उड़ते हुए पक्षी गण नीचे गिर जाते हैं।

तट......तकत—किनारे के समीप के वृक्ष विष की आग नहीं सह सकने के कारण सूख गये। ऐसे अनेकों उत्पात देखकर जगद्बन्धु भगवान् कृष्ण उसमें कूद पड़ने की बात सोच रहे हैं।

मुनि......गत—मुनि की कृपा से किनारे का एक कदम्ब वृक्ष हरा था। सुन्दर श्याम सलोने उसी पर चढ़ने की इच्छा करने लगे।

खेलहिं......बढ़े—खेल ही में भगवान् अपने वस्त्रों को संभाल कर जल्दी-जल्दी कदम्ब वृक्ष पर जा चढ़े। भुज-दण्डों को ठोकते हुये लीलाधर अत्यन्त उमंग के साथ आगे बढ़े।

कूदे......सहां—नन्द दुलारे, प्यारे श्रीकृष्ण दह में कूद पड़े और चलकर वहां पहुंचे, जहां सर्प का घर था। दुष्ट कालिया ने बनमाली कृष्ण को आते हुए देखकर हृदय में बहुत ही क्रोध किया।

उठ्यो......कृपानी—क्रोध से कालिया इस तरह आया, मानो कृतान्त आया हो। वह दुष्ट सर्प फुंकार मारता हुआ और शोर मचाता हुआ दौड़ा। उसकी फनें इस तरह फैल रही थीं, जैसे घटाटोप मेघ छा रहा हो। उसकी लाल आँखें अग्नि कुंड से कढ़े तवे की तरह रक्तिम थीं। उस ने तड़प कर इस तरह अपना मुंह फैलाया, मानो भय का भंडार ही दिख दिया। वज्र की कील सी उसकी भयानक काली डाढ़ें निकल रहीं थीं। उनमें मृत्यु का निवास था और वह नीच गहरी हंसी हंस रहा था। इस त अपनी दुखदायी जिह्वाएं निकाल रहा था मानो म्यान से यमराज तलवार खींच रहा हो।

भरे......मातो—वह रोष में भरा अपनी सांस छोड़ने लगा। सूर्य के पुत्र की तरह अपना क्रोध जताने लगा। विष की ज्वाला की झार

फुंकने लगी। चारों ओर के वृक्ष दिग्दाह—लू—से सूखने लगे। क्रोध से नथुने आवाज करने लगे—ऐसा ज्ञात हुआ कि यमराज वीणा बजा रहा है। वह नशे में मत्त हो कर युद्ध घोषित करता था, उस दुष्ट को परमेश्वर का ज्ञान नहीं हुआ। वह श्याम के समीप चला। लड़ाई के लिए उसने अंग से अंग भिड़ा दिये। दुष्ट ने अपने जिन सुदृढ़ दांतों से उन्हें डँस लिया था, उसके वे दांत टूट कर जमीन पर गिर गये। भगवान् ने उस पर भी क्रोध करना ठीक न समझा। हृदय में दया आनकर उसका भला सोचा, वे सर्प को साथ में लेकर प्यार भरे निकले। उसके सभी पाप नष्ट हो गए और भारी सुकर्म मिला। कालिया का अहोभाग्य था, जो उनके शरीर से स्पर्श हुआ, जिनसे सदा ही मुण्डमाली शिव ब्रह्मा स्मरण करते हैं, जिस अंग को साधक लोग सदा ध्यान में रखते हैं, जिस अंगके सहारे योगी अपनी समाधि लगाते हैं, जिस अंग की वेद वन्दना करते हैं, जिस अंग के लिए तपस्वी कष्ट उठाते हैं, उसी अंग में वह मूर्ख डंसने आया। मोह में मत्त वह नीच तिर्यक् योनी का हठी जीव था।

निहि······वेसुखारी—सर्प को लेकर भगवान् पानी में तैर रहे हैं। दह में ऊँची हिलोरें उठती हैं। संग के सखा देख देखकर आंसू गिराते हैं। "लाल को सांप ने खा लिया," ऐसा पुकारते हैं। गायों का समूह जुटकर समीप आता है। गायें डकराती हैं, फिर हुँकारी भरकर दौड़ती हैं। मृगी आदि सभी पशु, पक्षी शोकाकुल हो गये, संसार के सभी जीव यह दृश्य दुखी होकर देखते हैं।

करो······संग—यमुना का जल काला है, सर्प का शरीर काला है और श्याम सुन्दर भी काले हैं, यह अच्छा मेल मिला है!

देखि······जाइके—यहां उत्पात देखकर व्रज में नन्दजी हृदय में दुःख करते हैं, छवि-धाम कृष्ण बलराम के बिना वन में कहां गये, यह सोचकर भयातुर खोजते फिरते हैं। गोपों की वधुयें, यशोदा, रोहणी, सभी ग्वाले अकुला कर और शोक भरे हृदय से दौड़ पड़े कि कब मोहन मूर्ति कृष्ण को जाकर देखें।

धुज······अवरेख—वे सब पृथ्वी पर ध्वजा, जौ, कमल, गदा, मछली,

और धनुष की रेखाओं के पद चिन्ह खोजते चले, (कारण, भगवान् के चरणों में ये सब चिन्ह थे)।

चालि······सुभाय—सभी यमुना के तट पहुँच गए, जहां दुखहारी श्याम सर्प के साथ थे। भगवान् का अमोल मुकुट झुक रहा था, सिर के बाल सुन्दर कुण्डल तक बिखर रहे थे। हृदय की माला उलझी दिखाई देती थी, कमर में दृढ़ता से पीताम्बर कसा हुआ था।

सब······मीन—सारे अंग में भयानक सर्प लिपट रहा था, जैसे सघन घटा उमड़े हुए बादल से मिल गई हो। यह दुष्ट बुरी तरह फुँकार रहा था, उसके स्वांसों के जहर से यमुना का जल भी जल रहा था। वहां विष की लपटें जल रही थीं, जो कोई भी सम्मुख आता, हाय हाय कर भाग खड़ा होता था। यह दशा देखकर यशोदा दुखी हो गई और रुदन करती हुई छाती पीटने लगी। "सब गोप गण क्यों डर रहे हैं, लाल को क्यों नहीं छुड़ा लेते ?" इस तरह व्याकुल होकर वह पानी में पैठ चली। तब बलराम जी ने उन्हें दौड़ कर पकड़ा। फिर नन्द जी यमुना में पैठने चले। बलराम ने युक्ति पूर्वक उन्हें भी रोका, कहा, पिता ! अजान बनकर यह क्या करते हैं ? आपको मालूम नहीं है कि आप का पुत्र बुद्धिमान् है ? ब्रज की नारियाँ हाय हाय कर सांस लेती हैं। सब गोप बालक शंकित हैं। गायें ऊँचे स्वर में रांभती हैं। अनेक ग्वाल बाल पृथ्वी पर मूर्छित पड़े हैं। विमानों में चढ़कर देव आकाश में छा गये। वे सब इस आश्चर्य और भय कर दृश्य को चकित से देख रहे हैं। सभी स्त्री पुरुष इस प्रकार पीड़ित हैं, जैसे जल से बिलग हुई मछली विकल होती है।

बिलकुल······ईशा—वहां बलराम ने उन सबको सन्तोष दिया वे भगवान् के गुण निश्चित रूप से जानते थे। सभी जनों को दुःखी देख कर जगपति कृष्ण के मन में विशेष ममता उपजी। उन्होंने अंग झाड़ सर्पको गिरा दिया और उसके बल को तोड़ते हुए गोविन्द दूर हो गये। फिर दौड़कर हाथों से पकड़कर उसके फन पर चढ़ गये। वह भार से मर चला। भगवान् तेजी से उस पर नाचने लगे और अधरों से बांसुरी लगा कर उन्होंने तेज सुर

निकाला। तीनों लोक के मन को मोह लिया। सिर की चन्द्रिका डोलती है, हृदय पर माला हिलती है, कुन्डल कानों की शोभा बढ़ा रहे हैं। शुभ समय जानकर सब गन्धर्व जुड़ आये। देवताओं की स्त्रियां और अप्सराएँ स्तुति गायन करने लगीं। देवता आवाज़ दे दे कर ताली बजाते हैं। बीना आदि वाद्य यंत्र बज रहे हैं। भगवान् सर्प के झुके हुए शीशों को छोड़कर उसका जो सिर ऊपर उठा होता है, उस पर नाचने लगते हैं।

नृतन······सम्हारत—नन्दकिशोर सर्प के फ़न फ़न पर बल पूर्वक पद प्रहार करते हुए नाचते हैं। आकाश में देवता, किन्नर और गन्धर्व गान करते हैं। क्षण भर ताल भरते ही सर्प अपना फ़न नीचा कर लेता है। मुँह से फेन की धार बह चलती है। मुख से खून उगलता है। उसका अंग भार नहीं सँभाल सकता।

गति······निकट—जब भगवान् के नृत्य की गति तेज हुई, तो सर्प की स्वास घुटने लगी। हृदय हाहा खाने लगा, प्राण कण्ठ में आगये। उसकी यह विकल दशा देख अबला सर्पिणी निकल आई।

पति······थोरे—पति की दुर्गति देख कर स्त्री हृदय में दुःख करती हुई समाज सहित जुड़ कर लज्जित शरीर, भगवान् के समीप साहस करके पति के कार्य के लिए सजकर आकर आंसू डालती कहने लगी, "हे भगवान् क्रोध करके मेरे पति ने बड़ा दुष्कर्म किया है, वह मद में मत्त बुद्धि हीन है।

काकोदर······जीवन मोर—वह कौवे की तरह पेट भरने वाला, कलह प्रिय, कुटिल, बुद्धिहीन, कृतघ्न, और क्रूर है। हे भगवान्! तुम्हारे क्रोध के योग्य वह नहीं है, तुम संसार के लिये संजीवन बूटी हो।

कमलोदर······ईशा—कमल जैसे अपने चरण आपने पापी सर्प के शीश पर रखे। हे संसार के मालिक! सुनो, और इसकी रक्षा करो।

तिय······अभंग—स्त्री के प्रेम से भरे वचन सुनकर, कमल-नयन भगवान् मुस्कराये। अत्यन्त दया उपजी और सर्प को सकुशल छोड़ दिया।

करि······जगदीश—कालिया भी मन्द २ गति से प्रीत लेकर आया, भगवान् के चरणों में सिर रख दिया···बोला, जगदीश! कृपा कीजिये।

सुखसदन......जाइके—सुख के घर मदनमोहन, मुस्करा कर अपने हृदय में दया लाकर, हृदय शीतल करने वाले वचन सुनकर, बोले, हे सर्पराज, तुम अपना समाज लेकर समुद्र में जाकर रहो।

तहँ......तजो—वहां तुम निर्भय रहो और आनन्द से मेरा स्मरण करो तुम अपनी दुष्ट योनिका स्वभाव और चंचलता छोड़कर कुछ ज्ञान करो।

मम......मानिके—मेरे चरण के चिन्हों से तुम्हारा मस्तक (फन) चिन्हित है। पक्षीराज गरुड़ यह जानकर तुम से प्रेम करते हुए, तुमको मित्र मानेंगे तथा तुम्हारी भलाई करेंगे।

फिरि......कैं—फिर भगवान् कृष्ण की प्रदक्षिणा और वन्दना कर, सुखी मन, समाज और परिवार सहित, कालिया सिन्धु की ओर चला गया। सुन्दर रमणक द्वीप को गमन कर, सर्प वहां सकुशल पहुँच गया। भगवान् की आज्ञा मान कर, वहीं मकान बनाकर सुख से रहने लगा।

इत......राजहीं—इधर यमुना दह से, श्याम सुन्दर यादवों की शोभा लिये निकले। नवरत्न भूषणों से अलंकृत शरीर की किरणें जग मगा रही हैं।

मन......धाइके—माता किनारे आकर, हृदय से अगवानी कर, भगवान् से आतुर भेंटी। स्तनों से दूध चूने लगा, आंखों से आंसू ढरक पड़े।

लखि......रोहिनी—रोहिणी ने कृष्ण की अतुल छवि देखकर उन्हें हृदय से लगा लिया। बलराम और श्याम जब लिपट गये, तब वह अत्यन्त सुहावनी शोभा हो गई।

गहबर......पावहीं—दुखित नन्दजी पुत्र को हृदय से लगा कर गद्गद् हो गये और प्रेम विभोरता में कुछ नहीं बोल सके। उन्हें ऐसा लगा, मानो कोई निर्धन अपनी अतुल धन राशि पा गया हो!

ब्रजवधू......भेटियो—ब्रज की स्त्रियां, व्रज के निवासी गोप और सखा सभी भगवान् से इस प्रकार मिले, मानो मृतक देह में प्राण आ गये। इस प्रकार सबके दुःख मिट गये।

सुर......निकारिकै—भगवान् ने देवता, मुनि और मनुष्य को कालिया के फन पर पर नृत्य कर आनन्द दिया और यमुना के जल से सर्प को निकाल कर उसे निर्मल किया।

प्रभाकर संजीवनी (गाइड)

इस पुस्तक में प्रभाकर (पूर्वी पंजाब यूनिवर्सिटी) के सातों पत्रों । निचोड़ परीक्षा की परिपाटी पर प्रश्नोत्तर, परीक्षा में आने वाले ालंकार और छन्दों का वर्णन, कविताओं का सरलार्थ भावार्थ याख्या। नाटक साहित्य का सार, नाटकों की खरी आलोचना, ात्रों का चरित्र चित्रण तुलना, साहित्य समीक्षा एक दृष्टि में, निबंध ेखन कला। विशेष बात यह है कि इसको पांच आचार्यों ने तैयार कया है, जो अपने विषय के सिद्ध हस्त लेखक हैं—परीक्षा में ानिश्चित सफलता के लिए एक बार अवश्य पढ़ें। मूल्य ६)

काव्य चन्द्रिका प्रदीप

यह वह पुस्तक नहीं जिसमें रत्न के ढंग से शब्द और अर्थ लेखकर इति श्री कर दी गई हो, सरलार्थ के साथ साथ भावार्थ, ्यङ्गार्थ भी लिखा गया है। जहां आवश्यक समझा है वहाँ टिप्पणी ी लिखी है। परीक्षा शैली का अनुसरण करते हुए ही यह कुंजी लखी है। इसमें विशेष बात यह है कि इसे शास्त्री जगन्नारायण ्रारा लिखवाया गया है। मूल्य ६)

हिन्दी नाटक साहित्य के इतिहास की प्रश्नोत्तरी

(लेखक—श्री सुगनचन्द शास्त्री, साहित्य रत्न)

नाटक साहित्य की सारी बातें खोलकर इस पुस्तक में समझिये रीक्षा में जितने प्रश्न पूछे जा सकते हैं सबका उत्तर इसमें मिलेगा श्नोत्तर प्रभाकर पृथक् है सारगामिनी व्याख्या और पुस्तक समा-ोचना अनूठे ढङ्ग से की है—नाम देखकर खरीदें। मू० २॥)